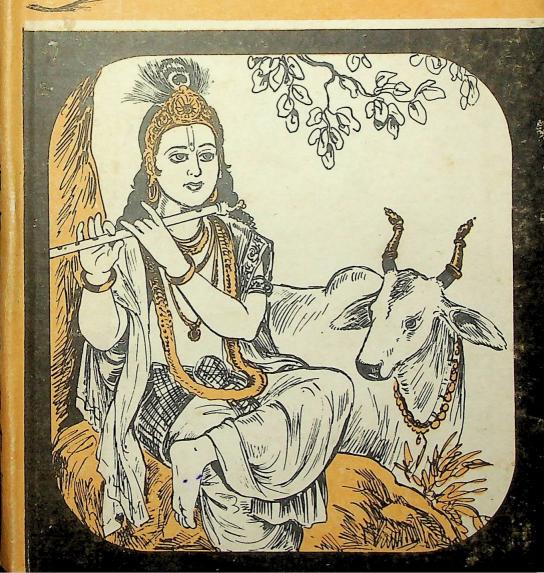
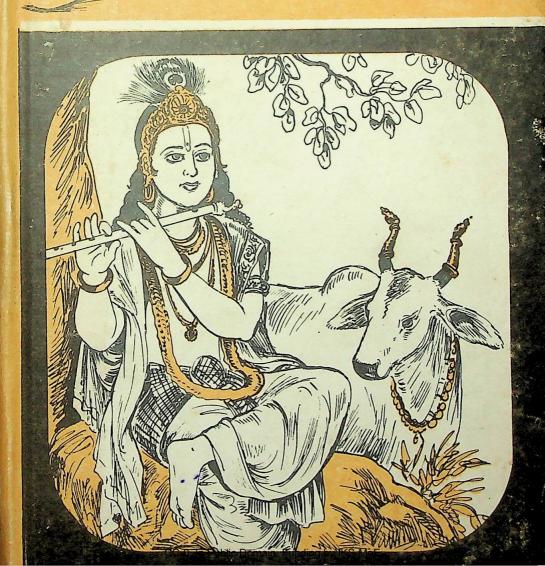
Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

# प्राचीन भारतमें गोमांस



Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

# प्राचीन भारतमें गामांस



Digitized by eGangotri and Sarayu Trust. CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

# प्राचीन भारतमें गोमांस -एक समीक्षा

uliforen

प्रकाशक — मोतीलाल जालान गीता प्रेस, गोरखपुर

प्रकाशन-तिथि— स्वतन्त्रता-दिवस १५ ग्रगस्त, १६७० श्रीकृष्ट्याब्द ५०७० विक्रमाब्द २०२७



मुद्रक— राधा प्रेस, गांधी नगर, दिल्ली-३१

प्रथम बार १०००० ]

[ मूल्य दो रुपये

# यहं स्वर्ण-भारत-भूमि, बस, मरघट-मही बन जायगी

दाँतों तले तृएा दाबकर हैं दीन गायें कह रहीं, "हम पशु तथा तुम हो मनुज, पर योग्य क्या तुमको यही! हमने तुम्हें माँकी तरह है दूध पीनेको दिया, देकर कसाईको हमें तुमने हमारा वध किया।।

"जो जन हमारे माँससे निज देह पुष्टि विचारके, उदरस्थ हमको कर रहे हैं, क्रूरतासे मारके। मालूम होता है, सदा धारे रहेंगे देह वे— या साथ ही ले जायँगे उसको बिना संदेह वे।।

"हा ! दूध पीकर भी हमारा पुष्ट होते हो नहीं, दिध घृत तथा तकादिसे भी तुष्ट होते हो नहीं। तुम खून पीना चाहते हो, तो यथेष्ट वही सही, नर-योनि हो, तुम धन्य हो, तुम जो करो थोड़ा वही।।

"क्या वश हमारा है भला, हम दीन हैं, बलहीन हैं, मारो कि पालो, कुछ करो तुम, हम सदैव ग्रधीन हैं। प्रभुके यहाँसे भी कदाचित ग्राज हम ग्रसहाय हैं, इससे ग्रधिक ग्रव क्या कहें, हा! हम तुम्हारी गाय हैं॥

''बच्चे हमारे भूखसे रहते समक्ष अधीर हैं, करके न उनका सोच कुछ देती तुम्हें हम क्षीर हैं। चरकर विपिनमें घास फिर श्रातीं तुम्हारे पास हैं, होकर, बड़े वे वत्स भी बनते तुम्हारे दास हैं॥

"जारी रहा क्रम यदि यहाँ यों ही हमारे ह्रासका— तो म्रस्त समभो सूर्य भारत-भाग्यके म्राकाशका । जो तनिक हरियाली रही वह भी न रहने पायगी, यह स्वर्ण-भारत-भूमि, बस, मरघट-मही बन जायगी॥"

(राष्ट्रकवि स्वर्गीय श्रीमैथिलीशरणजी गुप्तकी 'भारतभारती' से)

## नम्र-रिनवेदन

जब-जब गोवध बन्द करनेके लिये ग्रान्दोलन होता है या चर्चा होती है, तब-तब कुछ लोग ग्रपनी भ्रम-धारणाके ग्रनुसार समाचारपत्रोंमें ऐसे लेख प्रकाशित कराते रहते हैं, जिनमें यह प्रमाणित करनेका प्रयास किया जाता है कि प्राचीन भारतमें गोहत्या हुग्रा करतो थी ग्रौर गोमांस भी खाया जाता था। उन लेखोंमें वे कुछ शास्त्रीय वाक्योंको भी उद्धृत किया करते हैं। ऐसी बातोंका समीचीन उत्तर देते हुये उन शास्त्रीय वाक्योंका सही ग्रर्थ करके कई विद्वानोंने समय-समयपर समाधान भी किया है, किन्तु सबका संकलन एक जगह नहीं मिलता। साधारण जनता भ्रममें न पड़े, एवं जो पढ़े-लिखे लोग भ्रम-धारणासे ग्रस्त हैं, वे भी पुनः विचार करके उस भ्रमसे मुक्त हो सकों, इस विचारसे जो-कुछ सामग्री उपलब्ध हो सकी, उसका एक जगह संकलन करके उसे इस पुस्तकके रूपमें प्रकाशित किया जा रहा है।

इस संकलनमें, प्रत्येक विषयके परिच्छेदके मुद्रणके बाद किसी चर्चामें जो भी ग्रौर शंका उठी, उसका भी समाधान करनेकी चेष्टा की गयी है। ऐसे समाधान परिशिष्टरूपमें दिये गये हैं ग्रौर वहाँपर यह संकेत भी कर दिया गया है कि इसका उपयुक्त स्थान उस विषयके परिच्छेदके किस पृष्ठ पर किस जगह होना चाहिये। शंका-समाधानका सारा कार्य परिश्रमपूर्वक श्रीजयदयाल डालिमयाने कुछ विद्वानोंके सहयोगसे किया है—इसके लिये हम उनके कृतज्ञ हैं।

इसका मुद्रएा दिल्लीमें हुग्रा। गीताप्रेसके गोरखपुरस्थित मुद्रणालयमें कार्याधिकताके कारण वहाँ इसका मुद्रएा नहीं हो सका। प्रूफ देखते समय तथा कहीं-कहीं मुद्रणकाल में कोई मात्रा या टाइप टूट जानेसे कई ग्रशुद्धियाँ रह गयी हैं। ऐसी ग्रशुद्धियोंको हाथसे शुद्ध करके ही पुस्तकों को पाठकोंके हाथमें देनेकी गीताप्रेसकी पद्धति है, किन्तु इसमें ग्रनेक ग्रशुद्धियोंके रहनेसे सब जगह हाथसे शुद्ध करनेमें बहुत

ग्रधिक परिश्रम और समय लगता, इसलिये इसका ग्रलगसे शुद्धिपत्र दे दिया गया है। संभव है, कुछ शब्द फिर भी टूट गये हों श्रौर उनको शुद्धिपत्रमें न दिया जा सका हो, पाठक सज्जनोंसे निवेदन है कि उनको ऐसी कोई ग्रशुद्धि दिखायी दे तो वे सूचना देनेकी कृपा करें, जिससे ग्रगले संस्करणमें उसको सुधारा जा सके।

प्राचीन वैदिक-कालमें भारतवर्षमें गोवध नहीं होता था ग्रौर गोमांस खानेकी प्रथा नहीं थी, इसके लिये प्रत्येक विषयके—जिनकी इस पुस्तकमें चर्चा है—ग्रौर भी किसी प्रमाणका पाठकोंको पता हो तो वे बतानेकी कृपा करें, जिससे ग्रगले संस्करणमें उसको भी यथास्थान जोड़नेका विचार किया जा सके।

ग्राशा है, इस पुस्तकके संकलन लोगोंके भ्रम दूर करनेमें सहायक होंगे। प्रचारके उद्देश्यसे कोई भी सम्मान्य पत्रकार या ग्रन्य महानुभाव इसका कोई भी ग्रंश किसी भी भाषामें प्रकाशित करना चाहें तो उनको हमसे स्वीकृति लेनेकी ग्रावश्यकता नहीं है, इसके लिये उनको पूर्ण स्वतंत्रता है।

इस पुस्तकमें केवल भ्रमका निराकरण तथा सत्यके प्रकाशनका प्रयास किया गया है, किन्हीं पर कोई ग्राक्षेप नहीं। इतनेपर भी भूलसे कहीं-कहीं ऐसा जान पड़े तो वे सज्जन कृपापूर्वक क्षमा करें।

APP (NA) THE SPEED PROPERTY SPEED OF

विनम्र— प्रकाशक

# यह ऐसा बोझ है जिसे सब राज्यों को खुशीसे उठाना चाहिए

—गांधीजीका सत्परामर्श

मेरे विचारमें, गोरक्षाके प्रश्नके ग्राधिक पक्षको ठीकसे उठाया जाय तो इसका नाजुक धार्मिक पक्ष भी ग्रपने ग्राप सुलक्ष जायगा। ग्राधिक दृष्टिसे गोहत्याको बिल्कुल निरर्थक बना देना चाहिये ग्रौर ऐसा किया जा सकता है। लेकिन दुर्भाग्यसे दुनिया भरमें, हिन्दुग्रोंके पूज्य पशु गायको मारना कहीं इतना सस्ता नहीं जितना हिन्दुग्रोंके इस देशमें है। इसके लिये मैं ये सुकाव दूँगा—

- (१) सरकार खुले बाजारमें बेचे जानेवाले हर पशुको ऊँची बोली लगाकर खुद खरीदे।
- (२) सरकार सब बड़े-बड़े शहरोंमें श्रपनी श्रोरसे दूधशालाएँ चलाये जिससे लोगोंको सस्ता दूध मिले।
- (३) सरकार अपने पाले हुए मृत पशुओं की खाल और हिंडुयों का उपयोग करने के लिये चमड़ा कमाने के कारखाने चलाये और दूसरों के मरे हुये पशु भी खरीदे।
- (४) सरकार भ्रादर्श पशु-शालाएँ खोले भ्रौर लोगोंको सिखावे कि पशुभ्रोंको कैसे पाला जाता है भ्रौर उनकी नस्ल कैसे सुधारी जाती है।
- (५) सरकार पशुग्रोंके लिये यथेष्ट गोचर जमीनकी व्यवस्था करे ग्रौर पशुपालनके ग्रच्छेसे ग्रच्छे विशेषज्ञ दुनिया भरसे बुलावे ग्रौर लोगोंको पशुपालनका वैज्ञानिक तरीका सिखावे।
- (६) इस कामके लिये एक ग्रलग सरकारी विभाग खोला जाय। यह विभाग लाभ कमानेके लिये नहीं चलाया जाय ग्रौर इससे लोंगोंको ग्रच्छी नस्लके पशु तैयार करने ग्रौर दूसरी बातोंमें मदद मिले।

श्रतिथि-सत्कारमें महोक्ष,	मुस्लिम-धर्ममें गोमांस
महाजं ग्रथवा वेहतं १२६	निषेध १७२
'गोधनोऽतिथिः' का ग्रर्थ १४३	१० 'उक्षान्न' ग्रौर 'वशान्न' का
'ग्रतिथिनिर्गाः' ग्रौर	ऋर्थ एवं वशा गौका
'ग्रतिथिग्व' का ग्रर्थ १४४	बन्ध्यत्व १७३
मधुपर्कमें मांस-मिश्रणमें	लुप्त तद्धित प्रक्रिया —
कलात्मक बाधा १५१	ग्रंशके लिये पूर्णका प्रयोग ७३
साइबेरियामें मधुपर्क-प्रथा १५३	'वशान्न' का ग्रर्थ १७७
उपसंहार १५४	सोमके साथ मिश्रग्राकी
क्या वैदिक-कालमें गोहिंसा,	वस्तुएँ ग्रौर 'उक्षान्न' का
मांसपरक यज्ञ ग्रौर मांस-	ग्रर्थ १७६
भक्षण प्रचलित थे ? १५५	ऋग्वेद ८.४३.११ का ग्रर्थ १८०
गायकी ग्रवध्यता १५५	'वशा' गौका बन्ध्यत्व १८१
वेदका महासिद्धान्त १५७	११ क्या विवाह-प्रसंगमें
वेदमें ग्रहिंसा १५८	गोहत्या ग्रोर गोमांस
गोमेधपर विचार १६०	प्रचलित था ?
गौके वैदिक नाम १६१	ऋग्वेद ४.५८ ह का अर्थ १८६
यज्ञवाचक नाम १६२	वैलकी स्रवध्यता १८६
गोवध-निषेघक वचन १६२	ऋग्वेद १० ८५ का वर्णन १६०
अनुपमेय गौ १६३	गौके साथ 'हन्' प्रयोगका
गौसे लाभ १६३	ग्रर्थ १६५
यज्ञमें पशु १६५	१२ शव-दाहमें गोहत्या २००
यज्ञोंमें पशुग्रोंकी प्रदर्शनी १६६	
यज्ञकी साक्षी १६७	१३ क्या विवाह एवं राज्या-
कलिवर्ज्य प्रकरण १६६	भिषेकके शुभ ग्रवसरपर
मांस-भक्षीके लिये दण्ड-	चर्मके लिये लाल बैलकी
विधान १७०	हिंसा होती थी ? २०४
महाभारतका प्रमाण १७१	१४ क्या याज्ञवल्क्य नरम
मनुस्मृतिमें गोहिंसाकी	गोमांस खाते थे ? २१७
जघन्यता १७२	१५ क्या भ्रगस्त्यने सौ साँड
ईसाई धर्ममें गोहिंसाकी	मारे थे ? २२०
जघन्यता १७२	१६ परिशिष्ट २२२



### आभार

इस सामग्रीका संकलन जिन-जिन महानुभावोंके ग्रंथोंसे किया गया है उनके नाम तथा उनके ग्रंथोंके नाम यथास्थान उल्लिखित हैं। संकलनकर्ता उन सबका बहुत ग्राभार मानता है। यहाँ उनके नाम इसलिए उल्लेख नहीं किये जा रहे हैं क्योंकि सभी महानुभाव एक-से-एक बढ़कर हैं। किसीका नाम पहले लिखा जाय ग्रौर किसीका पीछे, इसमें किसीको प्रधानता ग्रथवा गौएता देनेका ग्रपराध बनता है जो वांछनीय नहीं। जिस पाठककी हिन्दू धर्मके रहस्यका विशेष विवरएा जाननेकी इच्छा हो तो वे उन सब ग्रंथोंको मंगाकर पढ़नेका कष्ट करें।

इस सामग्रीका संकलन करनेमें एक ऐसे व्यक्तिसे सहायता मिली है जिनका नाम कहीं नहीं ग्राता है। वे हैं स्वर्गीय डाक्टर श्रीरघुवीरजीके सुपुत्र डा श्री लोकेशचन्द्रजी जिन्होंने ग्रपने 'सरस्वती विहार' से ग्रनेक ग्रंग्रेजी भाषाके तथा ग्रन्य ग्रनेक विदेशी ग्रंथ खोज-खोज करके उन सामग्रियोंको बताया जिनका इस संकलनकी पुष्टिके लिये देना वहुत जरूरी था। वे ग्रंथ ग्रन्य स्थानसे उपलब्ध होने मुश्किल थे एवं उनमें कोई-कोई तो ग्रप्राप्य भी हैं।

संकलनकर्त्ताको पूर्ण म्राशा है कि इस सामग्रीको पक्षपात-रहित होकर पढ़नेवाले यह जरूर समक्ष जायेंगे कि 'वैदिक कालमें गोहिंसा म्रौर गोमांस भक्षण प्रचलित था'—यह बात सर्वथा मिथ्या है म्रौर भारतकी निधि वेदोंको भारतीय लोगोंको हिन्टमें गिरानेके लिये ही विदेशियोंने तथा उनका पदानुसरण करके कुछ भारतीयोंने भी ऐसा किया है।

शासनको उचित है कि ऐसी मिथ्या भ्रान्त धारणा फैलानेवाले ग्रंथों, या लेखोंको जब्त कर ले लेकिन वर्तमान शासनसे ऐसी ग्राशा नहीं, क्योंकि वर्तमान शासनके प्रायः सभी कर्णधारोंकी मान्यताएँ दूसरी हैं। भगवान्से यही प्रार्थना है कि उनका यथार्थ मार्गदर्शन करके उन्हें सुबुद्धि दें, जिससे वे देशके ग्रहितकारक कार्योंको रोकनेमें समर्थ हों।

—संकलनकर्त्ता

### प्रस्तावना

लगभग १०० वर्षसे देखा जा रहा है कि सनातन धर्म-ग्रंथोंसे विदेशी लोग ही नहीं, हमारे देशके विद्वान लोग भी यह प्रमािएत करनेकी चेष्टा कर रहे हैं कि वैदिक कालमें मांसाहार ही नहीं, बिल्क गोमांसके खानेकी भी प्रथा थी; केवल प्रथा ही नहीं, गोमांस खाना उस समय ग्रावश्यक माना जाता था। विचार किया जाय कि इस ग्रन्वेषएा ग्रौर प्रचारकी पृष्ठभित्ति क्या है?

ग्रंगेजोंके शासनकालमें कारतूसोंमें गायकी चर्वीके प्रयोगका जब पता लगा तब सन् १८५७ में फौजमें गदर हो गया था। तभीसे ग्रंगेजी शासन इस बातके लिये चिन्तित था कि किस प्रकार भारतीयोंके मनसे गौके प्रति पूज्य भावना निकाल दी जाय। इसके लिये योरोपके विद्वानोंको संस्कृत-ज्ञान करवाकर सनातन-धर्म-शास्त्रोंका जहाँ-तहाँ विपरीत ग्रौर गलत ग्रर्थ लगवा-कर उसका प्रचार करनेकी चेष्टा की गयी। इसके प्रमागमें 'पाइचात्य संस्कृतज्ञोंकी नीयत' शीर्षक प्रवन्ध देखिये।

हमारे देशवासियोंको भी इस कार्यमें लगाया गया कि सनातन-धर्मके शास्त्रोंसे ऐसी बातें खोजकर निकाली जायँ जिससे सनातन-धर्मावलिम्बयोंके मनसे 'गौके प्रति पूज्य भावना' हट जाय ग्रौर 'गायकी हिंसा नहीं की जा सकती'— ऐसी भावना भी न रहे। ऐसा लगता है कि सबसे पहले इस कूटनीति के शिकार बने राजा राजेन्द्रलाल मित्र। इनका जन्म सन् १८२२ में हुग्रा था। ये बंगालके वैष्णव परिवारके बताये जाते हैं। इनका ग्रंग्रेजी भाषामें लिखा 'प्राचीन भारतमें गोमांस'—'Beef in Ancient India' प्रबन्ध सन् १८७२ में ग्रंथांत् गदरके लगभग १५ वर्ष बाद बंगालकी एशियाटिक सोसाइटीकी पत्रिका—Journal of the Asiatic Society of Bengal—में प्रकाशित हुग्रा। इसके लिये उनको ग्रनेक वैदिक ग्रंथोंका ग्रध्ययन करना पड़ा। उनमें से ग्रनेकोंपर इन्होंने टिप्पिंग्याँ भी लिखीं। 'प्राचीन भारतमें गोमांस' प्रबंध प्रकाशित होनेके लगभग चार वर्ष बाद जब यह लगा कि इसका प्रतिवाद

नहीं हो रहा है ग्रौर इस प्रबंधके तथ्योंको एक प्रकारसे लोगोंने स्वीकार कर लिया, तब सन् १८७६ में कलकत्ता विश्वविद्यालयने उनको कानून शास्त्री Doctor of Law (LL. D) की उपाधि दी। इनके द्वारा रचित ग्रंग्रेजी भाषाका वृहद्ग्रंथ 'इण्डो ग्रार्यन' (Indo Aryan) दो खण्डोंमें कलकत्तेकी W. Newman & Co. ने सन् १८८१ में प्रकाशित किया, जिसके पहले खण्डके ग्रध्याय ६ के रूपमें 'प्राचीन भारतमें गोमांस'—यही प्रबंध संनिविष्ट है।

इस प्रबंधका अलग पुस्तकके आकारमें प्रथम प्रकाशन सन् १६२६ में कलकत्तासे एक स्वामी भूमानन्द द्वारा हुआ। इसके कुछ दिन पूर्व से ही महात्मा गांधीने गोरक्षाकी चर्चा आरम्भ की थी जैसा कि २५ जनवरी १६२५ के बेलगांव गोरक्षा परिषद्में अध्यक्ष पदसे दिये हुए उनके भाषगासे और उनके बादके कामोंसे स्पष्ट है। इस पुस्तिकाकी प्रस्तावनाके पृष्ठ (i) की १७वीं पंक्तिसे प्रकाशक भूमानन्द बड़े गर्व के साथ लिखते हैं—

"In my long residence in the Punjab, and in my travels from Alwar to Peshawar, I came in contact with many educated Hindu gentlemen, but I was sorry to find that most of them did not study their own scriptures, and, being ignorant of the manners and customs of their ancestors, were necessarily very narrow in their out look.....I myself do not pretend to be a Sanskrit scholar, but my studies of our ancient books, mostly in English and Vernacular translations, have opened my eyes to this fact, that the Hindu society was not always just like the present one. For instance, we find in the Vedic literature, the ultimate authority and the fountain of knowledge, clear evidences of inter-cast marriages, widow marriage, elaborate Yajna, animal sacrifices, drinking of Soma juice and the eating of food which is at present prohibited in the Hindu society."

ग्रथित्— "पंजाबके मेरे दीर्घकालके प्रवासमें एवं ग्रलवरसे पेशावर तकके भ्रमएामें मैं ग्रनेक पढ़े-लिखे हिन्दू महानुभावोंके सम्पर्कमें ग्राया, परन्तु मुभ्ते दुःख है कि उनमेंके ग्रधिकांश लोगोंने ग्रपने धर्मशास्त्रोंका ग्रध्ययन नहीं किया ग्रौर ग्रपने पूर्वजोंके ग्राचार-विचारसे ग्रनभिज्ञ CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

### प्राचीन भारतमें गोमांस -एक समीक्षा

8

होनेके कारण वे ग्रपने दृष्टिकोणमें बहुत ही संकीणिसे बने रहे।
.....मैं संस्कृतका विद्वान होनेका दावा नहीं करता किन्तु ग्रधिकतर उन ग्रथोंके ग्रंग्रेजी ग्रौर देशी भाषाके ग्रनुवादोंके माध्यमसे मेरे ग्रध्ययनने मेरी ग्राँखें खोल दों कि उस समयका हिन्दू समाज ग्राजके जैसा नहीं था। उदाहरणार्थ—वैदिक ग्रंथोंमें, जो सर्वोपिर एवं ज्ञानके स्रोत माने जाते हैं—ग्रन्तर्जातीय विवाह, विधवा विवाह, बड़े-बड़े यज्ञ, पशुवध, सोमपान, ऐसे खाद्योंका भक्षण जो ग्राजके हिन्दू समाजमें वर्जित हैं—इन सबके स्पष्ट प्रमाण मिलते हैं।.....

प्रस्तावनाके ग्रंशोंसे इस पुस्तिकाके प्रकाशन ग्रौर प्रचारका ग्राशय स्पष्ट हो जाता है। भली-भांति संस्कृतसे ग्रनभिज्ञ जनताको गलत ग्रर्थ करके किस तरह भरमाया जाता है—यह इस पुस्तकमें दिये गये ग्रनेक प्रबंधोंके पढ़नेसे स्पष्ट हो जायगा।

इसके बाद गौ-रक्षाका जोरदार भ्रान्दोलन भ्रारम्भ हुम्रा सन् १६६७ में। तभी इस प्रबन्धका एक भ्रौर संस्करण जून १६६७ में 'मनीषा ग्रंथालय प्राइवेट लिमिटेड, कलकत्ता' द्वारा प्रकाशित हुम्रा ग्रौर इसकी भ्रनेक प्रतियाँ विना मूल्य वितर्ण की गयीं। उनका विना मूल्य वितरण प्रकाशक द्वारा सीघे किया गया या भ्रन्य किसीके द्वारा—इसका कुछ पता नहीं।

राजा राजेन्द्रलाल मित्रके बाद पाण्डुरंग वामन काएो महोदयको मान्यता दी गयी, जो एम.ए., एल.एल.बी.—M.A., L.L.B. बम्बई हाईकोर्ट के एडवोकेट (Advocate) थे, जिन्होंने ग्रंग्रेजी भाषामें 'धर्मशास्त्रका इतिहास' (History of Dharmashastra) कई खण्डों ग्रौर भागोंमें लिखा जिसका प्रकाशन भंडारकर ग्रोरिएंटल रिसर्च इंप्टोट्यूट, पूना द्वारा हुग्रा है। इन्होंने भी जहाँ-तहाँ शास्त्रोंसे विस्तृत प्रमाए। देकर यह सिद्ध करनेकी चेष्टाकी है कि प्राचीन भारतमें मांस ग्रौर गोमांस भक्षरा प्रचलित था।

इतना ही करके संतोष नहीं किया गया, विलक राजेन्द्रलाल मित्रके 'प्राचीन भारतमें गोमांस' प्रवन्धके स्राधार पर गोमांस-भक्षराका जोरोंसे

प्रचार करनेके लिये गोमांस-भक्षी क्लबकी स्थापनाकी गयी। नीचेका उद्धरण देखिये—

> "There were those among the intellectuals in touch with the British who were dazzled by the new ideas. The new light in their eyes was so bright that they thought the light within themselves was darkness."

> "They took, so to speak, Macaulay at his word, and set out to Westernize themselves in thought, mind and spirit. They formed beef-eating clubs and gloried in the defiance of cast superstition."

"The advocates of acceptance rather than the mutineers were the real revolutionaries of the nineteenth century India."

('INDIA, PAKISTAN AND THE WEST' by Percival Spear, published by Oxford University Press, 1949 edition, page 182, lines 9 to 13 and 28 to 30)

ग्रथात्— ब्रिटिश लोगोंके सम्पर्कमें ग्राने वाले पढ़े-लिखे लोगोंमें ऐसे व्यक्ति भी थे जो (इन) नयी विचार-धाराग्रोंसे चोंधिया गये। उनकी हिष्टमें (इन विचार-धाराग्रोंका) यह नया प्रकाश इतना तीव्रथा कि वे लोग सोचने लगे कि उनके ग्रपने भीतर जो (ज्ञानका) प्रकाश या वह तो ग्रंधकार था। (ग्रथात् वे समभने लगे कि उनके वे धर्म विषयक संस्कार ग्रंधकारके ही प्रतीक थे ग्रौर ग्रव उन्हें सच्चा प्रकाश प्राप्त हुग्रा कि वैदिक कालमें गोहिंसा हुग्रा करती थी ग्रौर उन दिनोंमें लोग छूटसे गोमांस खाया करते थे)

> लार्ड मैकालेके शब्दोंको उन लोगोंने ग्रक्षरशः सत्य रूपमें ग्रह्ण किया ग्रौर ग्रपने ग्रापको विचारोंसे, मनसे ग्रौर भावोंसे पश्चिमीय साँचेमें ढालने लगे। उन लोगोंने गोमांस-भक्षी क्लव की स्थापनाकी ग्रौर जाति-पाँति (वर्ण् धर्म) व्यवस्थाको ग्रंध-विश्वास मानकर उसका ग्रनादर करनेमें ही ग्रपने ग्रापको गौरवान्वित मानने लगे।

> (सन् १८५७ के) विष्लव-कारी लोग नहीं, बल्कि गोमांसको स्वीकार करनेके समर्थक लोग ही उन्नीसवीं शताब्दीके भारतके वास्तविक क्रांतिकारी थे।

### प्राचीन भारतमें गोमांस-एक समीक्षा

लार्ड मैकालेके सर्व-विदित प्रसिद्ध वाक्य-

8

"English education would train up a class of persons— Indian in blood and colour, but English in tastes, in opinions, in morals and in intellect."

ग्रर्थात् — ग्रंग्रेजी शिक्षा व्यक्तियोंका एक ऐसा वर्ग तैयार करेगी जो रक्त ग्रौर रंगमें तो भारतीय किन्तु रुचि, विचार, ग्राचार, ग्रौर बुद्धिमें ग्रंग्रेज होगा।

शास्त्रोंके मांस-निषेधक वचनोंको छिपाना ग्रौर ग्रर्थका ग्रनर्थ करके मांस भक्षराको प्रमुखतासे जनताके सामने रखना—यही इन लोगोंका मुख्य घ्येय रहा है। इन लोगोंको प्राचीन ब्रिटिश सरकार द्वारा ही नहीं, ग्रिपतु भारतकी वर्तमान सरकार द्वारा भी मान्यता मिली, ग्रंग्रेजी पढ़े-लिखे लोगोंके ग्राधुनिक समाजमें सम्मान मिला, इसिलये ऐसे सम्मानके लोलुप ग्रन्य लोग भी जो स्वयं संस्कृतका कुछ भी ज्ञान नहीं रखते हैं ग्रौर धर्मशास्त्रोंका तिक भी ग्रध्ययन नहीं किया है, वे भो इसी ढंगके प्रवन्ध लिखकर ग्रंग्रेजी भाषाके पत्र-पत्रिकाग्रोंमें प्रकाशित करवाते रहते हैं। उनके विरोधमें कोई प्रमारा सहित कुछ लिखकर भेजता है तो उसका प्रकाशन नहीं होता।

सामान्य जन इनकी बातोंसे ग्रच्छी प्रकार भ्रमित होकर यह विश्वास करने लगे कि जब इतने बड़े-बड़े पढ़े-लिखे लोग खुले ग्राम शास्त्रीय प्रमाण द्वारा घोषित करते हैं तब निश्चय ही यह सत्य है कि सनातन-धर्म-ग्रंथोंमें मांस-भक्षण, गोमांस-भक्षण ग्रादिका निषेघ तो है ही नहीं प्रत्युत ग्रावश्यकीय विधान भी है। यह कितनी भ्रांत धारणा है—यह बात इसमें विणित प्रबंधोंके पढ़नेसे स्पष्ट हो जायगी।

वेदोंमें केवल गोहिंसा ही वर्जित हो—ऐसी बात नहीं है, बिल्क सब प्रकारके तृरा-भोजी जीवोंकी हिंसा वर्जित है। ('क्या वैदिक कालमें गोहिंसा, मांस-परक यज्ञ ग्रौर मांस-भक्ष एा प्रचलित था?' शीर्षक प्रबंध देखिये)।

ग्रन्य धर्मशास्त्रोंमें भी ग्रहिसा-धर्मका प्रतिपादन बहुत जोरके साथ किया गया है ('धर्मशास्त्रोंमें ग्रहिसा-धर्मकी विशेषतायें' शीर्षक संकलन देखिये)।

इतना होने पर भी धर्म-ग्रंथोंमें जहाँ-तहाँ हिंसापरक कार्यींका श्रौर मांसभक्षरणका उल्लेख देखनेमें ग्राता है। पूर्वापर प्रसंगको लेकर इनपर विचार करना चाहिये कि ऐसे उल्लेख 'ग्रवश्य पालनीय धर्म' के रूपमें बताये गये हैं या मांस-भक्षी कूप्रवृत्तियोंको रोकनेके लिये कोई मार्ग निकाला गया है। प्राशायोंमें कई प्रकारकी कृप्रवृत्तियां स्वाभाविक देखनेमें ग्राती हैं, जैसे कामोपभोग रूपी व्यभिचार, सुरापान इत्यादि-इत्यादि। जैसे ग्रनेक स्त्री-पुरुषोंकी चाहे जिसके साथ ग्रापसमें व्यभिचारकी प्रवृत्तिको रोकनेके लिये मानवके लिये यह विधान दिया गया कि एक पुरुष एक ही नारीसे विवाह-बन्धनमें बंधकर वहीं तक प्रवृत्त रहे तो ब्रह्मचारी जैसा ही माना जाय, वैसे ही मांस-भक्षियोंकी मांस-भक्ष एकी प्रवृत्ति रोकनेके लिये उस प्रकारके उल्लेख जहाँ हों भ्रौर वास्तवमें मांस-भक्ष्या-निषेध भ्रौर हिंसा-निषेध ही उद्देश्य हो तथा निरामिष भोजन तथा ग्रहिंसाको ही प्रमुख धर्म वताया हो, ग्रौर उसको ग्रच्छी प्रकार समभकर तथा मनन करके देखा जाय तो यह प्रतीत होगा कि मांस-भक्षरा एवं हिंसापरक कर्मको 'ग्रवश्य पालनीय-धर्म' नहीं कहा गया है। ग्रतएव जहाँ भी हिंसाका समर्थक या मांस-भक्षरणका समर्थक या मांसपरक-कर्मके विधान जैसे वाक्य देखनेमें ग्रावें उनको पहले तो विचार-पूर्वक देखना च।हिये कि कुप्रवृत्तियोंको रोकनेके लिये प्रतिबंधके रूपमें हैं या 'ग्रवश्य-पालनीय-धर्म' के रूपमें । यदि ग्रवश्य-पालनीय धर्मके रूपमें ही वे वाक्य हों तो वे मान्य न होकर उनको क्षेपक ही मानना चाहिये ('श्रुति ग्रौर स्मृतिमें विरोध हो तव ?' शीर्षकके ग्रन्तर्गत दिये गये प्रमाएा देखिये।)

महाभारतमें बताया है-

लुव्धेवित्तपरैर्ब्रह्मन् नास्तिकैः सम्प्रवितितम् । वेदवादानिवज्ञाय सत्याभासिमवानृतम् ॥ (शांतिपर्व २६३-६) ब्रह्मन् ! धन कमानेके प्रयत्नमें लगे हुए बहुत-से लोभी ग्रौर नास्तिक पुरुषोंने वैदिक वचनोंका तात्पर्य न समभकर सत्य-से प्रतीत होनेवाले मिथ्या यज्ञोंका प्रचार कर दिया है ।

सुरा मत्स्या मधु मांसमासवं कृसरौदनम् । धूर्तः प्रवर्तिततं ह्य तन्नैतद् वेदेषु कित्पतम् ॥ (शांतिपर्व २६५॥६) सुरा, मछली, मधु से बनी शराब, मांस, ग्रासव तथा तिल ग्रौर चावल की

## प्राचीन भारतमें गोमांस-एक समीक्षा

खिचड़ी—इन सब वस्तुग्रोंको धूर्तोंने यज्ञमें प्रचलित कर दिया है। वेदोंमें इसके उपयोगका विधान नहीं है।

महाभारतमें ग्रौर भी स्पष्ट उल्लेख है कि यज्ञोंमें किसी प्रकारकी

हिंसाको स्थान नहीं है -

5

बोजैर्यज्ञेषु यष्टव्यमिति वै वैदिकी श्रुतिः। अजसंज्ञानि बीजानि च्छागं नो हन्तुमहर्थ।।

नैष धर्मः सतां देवा यत्र वध्येत वै पशुः। (शान्ति० ३३७, ४-५) यज्ञोंमें वीजोंकी ग्राहुति देनी चाहिए, ऐसी वैदिक श्रुति है। वीजोंका ही नाम ग्रज है, ग्रतः वकरेका वध करना उचित नहीं। जहाँ-कहीं भी यज्ञमें पशुका वध होता हो, वह सत्पुरुषोंका धर्म नहीं है।

जैन-धर्म 'स्याद्वादमंजरी' नामक ग्रंथमें भी यज्ञ प्रकरणमें 'ग्रज' का धान्य ग्रादि परक ग्रर्थं किया गया है ---

तथाहि किल वेदे 'म्रजैर्यष्टन्यम्' इत्यादि वाक्येषु मिथ्यादृशोऽजशब्दं पशुवाचकं न्याचक्षते । सम्यग्दृशस्तु जन्माप्रायोग्यं त्रिवाषिकं यवतीह्यादि, पञ्चवाषिकं तिलमसूरादि, सप्तवाषिकं कङ्कुसर्षपादि धान्यपर्यायतया पर्यवसाययन्ति । (श्लोक संख्या २३ की न्याख्या, वम्बई संस्कृत प्राकृत सोरीज् द्वारा प्रकाशित, १९३३ का प्रथम संस्करण, पृष्ठ १४०, पंक्ति ४९-५४)

ग्रर्थात्—वैसे ही वेदके 'ग्रजोंसे यज्ञ करना चाहिये' इत्यादि वाक्योंमें ग्रज्ञानी लोग 'ग्रज' शब्दको पज्ञुवाचक कहते हैं। 'जन्माप्रायोग्यम्' जिनके पुनर्जन्मकी सम्भावना नहीं है ऐसे सम्यग्टश् ग्रर्थात् ज्ञानीजन तीन वर्षके जौ-ब्रीहि ग्रादि, पाँच वर्षके तिल-मसूर ग्रादि, सात वर्षके कङ्कु-

सर्षप ग्रादि धान्यके पर्यायके रूपमें उन्हें मानते हैं।

विष्णु शर्मा विरचित 'पञ्चतन्त्र' के काकोलूकीय (तृतीय तन्त्र) में भी लिखा है—

एतेऽपि ये याज्ञिका यज्ञकर्माण पशून् व्यापादयन्ति ते मूर्खा परमार्थ श्रुतेर्न जानन्ति । तत्र किल एतदुक्तमजैर्यष्टव्यम् । ग्रजा ब्रीह्यः तावत् सप्त-वार्षिकाः कथ्यन्ते न पुनः पशुविशेषाः ।

ग्रर्थात्—जो लोग यज्ञमें पशुग्रोंको मारते हैं, वे मूर्ख हैं, क्योंकि वे यथार्थ रीतिसे श्रुतिका ग्रर्थ नहीं जानते । श्रुतिमें कहा है 'ग्रजोंसे यज्ञ करना

### प्रस्तावना

चाहिये'। 'ग्रज' नाम सप्तवर्षीय व्रीहिधान्यका है, न किसी पशु विशेषका।

वहाँ शास्त्रीय प्रमाणमें निम्न श्लोक उद्धृत किया गया है—
बृक्षांशिछत्वा पश्चन्हत्वा कृत्वा रुधिर कर्दमम् ।
यद्योवं गम्यते स्वर्गे नरकं केन गम्यते ॥

ग्रर्थात्—वृक्षोंको काटना, पशुग्रोंको मारना, उनके रुधिरका कीच मचाना— इत्यादि कर्मसे यदि स्वर्ग मिलता है तो फिर नरक किन कर्मींका फल है ?

पंडित धर्मदेव विद्यावाचस्पति ग्रपनी पुस्तक 'वेदोंका यथार्थ स्वरूप' (प्रकाशक—गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार, सं०२०१४ संस्करण) के पृष्ठ २५१-२५२ पर लिखते हैं—

''इससे यह स्पष्ट है कि यज्ञोंमें पर्शुहिसा धूर्तकित्पत है इसिलये श्रौतसूत्रों, गृह्यसूत्रों, ब्राह्मगाग्रंथों, स्मृतियों तथा ग्रन्य ग्रन्थोंमें जो इस प्रकारके वचन पाये जाते हैं वे वेद-विरुद्ध होनेसे ग्रमान्य ग्रौर पीछेकी मिलावट (प्रक्षिप्त) हैं।''

ऐसे प्रक्षेप प्राचीन ग्रन्थोंमें बहुत होते रहे हैं, इस बातको सुप्रसिद्ध द्वैतवादी-ग्राचार्य मध्व उपनाम ग्रानन्दतीर्थजीने 'महाभारत तात्पर्य निर्णाय' में इन शब्दों द्वारा बताया है—

> क्वचिद् ग्रन्थान् प्रक्षिपन्ति क्वचिदन्तरितानपि । कुर्युः क्वचिच्च व्यत्यासं प्रमादात्क्वचिदन्यथा ॥ ग्रनुत्सन्ना ग्रपिग्रन्थाः व्याकुला इति सर्वशः ॥

('महाभारत तात्पर्य निर्णय' ग्र०२ सर्वमूल कुम्भघोगाम् संस्कररण पृ० ६०७)

ग्रर्थात्—धूर्त लोग कहीं ग्रन्थोंमें प्रक्षेप कर देते हैं, कहीं कुछ वाक्योंको लुप्त कर देते हैं, कहीं प्रमादवश बदल देते हैं ग्रौर कहीं जान-बूभकर परिवर्तन कर देते हैं। इस प्रकार जो ग्रन्थ नष्ट नहीं भी हुए वे भी व्याकुल हो गये हैं, ग्रर्थात् उनमें बहुत कुछ गड़बड़ हो गयी है।

### प्राचीन भारतमें गोमांस-एक समीक्षा

20

वेदोक्त प्रमागाोंके ग्रतिरिक्त श्रीमद्भागवत् सप्तम स्कन्ध, ग्रध्याय १५, इलोक ७, ८, १० ग्रौर ११ देखिये —

### न दद्यादामिषं श्राद्धे न चाद्याद् धर्मतत्विवत् । मुन्यन्नैः स्यात्परा प्रीतिर्यथा न पर्शुहिसया ॥७॥

धर्मका मर्म जाननेवाला पुरुष श्राद्धभें मांसका ग्रर्पण न करे ग्रौर न स्वयं ही खाय; क्योंकि पितरोंको ऋषि-मुनियोंके योग्य हिवष्यान्नसे जैसी प्रसन्नता होती है, वैसी पशु-हिंसासे नहीं होती ॥७॥

### नैताहशः परो धर्मो नृगां सद्धर्ममिच्छताम्। न्यासो दण्डस्य भूतेषु मनोवादकायजस्य यः॥८॥

जो लोग सद्धर्म-पालनकी ग्रभिलाषा रखते हैं, उनके लिये इससे बढ़-कर ग्रौर कोई धर्म नहीं है कि किसी प्राग्गिको मन वाग्गी ग्रौर शरीरसे किसी प्रकारका कष्ट न दिया जाय ॥६॥

### द्रव्ययज्ञैर्यक्ष्यमार्गं हब्ट्वा भूतानि विभ्यति । एष माकरुगो हन्यादतज्ज्ञो ह्यसुतृब् ध्रुवम् ॥१०॥

जो कोई इन द्रव्यमय यज्ञोंसे यजन करना चाहता है, उसे देखकर सभी प्राणी डर जाते हैं; वे सोचने लगते हैं कि यह ग्रपने प्राणोंका पोषण करनेवाला निर्देयी मूर्ख मुभे ग्रवश्य मार डालेगा ॥१०॥

### तस्माद् दैवोपपन्नेन मुन्यन्नेनापि धर्मवित् । सन्तुष्टोऽहरहः कुर्यान्नित्यनैमित्तिकीः क्रिया ॥११॥

इसलिये धर्मज्ञ मनुष्यको यही उचित है कि प्रतिदिन प्रारब्धके द्वारा प्राप्त मुनिजनोचित हविष्यान्नसे ही ग्रपने नित्य ग्रौर नैमित्तिक कर्म करे तथा उसीसे सर्वदा सन्तुष्ट रहे ।।११।।

मनुस्मृति ग्रादि धर्मग्रंथोंमें जो मांस-विधायक वाक्य मिलते हैं, उनके लिये स्पष्ट रूपमें नहीं बताया गया है कि ये किनके लिये हैं। मनुस्मृति, ग्रध्याय ११ में निम्नलिखित क्लोक है, जिसकी संख्या किसी संस्करणमें ६५ है ग्रौर किसीमें ६६—

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

### यक्षरक्षः पिशाचान्नं मद्यं मांसं सुरासवम् । तद् ब्राह्मग्रीन नात्तव्यं देवानामश्नता हविः ॥

मद्य, मांस, सुरा, ग्रासव—ये यक्ष, राक्षस तथा पिशाचोंके ग्राहार हैं। इसलिये देवताग्रोंकी हिव खाने वाले ब्राह्मणोंके लिये (ये वस्तुएँ) खाने योग्य नहीं हैं।

इससे यह प्रमागित होता है कि मांस-मिदरा ग्रादि यक्षों, राक्षसों ग्रौर पिशाचोंका ग्राहार हैं। इससे स्पष्ट है कि धर्मशास्त्रोंके मांसपरक वाक्य मानव जातिके लिये नहीं हैं। वेदोंमें भी इनको यातुधानों—राक्षसोंका भोजन बताया है ग्रौर इन्हें खाने वालोंके लिये मृत्यु-दण्डका विधान है—

यः पौरुषेयेगा क्रविषा समङ्क्ते यो ऋश्व्येन पशुना यातुधानः । यो ऋष्ट्याया भरति क्षीरमग्ने तेषां शीर्षागि हरसापि वृश्च ॥ (ऋग्वेद १०. ८७. १६/८. ४. ८. १.)

ग्रर्थात्—जो पुरुषके मांसका सेवन करता है, जो घोड़ेका या ग्रन्य पशुका मांस खाता ग्रौर गौग्रोंकी हत्या करके उनके दूधसे ग्रन्योंको वंचित करता है, हे राजन् ! यदि ग्रन्य उपायोंसे ऐसा यातुधान (हिंसक— राक्षस वृत्तिका पुरुष) न माने तो ग्रंपने तेजसे उन सबके सिर तकको काट डाला । यह ग्रन्तिम दण्ड है जो दिया जा सकता है ।

गौतमधर्मसूत्र (मिताक्षरावृत्ति सहित) के हिन्दी-व्याख्याकार डाक्टर उमेशचन्द्र पाण्डेय (चौखंभा संस्कृत सीरिज् ग्राफिस, वाराण्सी द्वारा प्रकाशित वि०सं० २०२३ का संस्करण) भूमिकाके पृष्ठ १३ के ग्रन्तमें लिखते हैं — "प्राचीन साहित्यमें क्षेपकोंके लिये पर्याप्त ग्रवसर था ग्रौर किसी ग्रन्थका विशुद्धरूप निर्धारित करना ग्रसंभव-सा ही है।" यवन-राज्यकालमें भयके कारण एवं ग्रंग्रेजोंके राज्यकालमें लोभके कारण ग्रनेक धर्मग्रन्थोंमें प्रक्षिप्त जोड़े गये लगते हैं। ऐसे ग्रन्थोंका विशुद्धरूप निर्धारित करना कठिन ग्रवश्य है लेकिन ग्रसम्भव नहीं कहा जा सकता। जो भी वाक्य श्रृतिसे विपरीत हों उनको प्रक्षिप्त मानकर उन ग्रन्थोंके विशुद्धरूपका निर्णय किया जा सकता है। यह कार्य बहुत कष्ट-साध्य है। इसको वे ही व्यक्ति कर सकते हैं जो वेदके वाक्योंका ठीक-ठीक ग्रर्थ लगा सकते है। यह कार्य करने योग्य है। इस समयमें भी धर्मशास्त्रोंके सदाचारी विद्वान वर्तमान हैं। दिन पर दिन संस्कृत भाषाकी उपेक्षा होनेसे इस भाषाके विद्वान ग्रौर शास्त्रके ग्रनुसार

श्राचरंगा करने वाले लोग भविष्यमें दुर्लभ हो जायेंगे। यदि यह कष्टसाध्य कार्य वर्तमान कालमें न हो पाया तो भविष्यमें योग्य विद्वानोंके स्रभावमें स्रवश्य हो स्रसम्भव बन जायगा।

वेदोंकी भाषाका ग्रर्थ लगाना सरल काम नहीं है। निरुक्तके ज्ञानके विना वेदकी भाषा नहीं समभी जा सकती। देवगएाको परोक्ष भाषा ही प्रिय है, प्रत्यक्ष नहीं—'परोक्षप्रिया इव हि देवा भवन्ति प्रत्यक्ष-विद्विषः' (गोपथ ब्राह्मए १. १. १.)। महाभारतकी सरल भाषामें भी ग्रनेक ऐसे स्थल हैं जिनका ठीक ग्रर्थ लगाना बड़ा कठिन है। महाभारत में स्वयं लिखा है—

त्रष्ट्रो इलोकसहस्राग्ति त्रष्ट्रो इलोकशतानि च। त्रादिः १.५१) ह

ग्रर्थात्— द, द०० इलोक ऐसे हैं जिनका पूरा ज्ञान व्यासजीको है तथा ज्ञुकदेवजीको है, संजयको हो भी सकता है न भी हो।

श्रीमद्भागवत महापुराणमें भी यह वर्णन है कि देवोंको परोक्ष वर्णन ही प्रिय है—

यत्परोक्षप्रियो देवो भगवान् विश्वभावनः ॥ (श्रीम. भा. ४. २८. ६५) परोक्षवादो वेदोऽयं बालानामनुशासनम् ॥ (श्रीम. भा. ११. ३. ४४)

जिस प्रकार प्रकाशमें ग्रंधकारको स्थान नहीं, वैसे ही ज्ञानके मूर्त-स्वरूप वेदोंमें कोई भी ऐसी बात होनी सम्भव नहीं जो मनुष्यको ग्राधिभौतिक, ग्राधिदैविक एवं ग्राध्यात्मिक क्षेत्रमें ऊँचा उठानेमें रोक लगाती हो। जिस प्रकार प्रकाशमें भी ग्रपनी छायाकी कालिमा दीखती है, उसी प्रकार वेदोंमें भी लोग ग्रपनी कालिमाको देखना चाहें तो देख सकते हैं, किन्तु वास्तवमें उस कालिमाका वहाँ ग्रस्तित्व नहीं है।

ऋषियों की समाधि-ग्रवस्थामें उनको मन्त्रों का प्रत्यक्ष होता था ग्रौर उनके ग्रर्थका भी, इसीसे वे मन्त्र-द्रष्टा कहे जाते हैं। इसी प्रकार उनको सृष्टि-रचनाका ज्ञान भी था। सृष्टिकत्ता ने जीवों में से कुछ को तृएा-भोजी वनाया, तो कुछ को जीव-भोजी। किन्तु मानवको उद्भिज्ज-भोजी ही वनाया है, जो उसकी शरीर रचनासे भी स्पष्ट है। ग्राजकलके भी शरीर-रचना-विज्ञानवेत्ता एवं चिकित्सा-विज्ञानवेत्ता भी यही वताते हैं। ग्रर्नेस्ट क्रासबी (Earnest Crosby) ग्रौर जेम्स ग्रोल्डफील्ड (James Oldfield,

M.A., D.C.L., M.R.C.S.,) के लेखोंमें से कुछ चुने हुए वाक्योंका हिन्दी अनुवाद नीचे दिया जा रहा है—

क्या मांस मनुष्यका स्वामाविक मोजन है ? ग्रनैंस्ट क्रासबी (Ernest Crosby) के ज्ञानपूर्ण वृहत् साहित्यसे चुने हुए वाक्य—

कसाईगीरी निर्दयतापूर्ण कार्य है—यह स्वतः ही इतना स्पष्ट है कि इसके विवेचनकी ग्रावश्यकता नहीं ग्रौर इस निर्दयताका लक्ष्य सामान्यतः पशुका प्राणा ही रहता है।

यन्तमें कसाईखानेमें पशु ऐसे मनुष्यों द्वारा प्राप्त किये जाते हैं जो यन्त्रवत् काम करते-करते यन्त्रवत् वन गये हैं, जिनके लिये प्रति मिनट नियत संख्यामें पशुग्रोंकी हत्या करना जरूरी होता है ग्रौर जिन्हें (पशुके शरीरमें से) प्राण निकलनेके पूर्व ही चमड़ा उधेड़नेकी क्रिया भी ग्रारम्भ कर देनी पड़ती है। कई बार तो सफेद मांस प्राप्त करनेको ऐसा करना पड़ता है कि प्राण धीरे-धीरे विलम्बसे निकलें।

हत्याके स्थानपर पशु बहुत बौखलाया हुआ आता है और उसके द्वारा होनेवाले प्रतिरोधको रोकनेके लिये उसकी आँख फोड़नी अथवा पूँछ इस हद तक मरोड़ना जरूरी होता है कि वह टूट जाती है। इस कसाईगीरीके व्यवसायमें लगे हुए लोगोंके लिये दया (humanity) का उपदेश व्यर्थ है। हम भी यदि इस व्यवसायको अपनावें तो हम भी उसी तरह करेंगे।

खानेके लिये प्रािंग्-हत्याका विचार ही मूलतः निर्वयतापूर्ण है ग्रौर निर्वयताके साथ कोमलता (cruel humanely) नहीं हो सकती। 'जीवोंके प्रिंत निर्वयता निवारक समाज' के ग्रितशय भयभीत हुए एक ग्रफसरने जो शिकागो (Chicago, U.S.A.) के कसाईखानेके निरीक्षण-कायपर प्रथम बार गया था, (वहाँके कसाई व्यवसाय वालोंसे) पूछा—"तुमसे ऐसा व्यवसाय किस प्रकार ग्रपनाया गया?" ग्रौर निरुत्तर कर देनेवाला यथार्थ उत्तर मिला—"हजूर! जो घृिणत कार्य ग्रापको स्वयं करना पड़ता, वह ग्रापके लिये हम लोग कर देते हैं।" यह कर्म मनुष्य मात्र को पशु बना देने वाला (brutalising) तथा निर्वय (cruel) है ग्रौर मांसकी माँग उत्पन्न करने वाले लोग ही इसके लिये जिम्मेदार हैं।

### प्राचीन भारतमें गोमांस-एक समीक्षा

88

ग्रीर यह बड़ी ग्राश्चर्यपूर्ण शठता है कि कतलके लिये हम सबसे ग्रिधक निर्दोष पशुग्रोंको चुनते हैं। यदि हिंसक जीवोंका शिकार किया जाय तो यह बात कुछ हद तक न्यायसंगत हो सकती है, लेकिन हम लोग निरपराध हिरण, गाय ग्रौर भेड़ ग्रादि को कतल करना ही पसन्द करते हैं। क्या मांसभिक्षी जीवोंका मांस घृिणत है ? तो फिर हम मांस-भक्षी बनकर ग्रपने मांस को घृिणत क्यों बनाते हैं ?

मांसके गन्दे ग्रौर ग्रस्वास्थ्यकर होनेके ग्रतिरिक्त यह बहुत सरलतासे प्रमाणित किया जा सकता है कि मनुष्यके लिये मांस स्वाभाविक खाद्य नहीं है। यदि यह स्वाभाविक खाद्य होता तो क्या ग्राप कसाईकी किसी भी दुकानपर जाकर हत्या किये हुए पश्चके मांसका एक दुकड़ा काटकर अपने मुँहमें डालनेके इच्छुक नहीं होते ? किसी फल या शाक-सब्जीके लिये ऐसा करनेमें आपको कोई हिचकिचाहट नहीं होगी। यदि मांस आपका स्वाभाविक खाद्य होना तो क्या ग्रापको कुत्ते या विल्लीका मांस खानेमें केवल इसलिये घिन लगती कि ग्राप उसके ग्रभ्यासी नहीं हैं ? कोई नया फल ग्रापके सामने आवे तो आप उसको ग्रवश्य चखना चाहोगे। कोरियामें मांसके लिये कुत्तोंको पाला जाता है और सिद्धान्ततः उनके मांसमें एवम् अन्य मांस में कोई अन्तर नहीं है। एक बिल्लोके बच्चेको ग्रौर एक मूर्गीके बच्चेको एकही घरमें छोड़ दें तो बिल्ली का बच्चा मुर्गीके बच्चेपर भपटकर उसे खा कर यह स्पष्ट कर देगा कि उसका स्वाभाविक खाद्य क्या है ? विल्लोके बच्चेकी बजाय यदि एक मानवके बच्चेको वहाँ छोड़ दिया जाय तो वह मुर्गीके वच्चेको खाने का प्रयत्न नहीं करेगा, किन्तु सेब खानेकी चेष्टा करेगा; क्योंकि वह उसका स्वाभाविक खाद्य है। ......इन सब बातोंसे पता चलता है कि मांस मानवका स्वाभाविक खाद्य नहीं है।

मानवके शरीरकी रचना भी इस बातकी पुष्टि करती है। उसकी आँते मांस-भक्षी जीवों जैसी छोटी न होकर तृण-भक्षी जीवोंकी तरह लम्बी होती हैं। उसके जबड़े ऐसे ढंगसे सटे हुए होते हैं कि वे एक दूसरेके सहयोगसे किसी वस्तुको पीस सकें, जैसे कि घोड़े, गाय और उँटके होते हैं; वे कुत्तोंके जबड़ोंकी तरह खड़ेसे लगे हुए नहीं होते। मनुष्यके मांस-भक्षी दाँत नहीं होते जिनको अवसर नुकीला (eye-teeth) कहा जाता है। यह बात निरामिष भोजी बनमानुस (anthropoid ape) में बहुत अधिक स्पष्ट दिखाई देती है।

वहुत बड़े शरीर-रचना-विशेषज्ञ एवम् प्राकृतिक इतिहासज्ञ रिचर्डं ग्रोवेन (Richard Owen) बहुत पहले ही बता गये हैं कि ''बनमानुस और सभी चतुभु ज (quadrumane) ग्रपना-ग्रपना पोषण फलोंसे, अनाजसे एवम् दूसरे रसीले शाक सिंव्जियोंसे प्राप्त करते हैं ग्रौर इन जानवरोंकी शरीर-रचनासे मनुष्यकी शरीर-रचनामें ग्रत्यिक समानता मनुष्यकी फलाहारी प्रकृतिको स्पष्टरूपसे प्रदर्शित करती है।'' ग्रौर इस तथ्यकी प्रामाणिकता ग्राज उस समयकी ग्रपेक्षा ग्रधिक है जिस समय ग्रोवन साहबने यह लिखा था। मनुष्यके लिये मांस खाना स्वाभाविक है ही नहीं।

लेडी मारगरेटके फलाहारी चिकित्सा-भवन (The Lady Margaret Fruitarian Hospital) के ग्रन्तर्गत ग्रनेशा क्रपर (Earnshaw-Cooper) द्वारा संस्थापित भोजन शास्त्र विभागके ग्रध्यापक (Lecturer on Dietatics) जेम्स ग्रोल्डफील्ड (James Oldfield, M. A., D. C. L., M.R.C.S.) साहबके लेखों मेंसे चुने हुये अनुच्छेद—

सबसे प्राचीन ग्रौषधवैज्ञानवेत्ताने गणित सम्बन्धी सिद्धान्तोंके अनुसार सोचना ग्रारम्भ किया ग्रौर वह ठीक ही इस निष्कर्षपर पहुँचा कि किसी भी जीवके मल (waste matter) को यदि शीघ्र ही पूर्णरूपसे ग्रलग नहीं कर दिया जाता तो वह मल उस जीवके लिये रोगका कारण बन जाता है।

उस वैज्ञानिकने यह भी ध्यानपूर्वक देखा कि मांस-भक्षी पशुग्रोंका मल सबसे ग्रधिक हानिकारक होता है। (तृण-भक्षी) पालतू जानवरोंको गुफाके ग्रन्तिम छोर तक ले जाकर रखा जा सकता है और इससे किसीको कोई हानि नहीं होती, किन्तु (मांस-भक्षी) कुत्ते, विल्ली या भेड़िये जिस गुफामें बन्द करके रक्खे गये हों उससे कई वर्षोंतक दूर रहना चाहिये। उस विज्ञान वेत्ताने भविष्यके लाभ उठानेके लिये ग्रपने मनमें यह भी निश्चय जान लिया था कि (तृण-भोजी) पशुग्रोंके मल जमीनपर जहाँ-तहाँ खुला पड़ा रहता है तो उनका घाससे लेकर शाक-सब्जी जैसी वस्तुएँ पैदा करनेवाली भूमि तक सभीके द्वारा खादके रूपमें शीघ्र ही उपयोग कर लिया जाता है, जबकि मांस-भक्षी पशु जन्मजात स्वाभाविक ज्ञानके द्वारा भूमिको खोदकर ग्रपने मलको शरीरसे बाहर निकलते ही ढँकनेके ग्रादी होते हैं।

प्रकृतिने शरीरमेंसे मल मोचनके लिये मानव शरीरमें जो ग्राश्चर्य-जनक यन्त्र लगाया है उसपर क्षण भरके लिए हम विचार करें। सबसे पहिले हमें ग्रसंदिग्ध रूपसे मनमें यह निश्चय कर लेना चाहिये कि मानव-मल (human waste matter) उस मलको उत्पन्न करनेवाले व्यक्तिके लिए विषकी तरह खतरनाक है; अतः यदि वह उस मलमें सदा वर्तमान रहने वाले रोगोंके ग्राक्रमणसे बचना चाहता है, तो उसको नियमपूर्वक शीघ्रतासे इन निर्थं क पदार्थों से छुटकारा पा लेना चाहिये। हमें दूसरी बात सदाके लिये ग्रच्छी प्रकार समफ लेनी चाहिये कि सभी प्रकार के मांस-ग्राहारसे उत्पन्न ये निर्थंक मल पदार्थ सबसे ग्रधिक खतरनाक होते हैं। चिकित्सालय में प्रवेश पानेपर एक मांसाहारी रोगीको वस्ति (Enema), रेचक (purgative) या वमन करवानेवाली ग्रौषिध (emetic) या ये तीनों ही देना एक परिचारिका का प्रथम कर्तव्य होता है, जो ग्रमुचित नहीं है।

इंग्लैंडमें ग्रत्यधिक अस्वस्थ हो जानेवाले व्यक्तिके लिये जो साधारण भोजन है वह बहुत ही अस्वाभाविक तथा मूर्खतापूर्ण है। पाइचात्य लोगोंको उनके माता-पिता द्वारा—जिन्हें स्वयं भी इनकी अपेक्षा ग्रधिक ज्ञान नहीं है—यह शिक्षा दी जाती है कि स्वास्थ्य ग्रौर शक्तिके लिये मांस ही श्रेष्ठ आहार है। अब तक मद्य-मांस ही इसके लिये उपयुक्त समभे जाते रहे हैं, किन्तु ग्रब मद्य संबंधी भ्रमका निराकरण हो चुका है ग्रौर विश्वके बुद्ध-प्रधान ग्रौर सुसंस्कृत वर्गोंमें मांसकी श्रेष्ठताका भ्रम भी शिद्रतासे दूर होता जा रहा है। मध्यवर्गीय ग्रौर निम्न श्रेणीके लोग ही अस्वस्थ होनेपर चिकित्सालयों में ले जाये जाते हैं ग्रौर ग्रधिकतर ये लोग ही मांसाहारी होते हैं।

मैं जब कभी किसी मांसाहारी बीमारके लिये बुलाया जाता हूँ तो मैं सदा उसी नेगचारको पूरा करता हूँ। शरीरको ग्रधिक परिश्रमके बोभसे एवम् स्वयं विषोत्पादनकी क्रियासे मुक्त करनेके लिये सबसे पहिला काम यही है। इसके विपरीत मुक्ते शुद्धाहारी रोगियोंसे काम पड़ता है ग्रौर यदि उन्हें ४८ घन्टे पूर्व भी शौच हुग्रा रहता है तो भी मैं निश्चिन्त रहता हूँ क्योंकि ऐसे बीमारका मल घोड़ या गाय जैसा होता है ग्रौर उसमें सड़ांध ग्रौर विष पैदा नहीं हुग्रा करता। जब हम इन बातोंको स्पष्टतया ग्रहणकर लेते हैं तभी हम ग्रच्छी प्रकार समक्त सकते हैं कि प्रकृतिने हमारे शरीरको भीतरी जहरसे मुक्त रहनेके लिये हमें कितना ग्राइचर्यजनक यन्त्र प्रदान किया है।

यह यन्त्र प्राय: एक प्रकारसे निरापद (fool proof) है। किन्तु जिस तरह बहुतसे ऐसे व्यक्ति भी है जो जिस मोटर-गाड़ीको चलाते हैं उसीको खराब कर डालते हैं ग्रौर जिनके पास कोई भी घड़ी ग्रधिक काल तक ठीक समय नहीं देती, उसी तरह बहुत बड़ी संख्यामें ऐसे लोग भी हैं जो न तो अपने और न अपने बच्चोंके पाचन क्रिया वाले ग्रवयवोंके सुकुमार यन्त्रोंकी ठीकले सम्भाल कर सकते हैं।

सभी पीठकी रीढ़वाले प्राणियोंका निर्माण एक खोखली लम्बी नल्की (tube) के आधारपर हुआ है जिसके चारों ग्रोर स्नायु नाड़ियाँ ग्रीर रक्त परिवाहक ग्रंग (Circulatory organs) बने हैं। खायी हुई वस्तु इस नलीके एक ग्रोरसे प्रवेश करती है ग्रीर धीरे-धीरे ग्रागे बढ़ती हुई दूसरी ग्रोरसे निकल जाती है। जैसे-जैसे यह ग्रागे बढ़ती है, पाचक रसोंकी रासायनिक क्रिया इसपर होती रहती है और वे इसमेंके विविध पोषण-द्रव्यों को ग्रात्मसात कराते रहते हैं ग्रीर बचे हुए मैलेको वाहरकी ग्रोर ढकेलती रहती हैं। शरीरके जीवित पदार्थोंक ग्रनुपयोगी ग्रंश भी थोथी नलीके इस भागमें फेंके जाते हैं, जो ग्रागे जाकर मल-निकासी-नाली (Sewage tube) का रूप धारणकर लेती है ग्रौर क्रमशः ये चीजें इस नलीके ग्रन्त तक पहुँचा दी जाती हैं जहाँसे वे बाहर निकल जाती हैं। यह सिद्धान्त कितना सीधा-सादा है, प्रयोगमें कितना सुन्दर है; यह यंत्र प्रायः एक सौ वर्षोतक कार्य करते रहनेके लिये बनाया गया है, किन्तु मूर्ख लोग ग्रवधिके पूर्व ही इसको खराब कर डालते हैं।

इस यन्त्रके सुचार-रूपसे चालू रहनेके लिये मनुष्यके लिये उचित है

- १. इसके ढांचेकी बनावटके भ्रनुरूप ही इसमें खानेकी वस्तु डाले ;
- २. खाद्य पदार्थ ऐसी ग्रवस्थामें डाले जिससे इस पर यह यन्त्र सरलतासे ग्रपनी क्रिया कर सके;
- ३. इतनी मात्रामें डाले जो शरीरकी आवश्यकताके अनुकूल हो ;
- ४. इतने समयके अन्तरसे डाले कि जिससे इस यन्त्रको विश्वामका तथा कोई खराबी ग्रा गयी हो तो उसकी मरम्मतके लिये पर्याप्त ग्रवसर मिल सके।

मांसाहारका त्यागकर देना चाहिये। मांसाहार ग्रांतोंकी लयके समीचीन व्यापारमें क्कावट डालता है। मांसाहारसे जो अनुपयोगी पदार्थ (मल)

बचता है, वह सड़कर वड़ी ग्रांतोंकी पेशियों (Colonic muscles) में क्लावट डालनेवाला विषैला प्रभाव उत्पन्त करता है। मांसाहारके अनुपयोगी पदार्थों (Waster matter) से शरीर पर इतना भारी स्वाभाविक विषैला प्रभाव उत्पन्त होता है कि प्रकृतिने इसी कारण मांस-भक्षी पशुग्रोंकी बड़ी ग्रांत लम्बाईमें छोटी बनाई है जिससे कि सड़नेवाला अनुपयोगी पदार्थ (Decomposing matter) पशु-शरीरमें ग्रावश्यकतासे ग्रधिक एक क्षण भी ग्रौर न ठहर सके। प्रकृतिने ग्रास-पासमें रहनेवाले ग्रन्य प्राणियोंके लिये इसके हानिकारक भयंकर परिणामोंको इस बातसे भी स्पष्टतया जता दिया है कि उसने मांस-भक्षी पशुग्रोंको यह स्वाभाविक समक्ष दी है कि जिससे वे जमीनमें गढ़ा-सा खोदकर उसमें मल विसर्जन करते हैं ग्रौर फिर उसको ढँक देते हैं क्योंकि यह वस्तु जहाँ-तहाँ खुली पड़ी रहनेसे बड़ी हानिकारक है।

# पाश्चात्य संस्कृतज्ञोंकी नीयत

(परलोकगत श्रीभगवद्दत्तके 'Western Indologists : A Study in Motives' का हिन्दी अनुवाद)

योरोपवासियोंकी भारत एवं इसके प्राचीन साहित्यके प्रित ग्रिभिरुचि— संवत् १८१४ में पलासीका युद्ध हुग्रा जिसने भारतके भाग्यको ग्रवरुद्ध कर दिया । इस युद्धके पश्चात् वंगदेश ग्रंग्रेजोंके ग्राधिपत्यमें चला गया। संवत् १८४० में कलकत्ताके फोर्ट विलियम नामक ग्रंग्रेजी उपनिवेशमें सर विलियम जोन्स (Sir William Jones) प्रधान न्यायाधीश बना। उसने संवत् १८४६ में महाकवि कालिदास कृत 'शकुन्तला' नाटकका ग्रौर संवत् १८५१ में 'मनुस्मृति' का ग्रंग्रेजी ग्रनुवाद किया और इसी वर्ष जोन्सका देहान्त हो गया। जोन्सके किनष्ठ सहकारी सर हेनरी टामस कोलब्रूक (Sir Henry Thomas Colebrooke) ने संवत् १८६२ में ''आन दि वेदाज़'' (On the Vedas) नामक एक वेद-विषयक निवन्ध लिखा।

संवत् १८७१ में जर्मन देशके बोन विश्वविद्यालय (Bonn University) में ग्रागस्ट विल्हेल्म फान श्लेगल (August Wilhelm von Schlegel) प्रथम संस्कृत ग्रध्यापक बना। इसका भ्राता फीइड्रिश श्लेगल (Friedrich Schlegel) था। उसने संवत् १८६५ में "हिन्दुओं के वाङ्मय ग्रीर प्रज्ञापर" (Upon the Languages and Wisdom of the Hindus) नामक एक ग्रन्थ लिखा। दोनों भ्राताग्रोंने संस्कृतके प्रति ग्रगाध प्रेम दिखाया। ग्रागस्ट श्लैगलके साथ हर्न विल्हेल्म फान हम्बोल्ट (Hern Wilhelm von Humbolt) नामका एक ग्रौर संस्कृतका विद्वान सहयोगी बना। श्लैगलकी भगवद्गीताके कारण हम्बोल्टका ध्यान इसके ग्रध्ययनकी ग्रोर गया। संवत् १८८४ में उसने अपने एक मित्रको लिखा—"विश्वकी यह सम्भवतः ग्रगाध ग्रौर उच्चतम वस्तु हैं।" उसी

<sup>1.</sup> It is perhaps the deepest and loftiest thing the world has to show.

बचता है, वह सड़कर वड़ी ग्रांतोंकी पेशियों (Colonic muscles) में क्लावट डालनेवाला विषैला प्रभाव उत्पन्न करता है। मांसाहरिक अनुपयोगी पदार्थों (Waster matter) से शरीर पर इतना भारी स्वाभाविक विषैला प्रभाव उत्पन्न होता है कि प्रकृतिने इसी कारण मांस-भक्षी पशुग्रोंकी बड़ी ग्रांत लम्बाईमें छोटी बनाई है जिससे कि सड़नेवाला अनुपयोगी पदार्थ (Decomposing matter) पशु-शरीरमें ग्रावश्यकतासे ग्रधिक एक क्षण भी ग्रौर न ठहर सके। प्रकृतिने ग्रास-पासमें रहनेवाले ग्रन्य प्राणियोंके लिये इसके हानिकारक भयंकर परिणामोंको इस बातसे भी स्पष्टतया जता दिया है कि उसने मांस-भक्षी पशुग्रोंको यह स्वाभाविक समभ दी है कि जिससे वे जमीनमें गढ़ा-सा खोदकर उसमें मल विसर्जन करते हैं ग्रौर फिर उसको ढँक देते हैं क्योंकि यह वस्तु जहाँ-तहाँ खुली पड़ी रहनेसे बड़ी हानिकारक है।

# पाश्चात्य संस्कृतज्ञोंकी नीयत

(परलोकगत श्रीभगवद्दत्तके 'Western Indologists : A Study in Motives' का हिन्दी अनुवाद)

योरोपवासियोंकी भारत एवं इसके प्राचीन साहित्यके प्रित ग्रिभिरुचि संवत् १८१४ में पलासीका युद्ध हुग्रा जिसने भारतके भाग्यको ग्रवरुद्ध कर दिया । इस युद्धके पश्चात् वंगदेश ग्रंग्रेजोंके ग्राधिपत्यमें चला गया। संवत् १८४० में कलकत्ताके फोर्ट विलियम नामक ग्रंग्रेजी उपनिवेशमें सर विलियम जोन्स (Sir William Jones) प्रधान न्यायाधीश बना। उसने संवत् १८४६ में महाकवि कालिदास कृत 'शकुन्तला' नाटकका ग्रौर संवत् १८५१ में 'मनुस्मृति' का ग्रंग्रेजी ग्रनुवाद किया और इसी वर्ष जोन्सका देहान्त हो गया। जोन्सके कनिष्ठ सहकारी सर हेनरी टामस कोलब्रूक (Sir Henry Thomas Colebrooke) ने संवत् १८६२ में 'आन दि वेदाज़'' (On the Vedas) नामक एक वेद-विषयक निवन्ध लिखा।

संवत् १८७१ में जर्मन देशके बोन विश्वविद्यालय (Bonn University) में ग्रागस्ट विल्हेल्म फान श्लेगल (August Wilhelm von Schlegel) प्रथम संस्कृत ग्रध्यापक बना। इसका भ्राता फीइड्रिश श्लेगल (Friedrich Schlegel) था। उसने संवत् १८६५ में "हिन्दुओं के वाङ्मय ग्रीर प्रज्ञापर" (Upon the Languages and Wisdom of the Hindus) नामक एक ग्रन्थ लिखा। दोनों भ्राताग्रोंने संस्कृतके प्रति ग्रगाध प्रेम दिखाया। ग्रागस्ट श्लेगलके साथ हर्न विल्हेल्म फान हम्बोल्ट (Hern Wilhelm von Humbolt) नामका एक ग्रौर संस्कृतका विद्वान सहयोगी बना। श्लेगलकी भगवद्गीताके कारण हम्बोल्टका ध्यान इसके ग्रध्ययनकी ग्रोर गया। संवत् १८६४ में उसने अपने एक मित्रको लिखा—"विश्वकी यह सम्भवतः ग्रगाध ग्रौर उच्चतम वस्तु हैं।" उसी

<sup>1.</sup> It is perhaps the deepest and loftiest thing the world has to show.

कालमें प्रसिद्ध जर्मन दार्शनिक ग्रार्थर शोपेनहावर (Arthur Schopenhauer)(वि॰ सं॰ १८४५-१९१७) ने फ्रेंच लेखक ग्रङ्क्वेटिल दु पेरों(Anquetil du Perron) (वि॰ सं॰ १७८८-१८६२) द्वारा किया हुन्ना उपनिषदोंका लैटिन अनुवाद (वि० सं० १८५८-१८५६) पढ़ा जो शाहजादा दारा शिकोह द्वारा किये गये फारसी अनुवादसे किया गया था जिसको 'सीरे स्रकबर'— 'महत रहस्य' नाम दिया गया था। उसने उपनिषदोंके तत्वज्ञानसे ग्रत्यधिक प्रभावित होकर लिखा—'उपनिषद् मानव-ज्ञानकी सर्वोच्च उपज हैं।', 'इनमें प्रायः श्रेष्ठ मानवीय विचार निहित हैं । (ग्रनुवाद रूपमें) उपनिषदोंका ग्रध्ययन उनके लिये बहुत प्रेरणादायक तथा ग्रात्म-संतोषका साधन बना। उन्होंने लिखा है—"(मूल ग्रन्थके पाठके ग्रतिरिक्त) इसका पाठ संसारमें उपलब्ध या संभाव्य सबसे अधिक सन्तोषप्रद और ग्रात्मोननितका साधन है, यह मेरे जीवनके लिये सान्त्वनादायक रहा है, ग्रौर यह मेरी मृत्युके समय भी सान्त्वनादायक होगा ।" यह सुविख्यात है कि लैटिन 'ग्रौपनेखत्' (उपनिषद्) ग्रन्थ उनकी मेजपर सदा रक्खा रहता था, श्रौर सोनेके पूर्व वे नित्य नियमपूर्वक इसका ग्रध्ययन किया करते थे। उन्होंने बताया कि संस्कृत साहित्यका उद्घाटन हमारी शताब्दीकी सबसे बड़ी देन है ग्रौर भविष्यवाणी की कि उपनिषदका दर्शन ग्रौर ग्रध्यात्म-ज्ञान पश्चिम का सर्वेत्रिय धर्म हो जायगा ।

उस ग्रिभरिचका परिणाम—ऐसे लेखोंने संस्कृत सीखनेके लिये अनेक जर्मन विद्वानोंको ग्रिधकाधिक ग्रार्काषत किया तथा उनमेंसे ग्रनेक व्यक्ति भारतीय संस्कृतिको बहुत श्रद्धास्पद समभने लगे। जर्मन अध्यापक विण्टरनिज् (Prof. Winternitz) ने उनकी सम्मानकी भावना एवं उत्साहका निम्नलिखित शब्दोंमें वर्णन किया है—

<sup>1.</sup> The production of the highest human wisdom, ('A History of Indian Literature' by M. Winternitz, English translation, Vol. I, p 20, 1927 A.D. edition).

<sup>2.</sup> Almost superhuman conceptions. Ibid, p. 266,

<sup>3.</sup> It is the most satisfying and elevating reading (with the exception of the original text) which is possible in the world; it has been the solace of my life and will be the solace of my death. Ibid. p: 267.

"जब पश्चिमने सर्वप्रथम भारतीय वाङमयका परिचय प्राप्त किया तब भारतसे स्रानेवाली प्रत्येक साहित्यिक कृतिको वहाँके लोग सहज ही स्रति प्राचीन युगकी मान लेते थे। वे भारतको मनुष्य जातिका अथवा कमसे कम मानव-सभ्यताका उद्गम-स्थल मानते थे।"

यह प्रभाव स्वाभाविक एवं सहज स्फुरित था। यह सत्यपर ग्राधारित था एवं पक्षपातरहित था। भारतीय ऋषियों द्वारा प्रदत्त ऐतिहासिक तथ्य सत्य एवं ग्रदूट परम्परापर ग्राधारित थे। उनके दार्शनिक सिद्धान्त जीवनके उद्गम एवं रहस्यों को गहराइयों में पैठे हुए थे तथा शाश्वत नियमों के प्रतिपादक थे। पाश्चात्य जगत्को जब पहले-पहल इनका पता लगा तब ग्रनेक धर्मान्धता रहित विद्वान इनको विलक्षण सच्चाई और गहन ज्ञानसे बहुत प्रभावित हुए तथा जाति ग्रौर मतके दवावमें न ग्राकर वे लोग मुक्त कण्ठसे इनकी प्रशंसा किया करते थे। ईसाई जगतके सच्चे व्यक्तियों द्वारा की गयी ग्रनुरागपूर्ण प्रशंसाने ऐसे यहूदियों तथा ईसाई पादिरयों के बीच एक तहलका मचा दिया जो स्वयं ग्रपने धर्मशास्त्रों एवं परम्पराग्रों के वास्तविक ग्रथंस भी उतने ही ग्रनभिज्ञ थे जितने भारतीय धर्मशास्त्र एवं परम्परासे। वे केवल पौलीन ईसाइयत (Pauline Christianity) के रूढ़िवादी ग्रादेशों के ही माननेवाले थे जिन्होंने उनको अन्य धर्मों प्रति असहिष्णु बना दिया था।

- 1. When Indian literature became first known in the West, people were inclined to ascribe a hoary age to every literary work hailing from India. They used to look upon India as something like the cradle of mankind, or atleast of human civilization.

  कलकत्ता विश्वविद्यालयमें व्याख्यान, मास अगस्त, सन् १६२३, पृष्ठ ३.
- 2. Intolerance was inherent in all the Semitic faiths and was responsible for the crusades, jehads and the institution of the Inquistion. A century before the time of Schopenhauer, Voltaire also fell a victim to the wrath of the clergy. He wrote an Essay on the Morals and the Spirit of the Nations, which offended everybody because it told the truth. It spoke highly of the ancient cultures of India, China and Persia and relegated Judea and Christendom to a relatively inferior position. How could then he be forgiven for 'so unpatriotic a revelation'? He was exiled for a second time by the French Government. (Vide 'The Story of Philosophy', by Will Durant. p. 241.)

### प्राचीन भारतमें गोमांस-एक समीक्षा

22

हमारे इस निष्कर्षके औचित्यका निर्णय हेनरिश जिमर (Heinrich Zimmer) के निम्नलिखित कथनसे हो सकता है—

''पारचात्य विद्वानोंमें शोपेनहावर (Schopenhauer) पहले व्यक्ति ये जिन्होंने योरोपके ईसाई वातावरणके भारी मेघगर्जनके बीच भी इस सम्बन्ध में अनुलनीय ढंगसे उद्घोष किया।''

हठधर्मी ईसाई ग्रौर यहूदियोंके मतसे सहमत न होनेवालोंके प्रति ये लोग कितने प्रतिशोध परायण होते हैं—यह बात 'The Religion of the Semites' के लेखक तथा Free Church College, Aberdeen, में यहूदी भाषा के प्राध्यापक राबर्टसन् स्मिथ (Robertson Smith—1846-94 A.D.) के भाग्य-निर्णयसे भलीभांति स्पष्ट हो जाती है। ग्रपने वैज्ञानिक श्रनुसन्धानोंके सम्बन्धमें स्पष्ट ग्रौर निर्भीक कथनके लिये उनको जो दण्ड भोगना पड़ा, उसका वर्णन लेविस स्पेंस (Lewis Spence) द्वारा निम्न शब्दोंमें किया गया है—

"बाइबलपर विश्वज्ञानकोषमें प्रकाशित लेखके प्रचलित मतसे विरोधी होनेके कारण उनपर नास्तिकताका मुकदमा चलाया गया जिसमें तो वे निर्दोष बताकर मुक्त कर दिये गये। किन्तु 'एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका (१८८०)' में प्रकाशित 'यहूदी भाषा ग्रौर साहित्य' पर लिखे गये एक ग्रौर लेखके लिये उनको कालेजके प्रोफेसर पदसे ग्रलग हटना पड़ा²।"

<sup>1. &</sup>quot;He (Schopenhauer) was the first among the Western people to speak of this in an incomparable manner—in that great cloud-burst of European-Christian atmosphere." (New Indian Antiquary, April 1938, p. 67)

<sup>2. &</sup>quot;The heterodox character of an encyclopaedia article on the Bible led to his prosecution for heresy, of which charge, however, he was acquitted. But a further article upon 'HEBREW LANGUAGE AND LITERATURE' in the Encyclopaedia Britannica (1880) led to his removal from the professoriate of the College." (An Introduction to Mythology New York,—Date of publication not indicated in the book.)

### प्रधान कारण

यहूदी और ईसाई पक्षपात — प्राचीन यहूदी ग्रायों के वंशज थे। उनकी धारणाएँ ग्रायों जैसी ही थीं। उनके आदिपुरुष जिनको वे 'आदम' कहते हैं, मानव-जातिको उत्पन्न करनेवाले 'ब्रह्मा' थे। यह यहूदी नाम 'ग्रात्मभू' से बना है जो ब्रह्माकी ही एक उपाधि है। ब्रह्माने सृष्टिके ग्रारम्भमें सब पदार्थोंका ग्रौर जीवोंका नामकरण किया (मनु० १.२१)। यहूदियोंकी परम्पराके ग्रनुसार आदमने भी ऐसा ही किया था। प्रत्येक जीवको ग्रादमने जो नाम दिया वही उसका नाम पड़ गया। ग्रागे चलकर ये यहूदी लोग ग्रपने इतिहास ग्रौर पूर्वजोंको भूल गये ग्रौर वे संकीर्ण विचार के हो गये। वे ग्रपने ग्रापको सभी जातियोंसे प्राचीनतम मानने लगे। सन् १६५४ ईस्वीमें ग्रायरलैण्डके ग्राकिवशप उशर (Archbishop Usher) ने हढ़तासे यह घोषणा की कि उनके शास्त्रोंके ग्रध्ययनने यह प्रमाणित किया है कि सृष्टिका निर्माण ईसासे ४००४ वर्ष पूर्व हुग्रा है। ग्रतः सत्रहवीं शताब्दी के ग्रन्तसे योरोपके लोगों द्वारा यह कालनिर्णय स्वीकार कर लिया गया ग्रौर दे यह विश्वास करने लगे कि ग्रादमकी उत्पत्ति ईसासे ४००४ वर्ष पूर्व हुई थी। दे यह विश्वास करने लगे कि ग्रादमकी उत्पत्ति ईसासे ४००४ वर्ष पूर्व हुई थी। दे

ग्रतः ग्राधुनिक यहूदियों एवं स्वमताभिमानी ईसाइयोंकी बहुत बड़ी संख्याके लिये विशेषतः बहुत-से संस्कृतके ग्रध्यापकोंके लिये इन विचारोंसे सामञ्जस्य करना बड़ा कठिन हो गया कि कोई जाति या सभ्यता

Duncan Macnaughton in his 'A scheme of Egyptian Chronology', London, 1932, writes:—

"It is strange to see that Wilkinson placed Menes (or Manu, the first king of Egypt) as low as 2320, but it is to be remembered that in 1836 English speaking scholars were still under the hypnotic influence of Usher's Biblical Chronology. The dates printed in the Bible were regarded as sacred, and it was positively wicked to disregard them." (p.6).

<sup>1.</sup> that the Jewish race is by far the oldest of all these. ('Fragments of Magasthenes,' p. 103)

<sup>2. &</sup>quot;Archbishop Usher's famed chronology, which so long dominated the ideas of man......" (Historians History of the World, Vol.I, 1908, p. 626.)

उन लोगों के द्वारा माने गये आदमके कालसे भी प्राचीन हो सकती है। भारतवर्षके साहित्य और सभ्यताके सम्बन्धमें उदार मनोवृत्तिवाले साथी विद्वानों द्वारा कथित अति प्राचीनतासे वे लोग क्रुद्ध थे और विशेष करके मानवकी आदि उत्पत्तिके सम्बन्धमें तो बहुत ही क्रुद्ध थे। इस बद्धमूल पक्षपातके सम्बन्धमें ए एच सेस (A. H. Sayce) महोदय लिखते हैं—

"परन्तु जहाँ तक मानव-इतिहासका सम्बन्ध है वह ग्रभी तक हमारी बाइबलमें लिखी गयो तिथियोंकी परिधि तक ही सीमित था। मनुष्यकी ग्रवाचीन उत्पत्तिकी यह पुरानी घारणा ग्राज भी उन लोगोंमें प्रबल है जहाँ हमें इसके होनेकी सबसे कम ग्राशा थी ग्रौर तथाकथित समालोचक इतिहासज्ञ प्राचीन इतिहासकी तिथियोंकी प्राचीनताको कम करनेके लिये यत्नशील रहते हैं। एक ४००४ वर्ष ईसापूर्व ग्रथवा उसके ग्रासपास संसारका मृजन हुग्रा था—इस विश्वासमें पली पीढ़ीके लिये यह विचार विश्वास योग्य ग्रौर बुद्धिगम्य नहीं है कि मनुष्य ग्रपनी जातिको एक लाख वर्षसे भी पुरानी माने ।"

इस बद्धमूल पक्षपातके ग्रस्तित्वके अनेक प्रमाण उपस्थित किये जा सकते हैं। किन्तु मानव-शरीर-रचना-शास्त्रके बहुत बड़े विशेषज्ञके उपर्युक्त उद्धरण ही पर्याप्त हैं।

योरोपमें संस्कृतका ग्रध्ययन चालू रहा और पनपता गया तथा-साथ ही साथ गिरजाघरोंके पादिरयोंके प्रकृतिगत पूर्वाग्रहकी उत्तेजनासे प्रभावित होकर विद्वानोंकी राय और निर्णय बहुत शीघ्रताके साथ विकृत होते चले गये। वि० सं० १८५८ से १८६७ तक इयूजेन बर्नफ (Eugene Burnouf) नामक एक संस्कृतका ग्रध्यापक फांसमें था। उसके दो जर्मन शिष्य थे—(१) रूडल्फ राथ (Rudolph Roth) ग्रौर (२) मैक्समूलर (Max Muller) जिसने बादमें योरोपके संस्कृतके विद्वानोंमें ग्रच्छी ख्याति प्राप्त की थी।

श्राक्सफोर्ड विश्वविद्यालयमें संस्कृतके बोडन प्राध्यापक-पद (Boden Chair) का उद्देश्य — संवत् १८६० में होरेस हेमन बिलसन (Horace Hayman Wilson) ग्राक्सफोर्डमें वोडनके नामसे स्थापित संस्कृतके प्राध्यापक पदपर आसीन हुए। उसके उत्तराधिकारी प्राध्यापक एम० मोनियर विलियम्स (Prof. M. Monier Williams) ने कर्नल बोडन द्वारा जिस उद्देश्यसे इस प्राध्यापक पद (chair) की स्थापना की गयी थी उसकी ग्रोर निम्नलिखित शब्दोंमें विद्वानोंका ध्यान ग्राक्षित किया है —

"मुफ्ते इस तथ्यकी ग्रोर ध्यान दिलाना आवश्यक प्रतीत होता है कि मैं बोडन प्राध्यापक-पदका दूसरा ही ग्रधिकारी हूँ। इसके संस्थापक कर्नल बोडनने ग्रत्यन्त स्पष्ट शब्दोंमें दिनाँक १५ग्रगस्त सन् १८११, संवत् १८६८ के अपने इच्छा-पत्र (will) में लिखा है कि उसकी इस उदारतापूर्ण भेंटका विशेष उद्देश्य यंह था कि ईसाई धर्मग्रन्थोंका संस्कृतमें ग्रनुवाद किया जाय, जिससे भारतीयोंको ईसाई बनानेके काममें हमारे देशवासी ग्रागे बढ़ सकेंं।"

<sup>1.</sup> I must draw attention to the fact that I am only the second occupant of the Boden chair, and that its Founder, Colonel Boden, stated most explicitly in his will (dated August 15, 1811 A D.) that the special object of his munificent bequest was to promote the translation of Scriptures into Sanskrit, so as 'to enable his countrymen to proceed in the convertion of the natives of India to the Christian religion.' (Sanskrit English Dictionary, by Sir Monier Williams, preface, p ix).

## पूर्वीप्रहयुक्त संस्कृतके प्राध्यापक

१. प्रोफेसर विल्सन (Prof. Wilson) एक बहुत भले व्यक्ति थे, किंतु जिस पदपर वे म्रासीन थे उसके संस्थापक द्वारा निर्दिष्ट उद्देश्योंके प्रति उनका कुछ कर्तव्य था। ग्रतः उन्होंने एक पुस्तक लिखी—हिन्दुम्रोंकी धार्मिक ग्रौर दार्शनिक पद्धति तथा इस पुस्तककी रचनाका आशय स्पष्ट करते हुए वे कहते हैं—

"ये व्याख्यान उन उम्मीदवारोंकी सहायताके निमित्त लिखे गये थे जो हिंदुओंकी धार्मिक पद्धतिका भलीभांति खण्डन करके हेलीबरी (Haileybury) के प्रसिद्ध वयोवृद्ध सज्जन एवं संस्कृतके बड़े विद्वान जान म्यूर (John Muir) द्वारा प्रदत्त दो सौ पौण्डका पारितोषिक प्राप्त कर सकें ।"

इस उद्धरणसे सुविज्ञ पाठक स्वयं निर्णय कर सकते हैं कि योरोपियन विद्वानोंके उद्देश्य कहाँ तक वैज्ञानिक कहे जा सकते हैं, उनके द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त कहाँ तक पक्षपातरिहत एवं विश्वसनीय कहे जा सकते हैं और उनके द्वारा खींचा हुग्रा भारतीय सभ्यता ग्रौर संस्कृतिका चित्र कहाँ तक यथार्थ हो सकता है।

- २. उसो प्रकारको पक्षपातपूर्ण मनोवृत्तिको लेकर पूर्वोल्लिखित विद्वान् रूडोल्फ राथ (Rudolph Roth) ने वैदिक साहित्य और वेदके इतिहास पर जर्मन भाषामें एक सोह्रेश्य निवन्ध (thesis Zur Literatur und Geschichte Des Veda) लिखा। संवत् १६०६ में उनके द्वारा सम्पादित यास्कका निरुक्त नामक ग्रन्थ प्रकाशित हुग्रा था। उन्हें अपनी विद्वत्ताका तथा जर्मन जातिकी प्रतिभाका ग्रत्यन्त ग्रभिमान था। उन्होंने
  - 1. The Religious and Philosophical system of the Hindus.
- These lectures were written to help candidates for a prize
  of £ 200 given by John Muir, a well known old Haileybury
  man and great Sanskrit scholar,—for the best refutation of
  the Hindu Religious system. (Eminent Orientalists, Madras,
  p. 72)
- 3, English translation published in the Journal of the Asiatic Society of Bengal, 1847.

जोर देकर लिखा है कि जर्मनीके भाषाविज्ञान-शास्त्रकी सहायतासे वेदमन्त्रों का निरुक्तकी अपेक्षा अधिक अच्छा अर्थ किया जा सकता है<sup>1</sup>। इस प्रकार की और भी कई अभिमानपूर्ण अनर्गल बातें उन्होंने लिखी थीं।

३ उसी प्रकारके पाण्डित्याभिमानका प्रदर्शन व्हिटने (W. D. Whitney) के लेखमें भी पाया जाता है— ''एकमात्र जर्मन विचारकों द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त ही वेदको यथार्थ रूपमें समभनेके लिये हमें सदा मार्ग दिखा सकते हैं ।''

४. मैक्समूलर — मैक्समूलर ग्रौर राथ (Roth) सहपाठो थे। मैक्समूलरके ऊपर उनके ग्रध्यापककी छाप तो थी हो, इसके ग्रितिरक्त, २६ दिसम्बर १६५५ ईस्वीके दिन लार्ड मकोले (Lord Macaulay) के साथ उनकी भेंटने भी उनके भारत-विरोधी विचारोंको उभाड़नेमें बड़ा भारी काम किया। मैक्समूलर एक घण्टे तक मूक रहे जबिक लार्ड मकोले जैसे इतिहासज्ञ एकदम विरोधी विचारोंको धारा प्रवाह उड़ेलते रहे और वे उसके सम्मुख एक शब्द भी नहीं बोल सके। इसके बाद उनको छुट्टी मिली। मैक्समूलर लिखते हैं—''मैं बहुत उदास होकर साथ ही ग्रपेक्षाकृत ग्रधिक समभदार बनकर ग्राक्सफोर्ड लौटा।''

मैक्समूलरका नाम भारतीय जनतामें दो कारणोंसे बहुत प्रसिद्ध हुग्रा, जिसमें पहला कारण था उनका श्रनेक बड़े-बड़े ग्रंथोंका रचना-कार्य एवं दूसरा था स्वामी दयानन्द सरस्वती (वि॰सं॰ १८८१-१६४०) द्वारा जनताके सम्मुख दिये व्याख्यानों ग्रौर लेखोंमें उनके विचारोंकी तीव्र ग्रालोचना। मैक्समूलरके विचार उनके निम्नलिखित वचनोंसे जाने जा सकते हैं—

- राथने निरुक्तके संस्करणकी ग्रपनी भूमिकामें ऐतरेय ब्राह्मणके एक वचनका भ्रष्ट ग्रनुवाद किया है। गोल्डष्टकरने उस ग्रशुद्ध ग्रनुवाद पर लिखते हुए राथकी योग्यतापर उपहास किया है।
- 2. "The principles of the 'German School' are the only ones which can ever guide us to a true understanding of the "Veda". (American or. Soc. Proc.. Oct., 1867.)
- 3. "I went back to Oxford, a sadder man and a wiser man". (Life and Letters of Max Muller, Vol. I Ch. IX Page 171.

### प्राचीन भारतमें गोमांस-एक समीक्षा

- (क) ''इतिहास ऐसी शिक्षा देता हुग्रा प्रतीत होता है कि सम्पूर्ण मानव जातिको धीरे-धीरे शिक्षित होना स्रावश्यक है ताकि समय पाकर वह ईसाई धर्मकी सच्चाईको हृदयंगम कर सके। उच्चतर सच्चाईके प्रकाशको तत्परतासे ग्रहण करनेके पूर्व मनुष्यको तर्ककी सब भ्रांतियोंसे छुटकारा पाना पड़ेगा। विश्वके प्राचीन धर्म प्रकृतिके दूध (शिशु भोज) मात्र थे. समय पाकर जिसका स्थान जीवन-घारणके लिये आवश्यक रोटीको ग्रहण करना था : । बौद्ध-धर्म ग्रार्य-जगत्की सीमाग्रोंसे कहीं दूर तक फैल चुका है तथा हमारी सीमित हिष्टको ऐसा लग सकता है मानो मानव जातिके एक बहुत बड़े भागमें इसने ईसाई धर्मके प्रचारकी प्रगतिको अवरुद्ध कर दिया है। किन्तू उस नियन्ताकी दृष्टिमें, जिसके लिये हजारों वर्षका समय एक दिवसके तृल्य है, विश्वके पुराने धर्मोंकी तरह बौद्ध-धर्मने भी ग्रपनी भूलों द्वारा ईश्वरकी सच्चाईको जाननेके लिये मानव-हृदयको स्रमिट भूखको बढ़ा-कर एवं पुष्ट करके ईसाके लिये मार्ग प्रशस्त करनेका ही काम किया है1।"
- "History seems to feach that the whole human race required 1. a gradual education before, in the fullness of time, it could be admitted to the truths of Christianity. All the fallacies of human reason had to be exhausted, before the light of higher truth could meet with ready acceptance. The ancient religions of the world were but the milk of nature, which was in due time to be succeeded by the bread of life ....... 'The religion of Buddha has spread far beyond the limits of the Aryan world, and to our limited vision it may seem to have retarded the advent of Christianity among the large portion of human race. But in the sight of Him with whom a thousand years are but as one day, that religion, like the ancient religions of the world, may have but served to prepare the way of Christ, by helping, through its very errors to strengthen and to deepen the ineradicable yearning of the human heart after the truth of God." (History of Ancient Sanskrit Literature, p.32, 1860)

रेड

- (ख) ''वैदिक सूक्तोंकी एक बड़ी संख्या बालकों जैसी अत्यन्त मूर्खता-पूर्ण है साथ ही जटिल, निम्नकोटिकी ग्रौर साधारण है<sup>1</sup>।''
- (ग) ''इतना ही नहीं, उन वेदोंमें साधारण, स्वाभाविक और वालकोचित विचारोंके साथ-साथ बहुत-सी ऐसी वातें हैं जो हमको आधुनिक ग्रथवा दूसरी श्रेणीकी एवं तृतीय श्रेणीकी-सी लगती है<sup>2</sup>।"

विश्वके अत्यन्त प्राचीन एवं उच्च वैज्ञानिक धर्मग्रंथके सम्बन्धमें ऐसे नास्तिकतापूर्ण निन्दा करनेवाले वाक्य ईसाई-मतके हठधर्मी निम्नश्रेणीके पूजक अथवा अधर्मी नास्तिक व्यक्तिके मुँहसे ही निकल सकते हैं। मैक्समूलर ईसाई-धर्मके अतिरिक्त प्रत्येक धर्मका, जिनको वह अविकसित माना करता था, हृदयसे कट्टर विरोधी था। उसकी धार्मिक असहिष्णुता जर्मन विद्वान् डा॰ स्पीगल (Dr. Spiegel) के एक लेखपर उसके द्वारा की गयी कड़ी आलोचनासे स्पष्ट है जिसमें डा॰ स्पीगलने यह बताया है कि विश्व-सृजनके लिये बाइबलकी कल्पना प्राचीन पारसी या ईरानी धर्मका अनुकरण है। इस वक्तव्यसे मर्माहत होकर मैक्समूलरने लिखा है—

"डा॰ स्पीगलके सहरा लेखक को जानना चाहिये कि वह कोई दयाकी ग्राशा नहीं कर सकता। इतना ही नहीं, उसे स्वयंके लिये किसी प्रकारकी दयाकी इच्छा न करके बाइबलकी आलोचनाकी तूफानी तरंगोंमें जो युद्ध-पोत उसने उतारा है, उसके विरुद्ध उसे गोलोंकी भारी बौछारकी ही ग्राशा करनी चाहिये ।" (कितने ग्राइचर्यकी

- 1. "Large number of Vedic hymns are childish in the extreme; tedious, low, commonplace, ('Chips from a German workshop', second edition, 1866, p. 27.)
- 2. "Nay, they (the Vedas) contain, by the side of simple, natural, childish thoughts, many ideas which to us sound modern, or secondary and tertiary." (India, what can it teach us', Lecture IV. p. 118, 1882.)
- 3. "A writer like Dr. Spiegel should know that he can expect no mercy; nay, he should himself wish for no mercy, but invite the heaviest artillery against the floating battery which he has launched in the troubled waters of Biblical criticism"

('Chips from a German Workshop', Genesis and the Zend Avesta, p. 147.)

बात है कि डा॰ स्पीगलके विचारोंका इस सीमा तक हमारा इतिहास भी समर्थन करता है कि बाइबलकी उक्तियाँ परिसया, बबीलोनियन तथा मिश्रके धर्मग्रन्थोंसे उद्भूत हैं जिनमें विश्वके प्राचीन इतिहासके अनुसार ये बातें वेदोंसे ली गयी बतायी गयी हैं।)

पाश्चात्य वैज्ञानिक पाण्डित्यके भक्त मैक्समूलर एक अन्य स्थानपर लिखते हैं—

"यदि इन सब बातों के होते हुए भी, बहुत-से ग्राशावादी लोग, बड़े विश्वासके साथ पारिसयों का धर्मान्तर करने की बहुत बड़ी ग्राशा करते हैं, तो इसका कारण यह है कि ग्रनजानमें ही क्यों न हो, पारिसी लोग पहले से ही मूल विषयों में ईसाई धर्मके अने पिवत्र सिद्धान्तों के यथासंभव निकट ग्रा चुके हैं। पारिसी लोग 'जेन्द ग्रवेस्ता' को पढ़कर देखें, जिसमें वे लोग ग्रपने विश्वासका दावा करते हैं, तो उन्हें पता लगेगा कि उनका मत ग्रव यस्न (Yasna) वेण्डिडड (Vendidad) ग्रौर विसपेरेड (Vispered) का मत नहीं है। यदि समालोचनात्मक रूपसे व्याख्या की जाय तो पुरातन जगत सम्बन्धी वृहत् ज्ञान-भण्डारमें इतिहासकी सामग्री के रूपमें इन ग्रन्थों का सदा प्रमुख स्थान रहेगा। किन्तु धार्मिक-विश्वासकी ग्राप्तवाणी के रूपमें ग्रब ये ग्रप्तवालित हैं, और इस युगमें तो यह केवल भ्रमोत्पादक हैं। ''

<sup>1.</sup> If in spite of all this, many people, most expectant to Judge, look forward with confidence to the conversion of the Parsis, it is because, in the most essential points, they have already, though unconsciously approached as near as possible to the pure doctrines of Christianity. Let them but read Zend-Avesta, in which they profess to believe, and they will find that their faith is no longer the faith of the Yasna, the Vendidad and the Vispered. As historical relics, these works, if critically interpreted, will always retain a pre-eminent place in the great library of the ancient world. As oracles of religious faith, they are defunct, and a mere anachronism in the age in which we live. ('Chips from a German Workshop' The modern Parsis. p. 180.)

सरसरी नजरसे देखनेपर भी इन पंक्तियों में ईसाई-धर्मोन्मादके लक्षण स्पष्ट दोख पड़ते हैं। यदि भारतीय संस्कृतिको मैक्समूलर सरीखे धर्मान्ध व्यक्तिकी लेखनीसे यदाकदा प्रशंसा मिली है तो वह केवल उस संस्कृतिकी अनुपम महत्ता ग्रौर श्रेष्ठताके कारण मिली है।

मैक्स-मूलर और जकोलियट (Max Muller and Jacolliot)— चन्दननगरके प्रधान न्यायाधीश फेञ्च विद्वान् लुई जकोलियट (Louis Jacolliot) ने संवत् १६२६ में 'La Bible dans L'inde' (भारतमें बाइबल)नामक ग्रन्थ लिखा। अगले वर्ष उसका ग्रंग्रेजी ग्रनुवाद भी प्रकाशित हुग्रा। उस ग्रन्थमें विद्वान् लेखकने सिद्ध किया है कि संसारको सभी प्रधान विचारधारायें प्राचीन आर्य विचारधारासे निकलीं हैं। उसने भारत भूमिको मानवता को जन्मदात्री (Cradle of Humanity) बताया है—

"प्राचीन भारत भूमि! मानवताकी जन्मदात्री! नमस्कार। पूजनीय मातृभूमि!—जिसको शताब्दियोंसे होनेवाले नृशंस ग्राक्रमणोंने ग्रभी तक विस्मृतिकी धूलके नीचे नहीं दबाया, तेरी जय हो। श्रद्धा, प्रेम, काव्य एवं विज्ञानकी पितृभूमि! तेरा ग्रभिवादन। हम ग्रपने पाइचात्य भविष्यमें तेरे ग्रतीतके पुनरागमनका जय-जयकार मनावें।"

मक्समूलरको यह पुस्तक बहुत बुरी लगी । उसने इसकी स्रालोचनामें लिखा है—"लेखक भारतीय ब्राह्मणोंसे प्रभावित प्रतीत होता है ।"

मेनसमूलरके पत्र—िकसीके व्यक्तिगत पत्र उसके हार्दिक भावोंका सच्चा चित्रण करते हैं। अपने सम्बन्धियों ग्रौर मित्रोंको लिखे गये पत्रोंमें व्यक्ति ग्रपने ग्रांतरिक भावोंका प्रकाश करता है। ऐसे पत्र उस व्यक्तिकी वास्तविक प्रकृति तथा चरित्रको जाननेमें बड़े सहायक होते हैं। सौभाग्यसे

- 1. "Land of ancient India! Cradle of humanity, hail! Hail, revered motherland, whom centuries of brutal invasions have not yet buried under the dust of oblivion. Hail, Fatherland of faith of love, of poetry and of secience; may we hail a revival of thy past in our Western future." (Refer to quotation from Winternitz in para 3 from the beginning of this chapter-Probably Winternitz refers to Jacolliot.)
- 2. "The author seems to have been taken in by the Brahmins in India".

मैक्समूलरके अनेक पत्रोंका संग्रह दो खण्डोंमें छपा है<sup>1</sup>। इन पत्रोंके कुछ उद्धरण उस व्यक्तिके मनका दिग्दर्शन करानेके लिये पर्याप्त होंगे जिसको पश्चिममें अपने संस्कृत-ज्ञान तथा पक्षपात रहित निष्कर्षोंके लिये बड़ी प्रशंसा प्राप्त है।

(क) सन् १८६६ (वि॰ संवत् १६२३) के एक पत्रमें वे ग्रपनी पत्नी को लिखते हैं—

"वेदके अनुवादका मेरा यह संस्करण उत्तरकालमें भारतके भाग्यपर पर्याप्त प्रभाव डालेगा।.....यह उनके धर्म का मूल है। मैं निश्चयपूर्वक अनुभव करता हूँ कि गत तीन सहस्र वर्षों से वेदों से उद्भूत सब कुछको उन्मूलन करनेका एकमात्र उपाय है कि उन्हें उनके धर्म का मूल कैसा है—यह बताया जाय ।

(ख) एक दूसरे पत्रमें वे अपने पुत्रको लिखते हैं-

''क्या तुम बताग्रोगे कि वह एक कौन-सी पवित्र पुस्तक है जो संसारकी ग्रन्य सभी पुस्तकोंसे श्रेष्ठ है ?.....मैं कहता हूँ कि 'न्यू टेष्टामेण्ट' ही ऐसा ग्रन्थ है। इसके पश्चात् मैं कुरान-को स्थान देता हूँ जो नैतिक शिक्षामें न्यू टेष्टामेण्ट के रूपांतरसे ग्रिधक कुछ नहीं है। इसके पश्चात् मेरे मतके ग्रनुसार क्रमशः 'ग्रोल्ड टेष्टामेण्ट', 'दक्षिणीय बौद्ध त्रिपिटक', 'दी टाग्रोटे किंग ग्रॉफ लाग्रोट्जे', 'दि किंग ग्रॉफ कन्प्यूसियस', 'वेद' ग्रौर 'ग्रवेस्ता' हैं ।

1. Life and letters of Frederich Max Muller, Two vols.

2. "......This edition of mine and the translation of the Veda will hereafter tell to a great extent on the fate of India,..... It is the root of their religion and to show them what the root is, I feel sure, is the only way of uprooting all that has sprung from it during the last three thousand years." (Vol. I

Ch. XV page 346)

3. "Would you say any one sacred book that is superior to all others in the world?.....I say, the New Testament, After that, I should place the Koran, which in its moral teachings, is hardly more than a later edition of the new Testament. Then would follow according to my opinion the old Testament, the Southern Buddhist Tripitaka, the Taote King of Laotze, the King of Confucius, The Veda and the Avesta.' (Vol. II Ch.XXXII Page 339)

- (ग) १६ दिसम्बर सन् १८६८ (वि० संवत् १६२५) के दिन भारत सचिव, ड्यूक ग्राफ ग्रागीइल (Duke of Argyl) को वे एक पत्रमें लिखते हैं—
  - "भारतका प्राचीन धर्म नष्टप्राय है, ग्रौर यदि ईसाई धर्म उसका स्थान नहीं लेता तो यह किसका दोष होगा ?"
- (घ) २६ जनवरी सन् १८८२ (वि॰ संवत् १६३६) के दिन उसने बैरामजी मालावारी (Bairamji Malabari) को लिखा है—
  - "मैं यह बताना चाहता हूँ … केवल पाइचात्य वा ईसाई हिष्टकोणसे नहीं, अपितु ऐतिहासिक हिष्टसे देखा जाय कि प्राचीन (वैदिक) धर्मका वास्तविक ऐतिहासिक मूल्य क्या है। परन्तु जब तुम इस (वैदिक धर्म) में वाष्प यन्त्र, विद्युत और पाइचात्य दर्शन तथा आचारकी खोज करते हो, तो तुम इसको इसके वास्तविक स्वरूपसे वंचित कर देते हो ।"
- (ङ) मैक्समूलर महोदय तो इतने निर्भीक ग्रौर ढीठ होने लगे थे कि उन्होंने भारतीयोंपर खूब रोव गांठना ग्रारम्भ कर दिया था जो उनके द्वारा ब्रह्म समाजके श्री एन.के. मजूमदारको लिखे गये निम्न पत्रसे स्पष्ट है—
  - "तुमको ग्रौर तुम्हारे देशवासियोंको स्पष्ट रूपसे क्राइस्टका अनुयायी बननेमें बाधक क्या प्रमुख कठिनाइयाँ हैं सो मुभे बतायी जायाँ। मैंने तथा मेरे साथ सहमत ग्रन्य ग्रनेक लोगोंने किस प्रकार उन कठिनाइयोंको सुलभाया है उसको बताऊँगा ग्रौर ग्रपनी तरफसे
- 1. "The ancient religion of India is doomed and if Christianity does not step in, whose fault will it be?" (Vol. I, Ch. XVI, p. 378).
  - 2. "I wanted to tell........What the true historical value of this ancient religion is, as looked upon, not from an exclusively European or Christian, but from a historical point of view. But discover in it 'steam engines and electricity and European Philosophy and morality', and you deprive it of its true character." (Vol. II, Ch. XXV, p. 115-116).

उसको समभानेकी पूरी चेष्टा करूँगा। मेरे दृष्टिकोणसे भारतवर्षका एक बहुत बड़ा भाग ईसाई धर्ममें परिवर्तित हो चुका है। ईसामसीहके अनुयायी बननेके लिये तुमको कुछ समभानेकी आवश्यकता नहीं है। अपने लिये अपने मनका निश्चय करो। अपने समूहको एकत्रित रखने और विपथगामी होनेसे बचानेके लिये उनको मिलाये रक्खो। जो तुमसे पहले ही ईसाई बन चुके हैं उन्होंने तुम्हारे लिये रास्ता साफ कर दिया है। दृढ़ताके साथ आगे बढ़ो, तुम्हारे पैरोंके नींचेसे जमीन नहीं खिसकेगी। दूसरी और तुम्हारा स्वागत करनेके लिये तुमको अनेक मित्रगण मिलेंगे; उनमेंसे तुम्हारे प्राचीन मित्र और साथी कार्यकर्त्ता मैक्समूलरको सबसे बढ़कर आनन्द होगा।

मैक्समूलर दावा करता है कि वह वैदिक धर्मका यथार्थ ऐतिहासिक मूल्य जानता है। किंतु हमारा इतिहास उसके एवं उसके अनुयायियोंके ज्ञान ग्रीर विद्वत्ताके खोखलेपनको स्पष्ट प्रकट कर देगा।

- प्र. वेबर (Weber) का पक्षपात—जिस समय इंग्लैंण्डमें मैक्समूलर भारतीय वाङ्मय ग्रौर धर्मके गौरवको नष्ट करनेमें व्यस्त था, उस समय जर्मनो में ग्रलवर्ट वेबर (Albert Weber) भी उसी प्रकारके निन्दनीय काममें दत्तचित्त था। हम पहले हम्बोल्ट (Humboldt) द्वारा की गयी
  - "Tell me some of your chief difficulties that prevent you and 1. your countrymen from openly following Christ, and when I write to you I shall do my best to explain how I and many who agree with me have met them and solved them.....From my point of view, India at least the best part of it, is already converted to christianity. You want no pursuation to become a follower of Christ. Then make up your mind to work for yourself Unite your flock-to hold them together and to prevent them from straying. The bridge has been built for you by those who came before you. Step boldly forward, it will not break under you, and you will find many friends to welcome you on the other shore and among them none more delighted than your old friend and fellow labourer F. Max-Muller." (From Life and Letters of Frederich Max-Muller vol. II pages 415-416).

गीताकी उदार प्रशंसाका उल्लेख कर चुके हैं। वेबर इस प्रशंसाको सह नहीं सका। गीता ग्रौर महाभारत ईसाई विचारोंसे प्रभावित है—ऐसा सिद्ध करनेका उसने दुःसाहस किया। उसने जो लिखा है, उसको देखिये—

''सारे ग्रंथमें व्यापक कृष्णके मतका विचित्र चित्रण विचार करने योग्य है। ईसाई कथानक ग्रौर दूसरे पाइचात्य प्रभाव उसमें निस्संदेह विद्यमान हैं ।''

वेबरके विचारका लोरिन्सर (Lorinser) तथा ई. वाशवर्न हापिकंस (E. Washburn Hopkins) नामक दो ग्रन्य पाइचात्य विद्वानोंने भी हढ़तापूर्वक समर्थन किया था। इन विचारोंका मिथ्यात्व इतना स्पष्ट था कि योरोपीय विश्वविद्यालयोंके ग्रधिकतर प्रोफेसरोंने ईसाइयतकी ग्रोर भुकाव रहते हुए भी इन विचारोंको स्वीकार नहीं किया। किन्तु इन मिथ्या विचारोंके प्रचारने अपना ग्रनिष्टकारी प्रभाव तो डाला ही, साथ ही वह प्रतिपक्षियों सहित पाश्चात्य विद्वान् जो महाभारतके कालको ईसासे पूर्व माननेमें हिचिकचाते हैं—उसके लिये भी जिम्मेवार हैं।

वेबर और बंकिमचन्द्र—मेरे ग्रकेलेके ही ये विचार नहीं हैं। बंगालके प्रसिद्ध विद्वान् लेखक बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्यायने वेबरके बारेमें ग्रपने कृष्ण-चरितमें लिखा है—

'प्रिसिद्ध वेबर (Weber) साहब पण्डित तो हैं, लेकिन मेरे विचारसे जिस क्षण उन्होंने संस्कृत सीखनी आरम्भ की थी, भारतवर्षके लिये वे बहुत ग्रशुभ क्षण थे। भारतवर्षका प्राचीन गौरव उस कालके जर्मनीके ग्ररण्यनिवासी बर्बरोंके वंशधरोंके लिये ग्रसह्य था। ग्रतएव, प्राचीन भारतवर्षकी सभ्यता ग्रति आधुनिक कालकी है—इसको प्रमाणित करनेके लिये वे सदा यत्नशील बने रहे। उनके विचारोंमें

<sup>1&#</sup>x27; "The Peculiar colouring of the Krishna Sect, which pervades the whole book, is noteworthy; Christian legendary matter and other Western influences are unmistakably present....." ('The History of Sanskrit Literature', Popular ed. 1914, p. 189, footnote; cf. also p. 300, foot-note.)

यिशु ख्रिष्टके जन्मके पूर्व महाभारत था, इस बातका विचार करने का कोई मुख्य प्रमाण नहीं है ।''

वेवर ग्रोर गोल्डष्टकर (Goldstucker)—वेवर ग्रीर बोह्तलिङ्क (Boehtlingk) ने एक संस्कृत कोश बनाया जिसका नाम है 'संस्कृत वार्टरबुश' (Sanskrit Worterbuch)। प्रो॰ क्रह्म (Prof. Kuhn) भी इस कार्यमें उनका सहायक था। भाषा-विज्ञानके मिथ्या एवं काल्पनिक ग्राधारके कारण वह कृति ग्रशुद्ध ग्रथोंसे भरी पड़ी है, ग्रतः वह ग्रविश्वसनीय एवं भ्रमोत्पादक है। बड़े दुःखकी बात है कि उनके पूर्वाग्रहने ही इतनी बड़े परिश्रमको व्यर्थ कर दिया। अध्यापक गोल्डष्टकरने उस कोशकी तीय सालोचना की, जिससे उसके दो सम्पादक बहुत नाराज हो गये। वेवर तो मानसिक संतुलनको इतना खो बैठा कि वह गोल्डष्टकरके विरुद्ध बहुत गंदी ग्रीर भद्दी भाषाका प्रयोग करने तकके निम्न स्तरपर उतर ग्राया। उसने 'वार्टरबुश' के सम्बन्धमें गोल्डष्टकरके विचारोंका उल्लेख करते हुए लिखा कि 'गोल्डष्टकरका मस्तिष्क पूर्ण रूपसे विकृत³' हो गया है क्योंकि उसने बड़े-बड़े हिन्दू विद्वानोंकी प्रामाणिकताका स्वच्छन्दता एवं सरलतापूर्वक विरोध नहीं किया। गोल्डष्टकरने इन लोगोंके ग्रशोभनीय प्रहारोंका उत्तर देते हुये राथ, वोह्तलिङ्क, वेवर, क्रह्म ग्रादि लेखकों द्वारा प्राचीन भारतको

<sup>1. &</sup>quot;विख्यात weber साहेब पण्डित बटे, किन्तु ग्रामार विवेचनाय तिनि जे क्षणे संस्कृत शिखिते ग्रारम्भ करियाछिलेन, भारतवर्षेर पक्षे से ग्रति ग्रशुभ क्षण । भारतवर्षेर प्राचीन गौरव सेदिनकार जम्मंनिर ग्ररण्यनिवासी वर्ब्बरदिगेर वंशघरेर पक्षे ग्रसह्य । ग्रतएव, प्राचीन भारतवर्षेर सम्यता ग्रति ग्राष्टुनिक, इहा प्रमाण करिते तिनि सर्व्वदा यत्नशील । तांहार विवेचनाय यिशु ख्रिब्टेर जन्मेर पूर्व्व जे महाभारत छिल, एमन विवेचना करिवार मुख्य प्रमाण किछु नाइ ।" (वंकिमचन्द्र द्वारा लिखित वङ्गभाषाका "कृष्ण चरित" चतुर्थं परिच्छेद) ।

<sup>2. &</sup>quot;Panini His Place in Sanskrit Literature", Allahabad Edition, p. 200, 1914.

<sup>3. &</sup>quot;a perfect dearrangement of his mental faculties". (Panini His Place in Santkrit Literrture", Allahabad Edition, p. 200, 1914.)

महत्ता नष्ट करनेके लिये रचे गये षड्यंत्रका भण्डाफोड़ किया। उन्होंने लिखा—

"जितनी जल्दी हो सके, यह बता देना मैं ग्रपना कर्त्तव्य समभता हूँ कि डा० बोह्तलिङ्क पािंगिनों सरल नियमों को भी समभने में ग्रसमर्थ हैं तथा कात्यायनको तो ग्रौर भी कम समभते हैं, उच्च कोटिके साहित्यको हृदयंगम करने के लिये उनका कैसे प्रयोग करना चाहिये – इस बातको समभने के लिये तो उनकी सामर्थ्य ग्रौर भी कम है। उनके कोश-निर्माण कार्यमें इतनी ग्रधिक भूलें हैं कि संस्कृत भाषा-विज्ञानके ग्रध्ययनमें उसके प्रयोगका जो ग्रनिष्टकारी प्रभाव होगा उसके विचार मात्रसे प्रत्येक विचारवान् संस्कृतज्ञका हृदय व्याकुलतासे भर उठता है।"

### उन्होंने ग्रागे ग्रौर भी बताया-

"जिन प्रश्नोंका निर्ण्य ग्रत्यन्त सावधानीके साथ करना चाहिये तथा जिनका निर्ण्य ग्रति परिश्रम-साध्य ग्रन्वेषरासे ही हो सकता है उन प्रश्नोंके साथ वार्टरबुशके कोशमें बहुत ग्रनिधकारपूर्ण ढंगसे खिलवाड़-सा किया गया है ।"

वोह्तलिङ्क् के एक साथी गोल्डष्टकरसे मिले। वे न केवल इसलिए मिले कि गोल्डष्टकर 'पािरानीके सम्पादक वोह्तलिङ्क' का सम्मान करें, विल्क

- 1. "It will, of course, be my duty to show, at the earliest opportunity, that Dr. Boehtlingk is incapable of understanding even easy rules of Panini, much less those of Katyayana and still less is he capable of making use of them in the understanding of classical texts. The errors in his department of the dictionary are so numerous......that it will fill every serious Sanskritist with dismay, when he calculates the mischievous influence which they must exercise on the study of Sanskrit Philology". (Panini His Place in Sanskrit Literature, Allahabad Edition, p. 195, 1914.)
- 2. "that questions which ought to have been decided with the very utmost circumspection and which could not be decided without very laborious research have been trifled with in the Worterbutch in the most unwarranted manner." (Ibid. p. 197.)

इस गुप्त ग्रमिप्रायसे भी मिले कि बोह्तलिङ्ककी प्रत्येक भूलको वे जनताके सामने प्रामारिएक सिद्ध करें ।

हम जानते हैं कि ईसाइयों और यहूदियोंके पक्षपातके अतिरिक्त और कोई अन्य गुप्त कारए। ऐसे नहीं थे जिन्होंने इन्हें भारतीय व्याकरए। चार्योंकी वास्तविक जानकारीको छिपाने तथा आर्य सभ्यता और संस्कृतिको निम्नकोटिकी सिद्ध करके बदनाम करनेके लिये प्रवृत्त किया । इसके साथ ही इसी लक्ष्यकी सिद्धिके लिये ब्रिटिश सरकारके हाथका खिलौना बनना भी उसका हेतु था।

वार्टरबुश कोशपर सम्मित देनेवाले प्रोफेसर कुह्न एक ऐसे व्यक्ति थे जिनका संस्कृतके ग्रध्ययनसे इतना मात्र ही सम्बन्ध था कि वे संस्कृत पढ़ सकने वालोंको संस्कृतकी पुस्तकें दिया करते थे। वे साहित्य-ज्ञानमें शून्य तथा पूर्ण रूपसे ग्रज्ञानी रहनेपर भी ग्रपनेको इतनी पुस्तकोंके ज्ञाताकी तरह दर्शाया करते थे क्योंकि इनके पास ग्रांकड़े तो थे ही जिनकी संख्यासे इनका व्यक्तित्व-सा दृष्टिगोचर होता था, लेकिन इनके ग्रपने मित्रोंकी सम्मितिके ग्रनुसार भी ये संस्कृत-ज्ञानसे पूर्णतः ग्रनभिज्ञ थे ।

यथार्थ भारतीय-परमपराकी ग्रनिधकार खिल्ली उड़ानेकी चेष्टासे उत्तेजित होकर प्रोफेसर गोल्डष्टकरको वैज्ञानिक विद्वानोंका चोगा पहने हुए छद्म-वेशधारी दुष्ट प्रचारक समूहके विरुद्ध ग्रपना क्षीण परन्तु एकाकी स्वर उठानेके लिये बाध्य होना पड़ा। निम्नलिखित ग्रर्थपूर्ण टिप्पणीके साथ ग्रपने परिश्रमसाध्य कार्यका उपसंहार करते हुए वे लिखते हैं—

"जब मैं देखता हूँ कि ग्रत्यन्त मूल्यवान ग्रौर कदाचित् प्राचीन भारतके हमारे समस्त ज्ञानके एकमात्र स्रोत इन महान ख्यातिप्राप्त एवं विशिष्ट ज्ञान-सम्पन्न हिन्दू विद्वानों ग्रौर धर्मोपदेशकोंके मतका तिरस्कार किया जाता है, ग्रपने प्रकाशनोंमें तोड़-मरोड़कर उनकां रूप विकृत कर दिया जाता है जिसके परिग्णामस्वरूप वैदिक साहित्यकी व्याख्यामें उनको उठाकर ग्रलग रख दिया जाता है; प्राचीन हिन्दू जातिके ग्रारम्भ कालमें वेदोंका प्रचलित भावार्थ

<sup>1. &</sup>quot;Panini His Place in Sanskrit Literature" Allahabad edition, p. 203.

<sup>2.</sup> Ibid p. 203.

बतानेकी डींग इन संस्कृतज्ञोंके गुट द्वारा हाँकी जाती है; जब मैं विचार करता हूँ कि संस्कृत-भाषा-विज्ञानके ग्रध्ययनकी यह पद्धित उन लोगों द्वारा ग्रपनायी जा रही है जिनके वचनोंका गुरुत्व ग्रौर प्रभाव प्रत्यक्षतः उनके इस व्यवसायमें उच्च पदपर ग्रासीन होनेके कारणा ही है तब मैं समभता हूँ कि संस्कृत भाषा-विज्ञानके ग्रसंयत ग्रामोद-प्रमोदमें रत इन लोगोंका यदि विरोध न किया गया तो यह साहसके ग्रभाव तथा कर्त्तव्यकी ग्रवहेलनाका द्योतक होगा ।"

६. मोनियर विलियम्स (Monier Williams), जिन्होंने बोडन प्राध्यापक पद (Boden Chair) की स्थापनाके वास्तविक उद्देश्यका रहस्य उद्घाटित किया, इस प्रकार कहते हैं—

"ग्रतः ब्राह्मग्राधर्मका नाश सुनिश्चित है। वास्तविक वात यह है कि बहुत साधारण वैज्ञानिक विषयोंसे सम्बन्धित भूठे विचार ब्राह्मण्-धर्मके सिद्धान्तसे इतने घुल-मिल गये हैं कि इसाई मतकी सहायताके विना साधारणसे साधारण शिक्षा—यथा भूगोल विद्याके साधारणसे

"When I see that the most distinguished and the most 1. learned Hindu scholars and divines the most valuable and sometimes the only source of all our knowledge of ancient India-are scorned in theory, mutilated in print, and, as consequence set aside in the interpretation of Vaidik texts;... when a clique of Sanskritists of this description vapours about giving us the sense of Veda as it existed at the commencement of Hindu antiquity;—when I consider that this method of studying Sanskrit philology is pursued by those whose words apparently derive weight and influence from the professional position they hold;...then I hold that it would be a want of courage and a dereliction of duty, if I did not make stand against these Saturnolia of Sanskrit Philology." (Panini His Place in Sanskrit Literature", Allahabad p. 204-205.)

साधारण पाठ भी निश्चय ही इस ब्राह्मणधर्मकी जड़ उखाड़ फेंकेंगे ।"

"ब्राह्मण्धर्मके शक्तिशाली दुर्गकी दीवारें जब घेर ली जायँगी, उनके नीचे जब सुरंग लगा दी जायगी श्रौर श्रन्तमें क्रास (ईसाई धर्म) के सिपाही उनपर धावा बोल देंगे तब ईसाई धर्मकी यह निश्चित ही श्रपूर्व तथा पूर्ण विजय होगी?।"

इसलिये हमारा यह निष्कर्ष उचित ही है कि मोनियर विलियम्सकी "भारतमें मिशनरी कार्यके सम्बन्धमें संस्कृतका ग्रध्ययन" ("The Study of Sanskrit in Relation to Missionary work in India—1861 A.D. London) नामक पुस्तक हिन्दू धर्मको निकाल बाहर करने तथा ईसाई धर्मके विस्तारके एकमात्र उद्देश्यसे ही लिखी गयी थी। इसपर भी हमारे कुछ भारतीय संस्कृत विद्वान् इन योरोपियन विद्वानोंको संस्कृत-साहित्यके पक्षपातरहित विद्याधियोंके रूपमें मानते हैं तथा जिनका एकमात्र उद्देश्य ज्ञानके लिये ज्ञान प्राप्त करना रहा है।

बाइवलके प्रति श्रपनी श्रात्यंतिक श्रद्धा-भावनाको व्यक्त करते हुए मोनियर-विलियम्स लिखते हैं—''बाइवल ही ईश्वर द्वारा प्रकटित वास्तविक प्रकाश है'।''

- 1. "Brahmanism, therefore, must die out. In point of fact, false ideas on the most ordinary scientific subjects are so mixed up with its doctrines that the commonest education—the simplest lessons in geography—with the aid of christianity must inevitably in the end sap its foundations." (Modern India and the Indians, by M. Williams, Third edition 1879, p. 261).
- 2. "When the walls of the mighty fortress of Brahmanism are encircled, undermined, and finally stormed by the soldiers of the cross, the victory of Christianity must be signal and complete." (Ibid. p. 262.)
- 3. "The Bible, though a true revelation." (Indian Wisdom p. 143.)

७. रुडल्फ हार्न्ल (Rudolf Hoernle): वाराएासीके क्वीन्स कालेजमें संवत् १६२६ में रुडल्फ हार्न्ल प्रिंसिपल थे। उन्हीं दिनों ग्रायंसमाजके प्रवर्त्तक स्वामी दयानन्द सरस्वतीका ग्रपने स्वीकृत ध्येयके प्रचार-कार्यके लिये काशीमें सर्वप्रथम ग्रागमन हुग्रा था। डा० रुडल्फ हार्न्ल कई बार उनसे मिले। उन्होंने स्वामी दयानन्द सरस्वतीपर एक लेख लिखा जिसकी निम्नलिखित पंक्तियाँ ध्यान देने योग्य हैं क्योंकि इनसे भारतवर्षके प्राचीन शास्त्रों ग्रीर संस्कृत भाषाके ग्रध्ययनमें संलग्न योरोपियन विद्वानोंका वास्तिवक हेतु प्रकट हो जाता है। डा० हार्न्ल लिखते हैं—

"''वे (दयानन्द) संभवतः हिन्दुश्रोंको यह प्रतीति करवा सकते हैं कि उनका श्राधुनिक हिन्दू धर्म वेदोंके सर्वथा विरुद्ध है। "यदि एक बार उन्हें इस मौलिक भूलका पूर्ण विश्वास हो जाये, तो वे निःसंदेह तत्काल हिन्दू धर्मका परित्याग कर देंगे। "वे वैदिक श्रवस्थाकी श्रोर नहीं लौट सकते, वह मृत है श्रौर नष्टप्राय हो चुकी है, श्रौर कदापि पुनर्जीवित न होगी। कुछ न कुछ श्रधिक या कम नवीन वस्तु इसका स्थान श्रवश्य लेगी। हम श्राशा करते हैं कि यह ईसाई मत ही हो सकता है"।"

दः रिचर्ड गार्बे (Richard Garbe) — जर्मन संस्कृतज्ञ थे जिन्होंने कई संस्कृत ग्रन्थोंका सम्पादन किया। इनके ग्रतिरिक्त इन्होंने सन् १९१४ में मिशनरियों (ईसाई धर्म-प्रचारकों) के लिये "Indien und das Christen tum" नामक (जर्मन भाषाकी) पुस्तक लिखी। इस पुस्तकसे इनका धार्मिक पक्षपात ग्रन्छी तरहसे स्पष्ट है।

<sup>1.</sup> The Christian Intelligencer, Calcutta, March 1870, p. 79.

<sup>2. &</sup>quot;...he (Dayananda) may possibly convince the Hindus that their modern Hinduism is altogether in opposition to the Vedas... If once they became thoroughly convinced of this radical error, they will no doubt abandon Hinduism at once... They cannot go back to the Vedic state; that is dead and gone, and will never revive: something more or less new must follow. We hope it may be Christianity..." (A.F.R.H. quoted in "The Arya Samaj" by Lajpat Rai, 1932, p. 42.)

ह. विण्टरनित्स (Winternitz)—ग्रपने ही दर्शनशास्त्र ग्रौर धर्मकी श्रेष्ठताका ग्रभिमान तथा ग्रपने निष्कर्षोंके भ्रान्तिहीन होनेकी मान्यता उपर्युक्त प्रकारके पाश्चात्य संस्कृतज्ञोंमें इतनी गहरी जड़ जमा चुकी है कि वे निर्कण्जतापूर्वक इसको सर्वसाधारएाके सम्मुख प्रकट करनेमें भी कोई संकोच ग्रनुभव नहीं करते। शोपेनहाएर (Schopenhauer) द्वारा उपनिषदोंके दर्शनकी सम्मानपूर्ण प्रशंसा, जिसको भारतीय लेखकोंने ग्रक्सर उद्धृत किया है, योरोपियनोंके हृदयको निरन्तर कष्ट देती रही। ग्रागे चलकर सन् १६२५ में प्रोफेसर विण्टरनित्सने शोपेनहाएरके सच्चे ग्रौर हार्दिक विचारोंका निम्न शब्दोंमें खण्डन करना ग्रपना ग्रावश्यक कर्त्तव्य समभा—

"तो भी मेरा विश्वास है कि शोपेनहाएरका यह कथन एक उन्मत्त ग्रितिशयोक्ति मात्र है कि 'उपनिषद्की शिक्षा' सर्वोच्च मानव-ज्ञान ग्रौर प्रज्ञाका फल है तथा 'उसमें प्रायः मानवेतर विचार हैं जिनके उद्गाता साधारएा मर्त्य मानव नहीं हो सकते"।"

उपनिषदोंके विरुद्ध विषवमनसे ही सन्तोष न करके उन्होंने वेदोंकी महानता तकका तिरस्कार यह कहकर करनेकी भी धृष्टता की कि —

"यह ठीक है कि इन मन्त्रोंके रचियता ऊपर चढ़ते हैं, किन्तु हिब्रचु लोगोंके धार्मिक काव्य ग्रगाध उत्साह तथा ऊँची उड़ान तक उनमेंसे क्वचित् ही कोई पहुँच पाते हैं 2''

बदनाम करनेकी यह क्रिया केवल संस्कृत विद्वानों तक ही सीमित नहीं रही, बल्कि उनके माध्यमसे विज्ञानके क्षेत्रमें भी प्रवेश कर गयी। हिंदुश्रोंकी

- 1. "Yet I believe, it is a wild exaggeration when Schopenhauer says that the teaching of the Upanishads represents 'the fruit of the highest human knowledge and wisdom' and contains 'almost superhuman conceptions the originators of which can hardly be regarded as mere mortals'..." (Some Problems of Indian Literature, Calcutta, p. 61, 1925.)
- 2. "It is true, the authors of these hymns rise but extremely seldom to the exalted flights and the deep fervour of, say, the religious poetry of the Hebrews." (History of Indian Literature, p. 79, 1927.)

यथार्थ तथा ग्रनेक प्रकारकी विज्ञान-विद्याका एक शब्द भी न जानने वाले सर विलियम सेसिल डैम्पियर (Sir William Cecil Dampier) लिखते हैं—

''दर्शन ग्रौर ग्रौषिं विज्ञानके ग्रितिरिक्त ग्रन्य प्रकारके विज्ञानों में भारतके योगदानकी कमी कुछ ग्रंशमें हिन्दू धर्मके कारण ही शायद रही हो।''

प्रचलित साहित्यमें भी निम्नलिखित शरारतपूर्ण तथा उत्तेजक वाक्योंमें हिन्दूधर्मके विरुद्ध घृगाकी यह पराकाष्ठा स्पष्ट दीखती है—

- (क) "हिन्दू धर्म भारतके लिये ग्रभिशाप है। बीस करोड़ व्यक्ति नर ग्रीर वानर (monkey mixture) की पौराणिक गाथा (रामायण) में विश्वास करते हैं जो राष्ट्रका गला घोट रही है।"
  - ''भारतमें जो कोई भी ईश्वरके लिये उत्कण्ठा रखता है, शीघ्र ही उसका मस्तिष्क विकृत हो जाता है ग्रौर उसके साथ ही हृदय भी दूट जाता है<sup>2</sup>।''
- (ख) वम्बईके प्रो॰ मैकेंजी (Prof. Mckenzie) समभते हैं कि भारतका नीतिशास्त्र दोषपूर्ण, तर्कहीन तथा समाज-विरोधी है; उसमें भी दार्शनिक ग्राधारकी कमी है; संन्यास तथा शास्त्रोक्त विधि-विधानोंके घृिणत विचारों द्वारा इसे निरर्थक बना दिया गया है; तथा योरोपके उच्च श्रेगीके
- 1. "Perhaps the paucity of Indian contribution to other sciences (than Philosophy and Medicine) may in part be due to the Hindu religion." (A History of Science, 4th edition, p. 8, Cambridge University Press, 1948.)
- "The curse of India is the Hindoo religion. More than two hundred million people believe a monkey mixture of mythology that is strangling the nation."
  - "He who yearns for God in India soon loses his head as well as his heart." (Ripley's 'Believe it or Not', Part I, p. 14, 26th edition, pocket-books Inc., New York.)

ग्रध्यात्मवादकी तुलनामें बिल्कुल निम्नकोटिका है। उन्होंने ग्रपनी पुस्तक 'हिन्दू नीति-शास्त्र' (Hindu Ethics) के ग्रधिकतर ग्रंशका उपयोग इसी सिद्धान्तके समर्थन करनेमें किया है तथा एक विजेताके रूपमें यह निष्कर्ष निकाला है कि हिन्दू दार्शनिक विचार जब तर्ककी कसौटीपर कसे जाते हैं तब उनमें नीति-शास्त्रके लिये कोई स्थान नहीं रहता; तथा उनके कारण 'उद्यमपूर्ण नैतिक जीवनके विकासमें' बाधा पहुँचती है ।

रिपले (Ripley's) कृत साहित्य जैसा घृिण्त साहित्य प्रकाशित होने देना उस शासनकी बड़ी भारी गलती है जो भारतकी मित्रता तथा सहानुभृति चाहता हो। इस प्रकारकी पुस्तकों चाहे भारतमें प्रकाशित हों प्रथवा विदेशमें, उनकी ग्रोर हमारे राजनैतिक नेताग्रोंका ध्यान न जाना तथा राष्ट्रीय शासन द्वारा उनपर प्रतिबन्ध न लगाना—भारी खेदका विषय है। इस प्रकारके निन्दनीय साहित्यके निषेधमें हमारी सरकार केवल उदासीन ही नहीं हैं, ग्रपितु हमारे विश्वविद्यालय उन विदेशी विद्वानोंके भारतीय इतिहास तथा संस्कृतिके साहित्यको न केवल पाठ्यक्रममें रखते हैं ग्रपितु उच्च शिक्षाके लिये उनके ग्रध्ययन करनेकी सिफारिश भी करते हैं जिन्होंने खुले ग्राम हमारी सभ्यताको बड़ी चतुराईके साथ कलंकित करनेमें कोई कोर-कसर नहीं रक्खी।

जिस देशके ब्राह्मए ग्रन्थोंसे सारे विश्वने नैतिकता ग्रौर ग्राचारके नियम सीसे हैं, उस देशके नीतिशास्त्रोंपर मैकेन्जीके समान टीका-टिप्पणी— ईश्वरकी निन्दा तथा राष्ट्रीय ग्रपमानसे जरा भी कम नहीं है। बड़े दुर्भाग्यकी बात है कि ऐसे व्यक्तियोंकी निन्दा होनेके स्थानपर वे हमारे देशके शिक्षा-शास्त्रियों तथा राजनैतिक नेताग्रों द्वारा मान्यता ग्रौर सम्मान प्राप्त करते हैं।

इस पक्षपातसे अपरिचित अधिकांश भारतीय विद्वान तथा राजनैतिक नेता—हमने पाश्चात्य विद्वानोंकी इस प्रकारकी मनोवृत्तिका पर्याप्त दिग्दर्शन करा दिया है । उन लोगोंको अपनी सरकारोंसे तथा भारतमें

<sup>1.</sup> Vide 'Ethics of India' by E. W. Hopkins, preface, pp. x and xi, New Haven, 1924.

<sup>2.</sup> Manu, II.20.

ब्रिटिश सरकारसे विपुल धन-राशिकी ग्रार्थिक सहायता मिली, जिसका उपयोग लेख लिखनेमें, पत्रिकाग्रों तथा पुस्तकोंके प्रकाशनमें खूव किया गया, जिनके द्वारा बड़ी सूक्ष्म गहराईसे तथा कपटवेशमें ग्रपने प्रतिक्रियावादी विचारोंका प्रचार किया गया। उन लोगोंका वड़ी सावधानीके साथ यह प्रयत्न रहा कि उनकी पोल न खुलने पावे ग्रौर वे ग्रपनी विद्वत्ता तथा निष्पक्षताका चोगा ग्रोढ़े रहकर दुनियां एवं भारतके लोगोंको वहकाते रहें । यदि स्वामी दयानन्द सरस्वतीने उनके नीच मन्तव्योंका निर्भयतासे भण्डाफोड़ करके उनके मधुर स्वप्न-लोकको भंग न कर दिया होता तो वे लोग अपने काममें भली भांति सफल हो जाते। स्वामी दयानन्द सरस्वती ग्रद्वितीय व्यक्तित्व, ग्रदम्य साहस, तीक्ष्ण बुद्धिमत्ता, दूरहष्टि तथा दूरगामी कल्पना-शक्तिसे सम्पन्न महापुरुष थे। जार्ज बूह्लर (George Buhler), मोनियर विलियम्स<sup>1</sup>, रुडल्फ हार्न्ल ग्रौर थीबो (Thibaut) ग्रादि योरोपीय विद्वानोंसे उनका साक्षात्कार हुआ था ; इन लोगोंने संस्कृत अनुसन्धानके क्षेत्रमें ईसाई उमंगके साथ काम किया था। स्वामी दयानन्द सरस्वती ही प्रथम व्यक्ति थे जिनकी पैनी दृष्टि उन लोगोंके शोधकार्यकी स्रोटमें निहित प्रच्छन्न प्रयोजनको पहचाननेमें नहीं चूकी, यद्यपि भारतकी साधाररा जनता श्रौर सरकारी श्राजीविकापर निर्भर विद्वान् लोग उन

"In one of my interviews with him, I asked for his definition of religion, he replied in sanskrit:—'Religion (धर्मः) is a true and just view (न्यायः) and the abandonment of all prejudice and partiality (पचपातराहित्यम्)—that is to say, it is an impartial inquiry into the truth by means of the senses and the two other instruments of knowledge—(प्रमाण) reason and revelation." Ibid. p. 530.

<sup>1.</sup> Moniar Williams himself writes of his meeting:—"Dayanand Sarsvati,......I made his acquaintance at Bombay in 1876, and was much struck by his fine countenance and figure. There I heard him preach an eloquent discourse on the religious development of the Aryan race. He began by repeating a hymn to Varuna (IV. 16) preceded by the syllable Om,—prolating the vowel in deep sonorous tones." Brahmanism and Hinduism, M. Williams, 4th ed., 1891, p. 529.

विदेशियोंकी तथाकथित गहन विद्वत्ता, हढ़ निष्पक्षता, वैज्ञानिक तथा उदार हिष्टिसे मोहित-से हो रहे थे। स्वामी दयानन्दने ग्रपने देशवासियोंको समयसे चेताकर इन बनावटी विद्वानों एवं चुपके-चुपके काम करनेवाले धर्म-प्रचारकोंके चंगुलमें फंसनेसे बचा लिया।

हमने पाश्चात्य विद्वानोंकी कई पीढ़ियों द्वारा रिचत लगभग सारे साहित्यका ग्रध्ययन किया है तथा खुले मनसे उनका ग्रच्छी प्रकार परीक्षण किया है। हम इस निर्णयपर पहुँचे हैं कि ग्रधिकतर इन विद्वानोंके लेखों में ईसाई पक्षपातकी छटा निश्चित रूपसे है जो भारतवर्षकी सारी महानताको कलंकित करनेके लिये उत्तरदायी है। इन लेखकोंका ग्रन्तिम ध्येय, इस देशके लोगोंके मस्तिष्कमें उनके ग्रपने धर्म तथा संस्कृतिकी हीनताको चतुराईके साथ भरकर उनके धर्म-परिवर्तन द्वारा उन्हें ईसाई बनाना प्रतीत होता है।

किंतु सच्चाई सर्वदाके लिये छिपी नहीं रह सकती। ग्रब भारतवर्षके कुछ ग्राघुनिक विद्वान् भी यद्यपि पूरी तरहसे नहीं तो भी कुछ-कुछ इन योरोपियन विद्वानोंकी ऊपरी महीन परतको भेदकर इनको समभने लग गये हैं। उदाहरणार्थ—

१. प्रोफेसर वी. रंगाचार्य (Prof. V. Rangacharya) लिखते

"प्रायः सभी ग्रंग्रेज तथा ग्रमरीकी विद्वानों द्वारा स्वच्छन्दतासे बनायी गयी इस धारणाने कल्पनातीत शरारत की है कि मिश्र या मेसोपोटामियाके प्रारम्भिक कालकी तिथि कमसे कम ईसासे ५००० वर्ष पूर्वकी है ग्रौर प्राचीन भारतकी ग्रन्तिम सम्भावित तिथि भारतका उन देशोंका ग्रनुकरण करनेके ग्राधारपर बहुत पीछेकी है।"

<sup>1. &</sup>quot;Incalculable mischief has been done by almost all the English and American scholars in assuming arbitrarily the earliest dates for Eqypt or Mesopotamia—dates going back to B C. 5000 atleast—and the latest possible dates for Ancient Indian on the ground that India borrowed from them." ('History of Pre-Musalman India,' Vol. II, Vedic India, Part I, 1937 A.D., p. 145.)

२. मद्रास विश्वविद्यालयके इतिहास विभागके प्रमुख श्रीनीलकण्ठ शास्त्री यद्यपि ग्रनेक न टिक सकनेवाले पाश्चात्य सिद्धान्तोंके समर्थक हैं, तथापि उनको लिखना पड़ा—

''भारतीय समाज श्रौर भारतीय इतिहासके विषयमें उन्नीसवीं सदीके योरोपके पूर्वस्वीकृत विचारोंपर ग्राधारित ग्रालोचनाके ग्रित्तिरक्त यह क्या है ? यह ग्रालोचना ग्रंग्रेज शासकों ग्रौर योरोपीय ईसाई धर्म-प्रचारकों द्वारा ग्रारम्भ की गई थी ग्रौर लासेन (Lassen) की विशाल विद्वत्ता द्वारा प्रवीणतासे ग्रंकित है। उन्नीसवीं सदीके ग्रारम्भमें जर्मनकी ग्रपूरित ग्राकांक्षाग्रोंका लासेनकी विचारधाराके बनानेमें निस्संदेह भाग था।''

३. भारत सरकारके भूतपूर्व शिलालेख विशेषज्ञ श्री सी. श्रार-कृष्णमाचारलुने योरोपियन लेखकोंके प्रच्छन्न प्रयोजनोंको समभ लेनेपर श्रपने विचार बड़ी हढ़ताके साथ प्रकट किये हैं। वे लिखते हैं—

''सद्योद्भूत जातियोंमें जन्मे हुए ये पाश्चात्य ग्रन्थकार सांस्कृतिक उद्देश्यके स्थानपर दूसरे निहित उद्देश्यिवशेषसे जो इतिहास लिखते हैं वह कई वातोंमें स्पष्ट ही जातीय पक्षपातयुक्त है तथा पुरातन भारतीय इतिहासके यथार्थ विषयीकरणका हित-विरोधी है । ऐसे लेखक सांस्कृतिक सहानुभूतिकी इतिहास-प्रसिद्ध सत्यताका प्रमाण प्राप्त नहीं कर सकते?।''

- 1. What is this but a critique of Indian society and Indian history in the light of the nineteenth century prepossessions of Europe? This criticism was started by English administration and European missionaries and has been neatly focussed by the vast erudition of Lassen; the unfulfilled aspirations of Germany in the early nineteenth century, doubtless had their share in shaping the line of Lassen's thought." (All India Oriental Conference, December 1941, Part II, p. 64, printed in 1946.)
- 2. "These authors, coming as they do from nations of recent growth, and writing this history with motives other than cultural, which in some cases are apparently racial and prejudicial to the correct elucidation of the past history of India, cannot acquire testimony for historic veracity of cultural sympathy." ("The Cradle of Indian History," p. 3, Adyar Library, Madras, 1947.)

४. प्रो॰ ग्रार. सुब्बाराव (Prof. R. Subba Rao) एम. ए., एल. टी. भारतीय इतिहास कांग्रेसके वाल्टेयरके सोहलवें ग्रधिवेशनमें (२६ दिसम्बर १६५३) ग्रपने (विभागीय) ग्रध्यक्ष पदके भाषरामें लिखते हैं—

"दुर्भाग्यसे पुराणोंकी ऐतिहासिकता तथा उनके प्रमाण कुछ पाश्चात्य विद्वानों द्वारा ऐसे दूषित कर दिये गये हैं जिन्होंने कट्टरतापूर्वक यह प्रतिपादित किया कि ऐतिहासिक काल ईसासे २००० वर्ष पूर्वके पहले नहीं जा सकता तथा महाभारत-युद्धका काल ईसाके १४०० वर्ष पूर्वसे पहलेका निश्चित करनेकी ग्रावश्यकता नहीं है । ग्रपनी प्राचीनताको ग्रौर ग्रधिक प्राचीन वतानेके लिये उन लोगोंने ब्राह्मणोंको दोषी ठहराया ग्रौर हिन्दुग्रोंकी (खगोल विद्या सम्बन्धी ग्रन्थों) ज्योतिष-गणनाकी प्रामाणिकताको भी विवादास्पद बना दिया ।"

### उपसंहार

संक्षेपमें पूर्व पृष्ठोंसे यह स्पष्ट हो जाता है कि यही वह ईसाई ग्रौर यहूदी पक्षपात था जिसने—

- (क) प्राचीन भारतीय इतिहासका वास्तिवक काल पाश्चात्य विद्वानों द्वारा स्वीकार नहीं होने दिया, जो वेदोंको 'म्रोल्ड टैस्टामेण्ट' के प्राचीनतम कालसे म्रिधक प्राचीनता देनेमें तथा उनको ईसासे २५०० वर्ष पूर्वके पहलेका माननेमें बराबर म्रिनच्छुक रहे<sup>2</sup>।
  - 1. "Unfortunately, the historicity of Puranas and their testimony has been perverted by certain Western scholars who stated rather dogmatically that the historical age cannot go back beyond 2000 B.C., and that there is no need for fixing the Mahabharata war earlier than 1400 B.C. They accused the Brahmins of having raised their antiquity and questioned the authenticity of the Hindu astronomical works." J.A.H.R.S., Vol. X, p. 187.)
  - 2. Cf. A.L. Basham:-

"Few European scholars would agree with professor Altekar (p. 19) that the Rigveda dates from 2500 B.C." (J.R.A.S., 1950 A.D., parts 3-4, p. 202.)

पाल ड्यूसन (Paul Deussen), ए. डव्ल्यू. राइडर (A.W. Ryder) एवं एच. जिमर (H. Zimmer) की विचारधाराग्रों वाले (विद्वान) भी, जो प्राचीन भारतीय मेधाकी प्रशंसा करनेमें शोपेनहाएर (Schopenhauer) के अनुयायी रहे, इस मिथ्या काल निर्णयकी ग्रत्यन्त अवैज्ञानिक वातको ग्रमान्य नहीं कर सके।

(ख) पाश्चात्य भारतिवदोंके लिये परस्पर सम्बन्धी दो रोग उत्पन्न किये। एक रोग तो—पौरािएक कथा काल्पिनक ग्रौर गप्प है, जिसके ग्रनुसार ब्रह्मा, इन्द्र, विष्सु, पर्वत, नारद, कश्यप, पुरूरवा, विश्वार तथा प्राचीन ग्रन्य ऋषियोंका समूह काल्पिनक घोषित कर दिया गया; किसीने भी इस डरसे कि भारतीय इतिहास बहुत प्राचीन सिद्ध हो जायगा, उनकी ऐतिहासिकताकी वास्तिवकता समभनेकी कभी चेष्टा नहीं की। उसीके पिरिंगामस्वरूप दूसरा रोग है—ग्रारोपराका, जिसमें इन ऋषियोंकी तथा ग्रन्य ऋषियोंकी कृतियोंको बहुत पीछेके गुमनाम व्यक्तियों द्वारा निर्मित घोषित किया गया जिन व्यक्तियोंने उन कृतियोंको उन काल्पिनक ऋषियोंके नामपर ग्रारोपित कर दिया।

## धर्मशास्त्रोंमें 'अहिंसा' धर्मकी विशेषता

हिन्दू त्रार्योंके धर्मग्रंथोंमें एवं ग्रन्य धर्मोंमें भी 'ग्रहिसा' धर्मको बहुत ऊँचा स्थान दिया गया है जो निम्नलिखित उद्धरएोोंसे स्पष्ट है—

- मा हिंस्यात सर्व भूतानि किसी भी प्राग्गीकी हिंसा न करो।
- २. तत्राहिसा सर्वथा सर्वदा सर्वभूतानामनभिद्रोहः सर्वथा (सम्पूर्ण रूपसे), सर्वदा (सब कालमें), किसी भी भूत (प्राणी) से द्रोह न करना ग्रहिसा है। (पा॰ योगदर्शन २.३०)
- ३. मनुस्मृति—

  ग्रहिसया च भूतानाममृतत्वाय कल्पते (६.६०)—प्राशायोंकी हिसा
  न करनेसे (मनुष्य) मोक्षके योग्य होता है।

ग्रीहंसया तत्पदम् (६.७५) — ग्रीहंसासे (मनुष्य) परम पदको प्राप्त होता है।

मनुस्मृतिमें सर्वमानवधर्ममें भी ग्रहिंसाको प्राथमिकता है— ग्रहिंसा सत्यमस्तेयं शौचिमिन्द्रियनिग्रहः ॥ (१०.६३)

- ४. धर्मा<mark>राां च यथाहिसाभयदानं वरेण्यकम्</mark>—जैसे सब धर्मीमें ग्रहिसा धर्म सर्व-श्रेष्ठ है, वैसे ही दानोंमें ग्रभय-दान है। (ग्रादि पुरारा १.१६)
- प्रविश्वान्ति यथा नद्यः समुद्रमृजुवक्रगाः । सर्वेऽधर्माश्च हिंसायां प्रविशन्ति तथा हढम् ।।

(पद्म० उत्तराखण्ड २४३.६)

जैसे वक्रगति वाली निदयाँ समुद्रमें प्रवेश करती हैं, वैसे ही सब ग्रधर्म हिंसामें प्रवेश करते हैं, ग्रर्थात् हिंसा सबसे बड़ा ग्रधर्म है।

६. सत्यं न सत्यं खलु यत्र हिंसा—जिस सत्यमें हिंसा होती है, वह सत्य सत्य नहीं है। (देवीभागवत ३.११.३६) ७. श्रूयते द्विविधं शौचं यिच्छ्रष्टं: पर्युपासितम्। बाह्यं निर्लेपनिर्गन्धमनाः शौचमहिसनम्॥ श्रद्भिः शुद्ध्यन्ति गात्रािंगि बुद्धिज्ञानिन शुद्ध्यति। श्रहिसया च भूतात्मा मनस्सत्येन शुद्ध्यति॥

(बौधायन धर्मसूत्र ३.१०.२३-२४)

दो प्रकारका शौच है । बाह्य शौच निर्लेपन ग्रौर निर्गन्धसे होता है ग्रौर ग्रन्तः शौच ग्राहंसासे होता है । शरीरकी जलसे, बुद्धिकी ज्ञानसे, ग्रात्माकी ग्राहंसासे ग्रौर मनकी सत्यसे शुद्धि होती है।

प्रविधायन धर्मसूत्रमें तपोंकी गरानामें 'ग्रहिंसा' को प्रथम स्थान दिया है।

श्रींहसा सत्यमस्तैनं सवनेषूदकोपस्पर्शनं गुरुशुश्रूषा । ब्रह्मचर्यमधः- शयनमेकवस्त्राऽनाशक इति तपांसि ॥ (३.१०.१४.)

- पातंजल योगसूत्रमें पाँच यमोंमें ग्रिहंसाको प्रथम स्थान दिया है—
   ग्रिहंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यागरिग्रहा यमाः (साधनपाद.६०)
- १०. स्वयं भगवान श्रीकृष्ण भी उद्ववजीको उपदेश देते समय यम-नियममें श्रिहिंसाको श्रन्य सब धर्मोंसे प्राथमिकता देते हैं—

श्रीहंसा सत्यमस्तेयमसङ्गो हीरसंचयः । श्रास्तिक्यं ब्रह्मचर्यं च मौनं स्थैयं क्षमाभयम् ॥ शौचं जपस्तपो होमः श्रद्धाऽऽतिथ्यं मदर्चनम् । तीर्थाटनं परार्थेहा तुष्टिराचार्यसेवनम् ॥ एते यमाः सनियमा उभयोद्वीदश स्मृताः । पुंसामुपासितास्तात यथाकामं दुहन्ति हि ॥

(श्रीम०भा० ११.१६.३३-३५)

भगवान् श्रीकपिलदेवजीने भी श्रपनी माता देवहूतिजीको ऐसा हो घम बताया है—

ग्रहिंसा सत्यमस्तेय यावदथपरिग्रहः ब्रह्मचर्यं तपः शौचं स्वाध्यायः पुरुषाचनम् ॥

(श्रीम०भा० ३.२८.४)

### प्राचीन भारतमें गोमांस-एक समीक्षा

११. श्रीमद्भगवद्गीतामें दैवीसम्पद् गुर्गोमें ग्रहिंसाको सत्यसे भी पहिले स्थान दिया है—

श्रहिंसा सत्यमक्रोध.....(गीता १६.२)

- १२. परम धर्म श्रुति विदित ग्रहिंसा। (रामचरित मानस)
- १३. श्रीविष्णु शर्मा विरचित पंचतन्त्रमें—जहाँ कहानियोंके रूपमें व्यावहारिक ज्ञानकी शिक्षा दी गई है—ग्रहिंसाको ही प्रधान धर्म बताकर उसकी प्रशंसा की गई है। काकोलूकीय (तृतीय तन्त्र) में वर्गान है—

हिंसकान्यपि भूतानि यो हिनस्ति स निर्घृ गः। स याति नरकं घोरं कि पुनर्यः ग्रुभानि च।।

ग्रर्थात्—जो (विना कारणा) हिंसक प्राणियोंको भी मारता है, वह निर्देयी होता है ग्रौर घोर नरकमें जाता है। जो निर्दोष ग्रच्छे प्राणियोंको मारता है, उसके लिये क्या कहना।

महाभारतमें तो स्थान-स्थानपर 'ग्रिहिसा' का प्रतिपादन किया गया है, जैसे:—

#### वनपर्व---

प्र२

ग्रीहंसानिरतः स्वर्गं गच्छेदिति मतिर्मम । १८१.२ ; १७८.२ ग्रीहंसार्थसमायुक्तैः कारणैः स्वर्गमञ्जते । १८१.१० ; १७८.१० ग्रीहंसा धर्मनित्यता । १८१.४२ ; १७८.४३ ग्रीहंसा चैव जन्तुषु । १८६.२२ ; १८७.२१ ग्रीहंसा परमो धर्मः । २०७.७४ ; १६८.६६ ग्रीहंसा सत्यवचनम् भूतानामनुकम्पकाः

सन्तो लोकसाक्षिराः लोकसत्कृताः

धर्मव्याध द्वारा हिंसा ग्रौर ग्रहिंसाका विवेचन — सम्पूर्ण ग्रध्याय २०८; १९६

श्रीहंसा समता वान्तिः......प्रियो ह्यसि सदा मम ।

३१४.८ ; २६८.८

## धर्मशास्त्रमें 'ग्रहिंसा' धर्मकी विशेषता

43

### उद्योगपर्व-

अहिसैका सुखावहा । ३३,४२ ; ३३.४८

#### द्रोणपर्व-

श्रीहंसा सर्वभूतेषु धर्म ज्यायस्तरं विदुः । १६२.३८ ; १६४.२६ आन्तिपर्व, राजधर्मानुज्ञासन—

ग्राहिसो मन्दकोऽजल्पो मुच्यते सर्विकित्विषः । ३४.३७ ; ३४.३३ ग्राहिसा सत्यमक्रोध क्षमेज्या धर्मलक्षराम् । ३६.१० ; ३७.७ ग्राहिसा सत्यमक्रोधो वृत्तिदायानुपालनम् । ६४.२० ; ६४.२० येव्वानृशंस्यं सत्यं चाप्यहिंसा तप ग्राजंवम् । ८०.४ ग्राहिसको ज्ञानतृप्तः स ब्रह्मासनमर्हति । ७६.६ ; ८०.६ ग्राहिसा सत्यवचनमानृशंस्यं दमो घृरा। एतत् तपो विदुर्धीरा न शरीरस्य शोषणम् ॥ ७६.१८ ; ८०.१७ ग्राहिसः सर्वभूतेषु सत्यवाक् सुदृढवतः । १११.६ ; ११२.६

## शान्तिपर्व, श्रापद्धर्म—

श्र्रीहंसा सत्यवचनं दानिमिन्द्रियनिग्रहः। एतेभ्यो हि महाराज तयो नानशनात् परम्॥ १६१.८; १५५.८ श्र्रीहंसा चैव राजेन्द्र सत्याकारास्त्रयोदश। १६२.६; १५६.६

### शान्तिपर्व, मोक्षधर्म-

स्र्राहिसः सर्वभूतानां मैत्रायग्गतक्चरेत् । १८६.१२ ; १८२.१२ स्र्राहिसा सत्यमक्रोधः सर्वाष्ट्रमगतं तपः । १६१.१४ ; १८४.१४ स्र्राहिसा सत्यवचनं सर्वभूतेषु चार्जवम् । क्षमा चैवाप्रमादक्च यस्यैते स सुखी भवेत् ॥ २१४. ६ ; २०८.६ स्र्राहिसकः समः सत्यो धृतिमान् नियतेन्द्रियः । क्षरण्यः सर्वभूतानां गतिमाप्नोत्यनुत्तमाम् ॥ २४४.२० ; २३७.२० स्रनुवर्तामहे वृत्तमहिस्रागां महात्मनाम् । २६२.१६ ; २४४.२०

### प्राचीन भारतमें गोमांस—एक समीक्षा

48

ग्रहिसादिकृतं कर्म इह चैव परत्र च। २६४.६; २५६.६ ग्रहिसा सर्वभूतेभ्यो धर्मेभ्यो ज्यायसी मता। २६५.६; २५७.६ ग्रानृशंस्यं क्षमा शान्तिरहिंसा सत्यमार्जवम्। पन्थानो ब्रह्मग्रस्त्वेते एतैः प्राप्नोति यत्परम्।

२७०.३६-४० ; २६२.३७-३८

ग्रहिसा सकलो धर्मो हिंसाधर्मस्तथाहितः । २७२.२० ; २६४.१६ ग्रज्ञानात् तु कृतां हिंसामहिंसा व्यपकर्षति । तथा कामकृतं नास्य विहिसैवानुकर्षति ।

२६१.१२-१३ ; २८०.१२-१३

स्र्रीहंसा चानृशंस्यं च विधिवत् परिपालय । ३२१.५ ; ३०६.४ स्र्रीहंसाधर्मसंयुक्ताः प्रचरेयुः सुरोत्तमाः । स वो देशः सेवितव्यो मा वोऽधर्मः पदा स्पृशेत् ॥ ३४०.८६ ; ३२७.७८

म्र्जीहंसाधर्मयुक्तेन प्रीयते हरिरीश्वरः । ३४८.४६ ; ३३६.४२ म्र्जीहंसया परे स्वर्गं । ३५४.१२ ; ३४२.१२

### ग्रनुशासनपर्व, दानधर्म--

ग्रहिसा सत्यमक्रोध ग्रानृशंस्यं दमस्तथा। ग्राजंवं चैव राजेन्द्र निश्चितं धर्मलक्षरणम् ॥ २२.१६ ; २३.१६ ग्रहिस्रश्चाल्पदोषश्च स राजन् केतनक्षमः । २३.२८ ; २४.२६ ग्रहिसानिरता ये च.....तान् नमस्यामि केशव।

39.98; 37.98

......ग्रहिंसा दम ग्रार्जवम्.....तत्पात्रं मानमर्हति । ३७.८-६ ; ३७.८-६

श्रीहंसायाः फलं रूपं दीक्षाया जन्म वै कुले । ५७.११ ; ५७.११ श्रीहंसा सर्वभूतेभ्यः.....भवत्यवभृथाय ते ।

६0.१5-१E; 4E.95

भ्रहिसानिरतो नित्यं जुह्वानो जातवेदसम् । षड्भिरेव स वर्षेस्तु सिध्यते नात्र संशयः ॥ १०७.७ ; ११०.६-७

### धमेशास्त्रमें 'ग्रहिंसा' धर्मको विशेषता

ग्रहिंसा सर्वभूतानाम् । १०८.४ ; १११.४ श्रहिंसा सत्यवचनं.....गार्हस्थ्यो धर्म उत्तमः ।

१४१.२५ ; १२८.२५

44

उपवासत्रतैदन्ति। ह्यहिस्राः सत्यवादिनः। संसिद्धाः प्रेत्य गन्धर्वेः सह मोदन्त्यनामयाः॥ १४२.३८ ; १३०.३८ स्राहिसा सत्यमक्रोधो दानमेतच्चतुष्टयम्। १६२.२३ ; १४७.२२ स्राहिसया च दोर्घायुरिति प्राहुर्मनीविगाः। १६३.१२ ; १४६.११

#### श्ररवमेधपर्व---

ऋहिंसा सर्वधसोगामिति वृद्धानुशासनम् । २८.१६ ; २८.१६ ऋहिंसेति प्रतिज्ञेयं यदि वक्ष्याम्यतः परम् । २८.१७ ; २८.१७ ऋहिंसा सर्वभूतानां नित्यमस्मासु रोचते । २८.१८ ; २८.१८ ऋहिंसा परमो धर्मो हिंसा चाधमंलक्षरणा । ४३.२१ ; ४३.१६ ऋहिंसा बह्यचयं च सत्यमार्जवमेव च । ४६.२६ ; ४६.३५ ऋहिंसा सर्वभूतानामेतत् कृत्यतमं मतम् । ५०.२ ; ४६.२

(महाभारतके उपर्यु क्त उद्धरणों में प्रथम संख्या गीताप्रेस संस्करणकी है ग्रौर द्वितीय संख्या भंडारकर इंस्टीट्यूट संस्करणकी है)

### ईसाई धर्मके श्रहिंसा धर्म-सम्बन्धी वाक्य-

- For 'meat' destroy not the work of God. (Romans 14/20)
   मांसके लिए भगवानकी कृतिको नष्ट न करो।
- 2. It is good neither to eat flesh, nor to drink wine, nor anything whereby thy brother stumbleth, or is offended, or is made weak. (Romans 14/21) न मांस खाना ग्रच्छा है, न शराब पीना; न कोई ऐसा काम करना ग्रच्छा है जिससे हमारा भाई (साथी) लड़खड़ाने लगे, व्यथित हो या कमज़ोर हो जाय।

### **५६** प्राचीन भारतमें गोमांस-एक समीक्षा

- 3. Sacrifice and offering thou didst not desire; mine ears hast thou opened: burnt offering and sin offering hast thou not required. (Psalms 40/6)
  - है भगवान् ! तुमने जीवोंका बलिदान नहीं मांगा, ग्रग्निमें उनकी ग्राहुति नहीं चाही । ऐसे पाप तुमको ग्रभीष्ट नहीं हैं । तुमने मेरे कान खोल दिये ।
- I will take no bullock out of thy house, nor he goats out of thy folds. (Psalms 50/9)
   मैं तेरी सृष्टिसे न बैलको हटाऊँगा, न वकरे को।
- For every beast of the forest is mine, and the cattle upon a thousand hills. (Psalms 50/10) जंगलमें रहनेवाले जीव ग्रौर हजारों पहाड़ियोंपर रहनेवाले पशु मेरे हैं।
- 6. I know all the fowls of the mountains:
  and the wild beasts of a fields are mine. (Psalms 50/11)
  पहाड़ों पर रहनेवाले कुक्कुट, मैदानमें रहनेवाले जंगली जीव सभी
  मेरे हैं।
- 7. If I were hungry, I would not tell thee:
  for the world is mine, and the fulness thereof. (Psalms 50/12)
  मैं भूखा होऊँगा तो तुमको नहीं कहूँगा। सभी सृष्टि मेरी है ग्रौर
  भरी-पुरी है (ईश्वरके नामपर जीव हिंसा करनेवालोंके प्रति वे कह
  रहे हैं कि मैंने ग्रपनी भूख तुम्हारे सामने प्रकट नहीं की। सभी सृष्टि
  मेरी है ग्रौर मेरी भूख शान्त करनेके लिये मुभे तुम्हारी हिंसाकी
  जरूरत नहीं है।)
- 8. Will I eat the flesh of bulls, or drink the blood of goats? (Psalms 50/13) क्या मैं बैलोंका मांस खाऊँगा ग्रौर बकरोंका खून पिऊंगा ?
- 9. I will have mercy, and not sacrifice. (Matthew 9/13) मैं हिंसा नहीं, दया चाहता हूँ।

10. He that killeth an ox\* is as if he slew a man, he that sacrificeth a lamb, as if he cut off a dog's neck. (Isaiah 66/3) जिसने गोवंशकी हत्या की उसने मानो मनुष्यकी हत्या की। जिसने भेड़के बच्चेकी हत्या की उसने मानो कुत्तेकी गरदन काटी है।

(क 'Ox' का ग्रर्थ ग्रंग्रेजी कोशके ग्रनुसार गोवंशके नर ग्रौर मादा—दोनों हैं।)

कितने ग्राश्चर्यकी बात है कि ईसाई धर्मावलम्बी ग्रपने धर्मग्रन्थोंके— गोवंशकी हत्या मानव-हत्याके वरावर है—ऐसे विधान होने पर भी सबसे ग्रिधक गोहिंसक ग्रीर गोमांस-भक्षक हैं एवं स्वार्थवश दूसरोंको भी इनके लिये प्रोत्साहन देते हैं।

पारसी (जरथुस्त्र) धममें भी श्रिहिसाको बहुत महत्व दिया है श्रीर मांसको बहुत श्रपिवत्र माना है। उनके बम्बईके वाडिया मन्दिरके पुरोहित (धर्मगुरु) दस्तूर खुरशेदजीने श्रपने पत्र दिनांक ७-२-१९६९ में बताया है—

Our religion has the attribute:
 "Not advocating compulsion and violence".
 (Naida-Snaithishem)

हमारे धर्ममें विशेषता है-दबाव ग्रौर हिंसाका समर्थन नहीं करना।

- 2. Any cruelty to animals is prohibited; and protection or kindness is advocated. जीवोंके प्रति क्रूरता वर्जित एवं (जीवोंकी) रक्षा, या (उनके प्रति) दयाका समर्थन है।
- It is pointed out that at the final 'judgment' (Resurrection)
  man's food should consist of vegetarian products; and none
  would kill living creatures for food.

यह बताया गया है कि (मृत्युसे उत्थानके समय) ग्रन्तिम निर्णयमें मानवके भोजनमें वनस्पति-वस्तुएँ होंगी ग्रौर खानेके लिये जीव-हिंसा कोई भी नहीं करेगा ।

#### प्राचीन भारतमें गोमांस- एक समीक्षा

45

- 4. The sacred hymns of Zarathustra emphasise our homage (nemo) to the animal kingdom. All life is sacred. जरथुस्त्रके सूक्त हमारे लिये जीवोंके प्रति श्रादर-श्रद्धा पर ज़ोर देते हैं। सभीका जीवन पवित्र है।
- 5. Animal sacrifices are forbidden and none of our rituals ever offer meat. Nay, it has to be far away from sacred precincts. जीव-बलिका निषेध है, हमारे किसी भी संस्कार या प्रथामें मांस अपर्ण नहीं होता। पवित्र स्थानोंसे इस (मांस) को बहुत दूर रखा जाता है।

यद्यपि पारसी समाजके बहुतसे लोग धर्म-ग्राज्ञाके विपरीत मांसाहारी हैं, किन्तु उनके धर्मगुरु दस्तूर श्रीखुरशेदजी स्वयं पूर्णतया शाकाहारी हैं।

# श्रुति और स्मृतिमें विरोध हो तब ?

१. विरोधे त्वनपेक्षं स्यादसति ह्यनुमानम् ।

(जैमिनि पूर्व मीमांसा दर्शन १.३.३)

श्रुतिके विरोध होनेपर स्मृति-वाक्य त्याज्य हो जाता है। यदि श्रुतिका विरोध न हो तो ग्रनुमान करना पड़ता है कि जैसा स्मृति-वचन मिल रहा है, वैसा ही कोई श्रुतिका वचन भी ग्रवश्य है जो कालवशात् लुप्त हो गया, मिलता नहीं।

२. ग्रर्थकामेण्वसक्तानां धर्मज्ञानं विधीयते । धर्मं जिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः ॥ (मनु० २।१३) ग्रर्थं ग्रौर काममें ग्रासक्तिहीन मनुष्योंका यही धर्म वताया है, धर्मकी जिज्ञासा वालोंके लिये श्रुति सबसे ग्रधिक प्रमागा है।

या वेद-बाह्याः स्मृतयो याश्च काश्च कुदृष्टयः। सर्वास्ता निष्फला ज्ञेयाः तमोनिष्ठा हि ताः स्मृताः॥

(मनु० १२.६५)

याः (जो) वेद-बाह्याः (वेदसे वाहर—वेद-विरुद्ध) स्मृतयः (स्मृतियां हैं) च (ग्रौर) याः (जो) काइच (कोई भी) कुदृष्टयः (कुदृष्टियाँ—कुमार्ग दिखानेवाली हैं) ताः (उन) सर्वाः (सबको) निष्फलाः (निष्फल—व्यर्थ) ज्ञेयाः (जानना चाहिये) । ताः (वे सब) हि (निश्चयपूर्वक) तमोनिष्ठाः (तमोनिष्ठ—ग्रज्ञानपूर्ण) स्मृताः (मानी जाती हैं) ।

३. श्रुतिस्मृतिविरोधे तु श्रुतिरेव गरीयसी । ग्रविरोधे सदा कार्यं स्मातं वैदिकवत्सदा ॥ (जाबाल) श्रुति ग्रौर स्मृतिका विरोध होनेपर श्रुति ही गुरुतर होगी । विरोध न होनेपर सज्जनोंको सदा स्मार्त कार्य वैदिकवत् करना चाहिये ।

#### प्रचीन भारतमें गोमांस-एक समीक्षा

60

- ४. श्रुत्या सह विरोधेन बाध्यते विषयं विना। (भविष्य पुरारा)
  श्रुतिके साथ विरोध होनेपर विषयके स्रभावमें (स्मृति) बाधित
  (inoperative) स्रथीत् स्रप्रभावी हो जाती है।
- थ्र. श्रीमध्वाचार्य (स्वामी ग्रानन्दतीर्थ) ने ब्रह्मसूत्रोंके ग्रपने भाष्यपें वेदोंके प्रमाएके साथ कहीं-कहीं पुराएोंके वचन भी उद्धृत किये हैं, किन्तु उनके विषयमें उनने स्पष्ट लिखा है—

#### पुराग्गस्योपजीव्यश्च वेद एव न चापरः। तद्विरोधे कथं मानं तत्तत्र च भविष्यति॥

ग्रर्थात्- पुराग्गोंका उपजीव्य (ग्राधारभूत प्रमाग्ग) वेद हो हैं ग्रौर कुछ नहीं। इसलिये वेदके विरुद्ध उनको प्रमाग्ग कैसे माना जा सकता है?

## वया बृहदारण्यक उपनिषद्में गोमांस-भक्षणका विधान हैं ?

मनीषा ग्रन्थालय प्राइवेट लि०, ४।३-बी, बंकिम चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता द्वारा जून १६६७ में प्रकाशित राजा राजेन्द्रलाल मित्रकी ग्रंग्रेजी पुस्तक 'प्राचीन भारतमें गोमांस' की भूमिकामें पृष्ठ २-३ पर बृहदारण्यक उपनिषद्, छठें ग्रध्याय, चतुर्थ ब्राह्मण, ग्रहारहवीं कण्डिकाका उद्धरण दिया गया है जिसका अनुवाद उन्होंने यह किया है कि चारों वेदोंमें पारंगत संतान पानेके लिये पति-पत्नीके लिये गोमांस-भक्षणका विधान है। उनके द्वारा उद्धृत इसी पदको प्रायः उन सभी व्यक्तियोंने उद्धृत किया है जो 'वेदोंमें गोमांस-भक्षण' का अनुमोदन करते हैं। श्रीपाण्डुरंग वामन कार्गो, एम०ए०, एल-एल० एम०, एडवोकेट, हाईकोर्ट, बम्वईने भी इसका सन्दर्भ भण्डारकर ग्रोरिएण्टल रिसर्च इंस्टीट्यूट, पूना द्वारा प्रकाशित अपनी अंग्रेजी भाषाकी पुस्तक 'धर्मशास्त्रका इतिहास', खण्ड २, भाग २ के 'भोजन-मांसाहार' नामक २२वें अध्यायमें दिया है। बम्बईके भारतीय विद्या भवनके इतिहासके अवैतिनक विभागाध्यक्ष श्री ग्रार० सी० मजूमदार सरीखे विद्वान ग्रंग्रेजी भाषाकी 'भारतीय लोगोंका इतिहास एवं संस्कृति'के २१वें अध्यायमें पृष्ठ ५७७ पर श्रपने श्रंग्रेजी भाषाके प्रबन्ध 'खाद्य एवं पेय' में मांस-भक्षणके पक्षमें श्रीपाण्ड्ररंग वामन कागोके 'धर्मशास्त्रका इतिहास' पर निर्भर रहे हैं। श्री ए० बी० शाहने भी, जोिक एक समय लगभग २० वर्षों तक बम्बई एवं पूना विश्वविद्यालयोंमें गणित एवं सांख्यिकीके प्राध्यापक रह चुके हैं भ्रौर वर्तमानमें 'भारतमें सांस्कृतिक स्वतन्त्रताकी महासभा' के कार्यक्रमोंके निदेशक हैं तथा 'साइण्टिफिक मेथड एण्ड प्लानिंग फार डेमाक्रेसी' एवं अन्य निबन्धोंके लेखक हैं, ग्रपनी अंग्रेजी भाषाकी 'काउ स्लाटर-हान्सं ग्राफ ए डिलेमा' के परिचयमें बृहदारण्यक उपनिषद्के उसी विवादास्पद पद पर मांस-भक्षणके पक्षमें जोर दिया है। प्रस्तुत लेखमें, हम बृहदारण्यक उपनिषद्के उस बहुर्चीचत पदपर विचार करते हैं जिसका सन्दर्भ ऊपर दिया गया है।

क्या बृहदारण्यक उपनिषद्में गोमांस-भक्षणका विधान है ? पद इस प्रकार हैं—

ग्रथ य इच्छेत् पुत्रो मे पण्डितोविगीतः सिर्मितिगमः शुश्रूषितां वाचं भाषिता जायेत सर्वान् वेदाननुबुवीत सर्वमायुरियादिति माँसौदनं पाचियत्वा सिपष्मन्तसक्तियातामीक्वरौ जनियतवा ग्रौक्षेरण वार्षभेरण वा ॥ (बृहदारण्यक उपनिषद्, ६-४-१८)

राजा राजेन्द्रलाल मित्रकी 'बीफ इन एन्सिएण्ट इण्डिया' की भूमिकामें प्रस्तुत पदका अंग्रेजोमें जो अर्थ दिया गया है उसका हिन्दी अनुवाद इस प्रकार है—

"ग्रौर यदि कोई व्यक्ति एक ऐसे पुत्रकी ग्राकांक्षा करता है— जो प्रसिद्ध, सार्वजिनक, लोकप्रिय वक्ता हो एवं सभी वेदोंका ज्ञाता तथा पूर्ण ग्रायु तक जीवित रहनेवाला हो—तो उसे मांस तथा चावलको उवालकर उसे तथा उसकी पत्नी—दोनोंको सन्तानके योग्य अवस्थामें मक्खनके साथ खाना चाहिये। मांस एक युवा ग्रथवा बुड्ढे सांड़ (बैल) का होना चाहिये।"

मि॰ राबर्ट अर्नेस्ट ह्यूम (Mr. Robert Earnest Hume, Ph.D., D. Theol., Professor of the History of Religions in Union Theological Seminary, New York) ने भिन्न शब्दों में लगभग वैसा ही अनुवाद किया है। अन्तर इतना ही है कि मांसको उन्होंने या तो गो-वत्सका (Veal) अथवा युवा पशुका (Beef) बताया है।

इसमें विवादास्पद शब्दोंके अर्थ इस प्रकार किये गये हैं-

राजा राजेन्द्रलाल मित्रकी पुस्तकमें मांसोदनम् चावल एवं मांस औक्षेण युवा बैठ (सांड़) का मांस

ग्रर्वभेण

वृद्ध वैल (सांड़) का मांस

मि० राबर्ट भ्रनेंस्ट ह्यूम द्वारा चावल एवं माँस बछड़ेका मांस (गोवत्सका मांस) युवा गोवंशके पशुका मांस

ग्रंग्रेजी शब्द कोशके ग्रनुसार Veal का ग्रर्थ है गो-वत्सका मांस और Beef का ग्रर्थ गोवंशके युवा पशुका मांस ।

#### क्या बहदारण्यक उपनिषद्में गोमांस-भक्षणका विधान है ?

६३

यदि यह स्वीकार कर लिया जाय कि चावल एवं घीके साथ मिश्रित एक गोवत्स या युवा पशु अथवा युवा या वृद्ध सांड़ (बैल) का पकाया हुआ मांस ऐसा पुत्र उत्पन्न कर सकता है जो सभी वेदोंमें पारंगत हो तो पिश्चमी देशोंके लोग, जो प्राय: सभी गोमांस-भक्षक हैं, अवश्य ही सारे वेदोंके विद्वान् होते, किन्तु बात ऐसी नहीं है। हमें इस पदके भावका परीक्षण विषयके सन्दर्भमें ही करना चाहिये।

उपर्युक्त बहुविवादास्पद पदके तुरन्त पहले बहदारण्यक उपनिषद्में निम्न चार पद हैं—

स य इच्छेत् पुत्रो मे शुक्लो जायेत वेदमनुब्रुवीत सर्वमायुरियादिति क्षीरौदनं पाचियत्वा सिप्हमन्तमञ्जीयातामीश्वरौ जनियतवै ॥१४॥

स्रथ य इच्छेत् पुत्रो मे किपलः पिङ्गलो जायेत द्वौ वेदावनुबुवीत सर्वमायुरियादिति दध्योदनं पाचियत्वा सिप्हमन्तमश्नीयातामीश्वरौ जनियतवै ॥१४॥

श्रथ य इच्छेत् पुत्रो मे इयामो लोहिताक्षो जायेत त्रीन् वेदाननुब्रुवीत सर्वमायुरियादित्युदौदनं पाचियत्वा सिप्ष्मिन्तमक्तीयातामीक्वरौ जनियतवै ॥१६॥

अथ य इच्छेद् दुहिता मे पण्डिता जायेत सर्वमायुरियादिति तिलौदनं पाचियत्वा सिंपच्मन्तमश्नीयातामीश्वरौ जनियतवै ॥१७॥

ये चारों पद, सभी अनुवादकत्तांओं के अनुसार, एक अथवा अनेक वेदों में पारंगत सन्तानके लिये निम्न प्रकारसे भोजनका निर्धारण करते हैं—

एक वेदके ज्ञाता पुत्रके लिये दूधके साथ पकाया हुम्रा तथा घीके साथ मिश्रित चावलका भोजन,

दो वेदोंके ज्ञाता पुत्रके लिये दहीके साथ पकाया हुन्ना तथा घीके साथ मिश्रित चावलका भोजन,

तीन वेदोंके ज्ञाता पुत्रके लिये पानीके साथ पकाया हुम्रा तथा घीके साथ मिश्रित चावलका भोजन, तथा

विदुषी कन्याके लिये तिलके साथ पकाया हुम्रा तथा घीके साथ मिश्रित चावलका भोजन ।

#### प्राचीन भारतमें गोमांस-एक समीक्षा

83

पाश्चात्य विद्वानोंके ग्रनुसार चारों वेदोंका प्रकट क्रम इस प्रकार है—

(१) ऋग्वेद, (२) यजुर्वेद, (३) सामवेद, ग्रौर (४) ग्रथर्ववेद ।

यदि ऊपर उद्धृत बृहदारण्यक उपनिषद्के पदोंका क्रमिक सम्बन्ध वेदोंके क्रमसे माना जाय तो इसका तात्पर्य यह होगा कि विभिन्न वेदोंमें पारंगत पुत्रकी प्राप्तिके लिये दम्पतीके भोजनका विधान इस प्रकार है—

१. ऋग्वेद के लिये घोके साथ मिला हु ग्रा चावल ग्रौर दूधका भोजन।

२. ऋग् ग्रौरं यजुर्वेद } ,, ,, दही ,, ।

३. ऋग्, यजुः श्रौर सामवेद } " " " " " पानी ", ।

४. ऋग्, यजुः, साम , , गोमांस ,, । ग्रीमांस ,, । ग्रीमांस ,, ।

यदि यह सत्य स्वीकार कर लिया जाय तो ग्रथर्ववेदके लिये ही गोमांसका भोजन ग्रावश्यक है।

उपर्युक्त प्रसंगमें एक ग्रथवा दो ग्रथवा तीन वेदोंमें पारंगत पुत्रके लिये भेड़ अथवा वकरे आदि जैसे ग्रल्पकाय जानवरके मांसके भोजनका भी संकेत नहीं किया गया है। तब यह कैसे सहसा न्यायोचित मान लिया जाय कि चारों वेदोंमें—ग्रौर वह भी केवल ग्रथवंवेदमें—पारंगत पुत्रकी प्राप्तिके लिये गोमांसके भोजनका निर्धारण किया गया है। हमें इसपर और भी सूक्ष्मतासे विचार करना चाहिये।

जिस प्रकार ग्रंग्रेजीमें 'फ़्लेश' (flesh) शब्दका ग्रर्थ 'जानवरकी मांसल पेशियाँ' के ग्रतिरिक्त 'फलों एवं सब्जियोंका गूदेदार मुलायम भाग' भी होता है ग्रौर 'मीट' (meat) का अर्थ 'जानवरके मांस' के ग्रतिरिक्त 'पोषणके लिये खाद्यके रूपमें कोई खाद्य वस्तु' भी होता है, ठीक उसी प्रकार संस्कृतमें 'मांस' शब्दका ग्रर्थ 'फलों ग्रौर सब्जियों ग्रादिका गूदेदार मुलायम भाग' भी होता है। (कोई भी शब्दकोश देखिये)

इसी प्रकार फलके छिलकेको चमड़ा कहा जाता है, उसके कठोर भागको ग्रस्थि (हड्डी) कहा जाता है ग्रौर उसके रेशोंको ग्रस्थिबन्धक-तन्तु या नसें कहा जाता है।

#### क्या बृहदारण्यक उपनिषद्में गोमांस-भक्षणका विधान है ?

६५

संस्कृतमें 'प्रस्थम् कुमारिका-मांसम् ग्रानय' के दोनों ग्रर्थ हो सकते है ; (१) लड़कोका एक सेर मांस लाग्रो, ग्रथवा (२) कुमारी नामक ग्रौषधीय घीक्वार पौधेका एक सेर गूदा लाग्रो।

संस्कृतमें ऐसे अनेक शब्द हैं जो गौके अंगवाचक एवं पशुओं के अंगवाचक हैं और आयुर्वेद चिकित्सा-शास्त्रमें उसका अर्थ औषधिके पौधेका वाचक है। जैसे—

गोदिन्त —गायके दांतोंकी पंक्ति ; औषि विशेष
गोक्षुर —गायके खुर ; गोखरू नामक प्रसिद्ध ग्रौषि
गो जिह्वा —गायकी जीभ ; गाजवां, गोजवां नामक ग्रौषि
ग्रजाकर्ग —बकरीका कान ; ग्रसन ग्रर्जुन नामक एक प्रकारका
पेड़ जिसके ग्रंश औषि में प्रयोग
होते हैं।

श्रजा — बकरी; एक प्रकारका कन्द जिसकी श्राकृति बकरीके स्तनों जैसी होती है।

इन शब्दोंको देखकर यदि कोई गायके या अन्य पशुके शरीरके ग्रंशका ही ग्रर्थ करे तो उसकी बुद्धिकी बलिहारी है।

बृहदारण्यक उपनिषद्का यह ग्रध्याय (६-४) 'मनुष्य इच्छित विद्वान् सन्तान कैसे प्राप्त करे' के सम्बन्धमें है। इस ग्रध्यायका पहला पद है—

एषां वै भूतानां पृथिवी रसः पृथिव्या ग्रापोऽपामोषधय ग्रोषधीनां पुष्पारिण पुष्पारणां फलानि फलानां पुरुषः पुरुषस्य रेतः ॥१॥ जिसका अर्थ है—

सब भूतोंका रस पृथिवी है,
पृथिवीका रस जल है,
जलका रस श्रोषिधयाँ हैं,
ओषिधयोंका रस पुष्प है,
पुष्पोंका रस फल है,
फलोंका रस पुष्प है, श्रोर
पुष्पोंका रस (सार) शुक्क है।

पृथिवीसे लेकर शुक्र (मानव वंशका बीज) तकके इस क्रममें जानवरोंके मांससे सम्बन्ध रखनेवाली कोई भी वस्तु नहीं है।

इससे यह स्पष्ट संकेत मिलता है कि उच्च श्रेणीकी सन्तानके लिये उच्च श्रेणीका शुक्र ग्रीषधीय पौधोंके फलों द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है, न कि किसी भी प्रकारके जानवरके मांस द्वारा।

'औक्षेण' शब्द 'उक्षा' से बना है । इस शब्दका ग्रर्थ सर मोनियर-विलियम्स द्वारा संकलित प्रसिद्ध संस्कृत-ग्रंग्रेजी शब्द-कोशमें निम्न प्रकार दिये हुए हैं जो यहाँ देने प्रासंगिक हैं—

- (i) a bull (as impregnating the flock); सांड (गायोंके गर्भाधानमें समर्थ)
- (ii Name of 'Soma' (as sprinkling or scattering small drops);
  सोम (भरता-टपकता हुग्रा ग्रथीत रससे परिपूर्ण)
- (iii) One of the eight chief medicaments (rishabhak). ग्रह्टवर्ग ग्रौषिधयोंमेंसे एक (ऋषभक)

'स्रार्थभेण' शब्द 'ऋषभ' से बना है। उसी शब्द-कोशमें इस शब्दका विवरण इस प्रकार दिया हम्रा है—

- (i) a bull (as impregnating the flock); सांड (गायोंके गर्भाधानमें समर्थ)
- (ii) a kind of medicinal plant (Sushruta, Bhava-Prakash) एक प्रकारका ग्रीषधीय पौद्या (सुश्रुत, भावप्रकाश)
- (iii) Carpopogan pruriens.

प्रसिद्ध संस्कृत जर्मन कोशमें भी-जिसका नाम 'Sanskrit Werterbuch' है, जिसका प्रकाशन Imperial Academy of Sciences, St. Peterburg ने किया है-'उक्षा' शब्दका ग्रर्थि 'भरता-टपकता ग्रर्थात् रससे परिपूर्ण सोम' किया है जिसका उल्लेख उसी कोशके अनुसार ऋग्वेदके १.१३५.६, ६.८३.२, ६.८५.१०, ६.८६.४३, ६.८६.२ तथा ६.६५.४ मन्त्रोंमें ग्राया है।

## क्या बृहदारण्यक उपनिषद्में गोमांस-भक्षणका विधान है ?

६७

(उक्षा शब्द सोमके ग्रथंमें और भी कई वेद मन्त्रोंमें ग्राया है-देखिए स्वर्णीय पं० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर द्वारा सम्पादित, स्वाध्याय मण्डल, ग्रानन्दाश्रम, पारडी (गुजरात) द्वारा प्रकाशित 'गो-ज्ञान-कोश,' प्राचीन खण्ड-वैदिक विभाग, प्रथम खण्ड, पृष्ठ २२८ से २३२ तक, मन्त्र क्रम-संख्या ७६१ से ८०१ तक)

इन दोनों शब्दोंके और भी अनेक ग्रर्थ हैं, किन्तु वे यहाँ प्रासंगिक न होनेके कारण नहीं उद्धृत किये गये।

मोनियर-विलियम्सके संस्कृत-श्रंग्रेजी शब्दकोशमें सोमलताके रसको भी सोम बताया गया है । सोम स्वयं एक प्रकारकी लता Sarcostema Viminalis श्रथवा Asclepias Acida है जो श्रपने चमत्कारपूर्ण गुणोंके लिये प्रसिद्ध एक दिव्य औषि है । इसका 'अमृत' अर्थ भी किया गया है । दूसरी भारतीय भाषाश्रोंके शब्दकोशमें भी सोमलताके सम्बन्धमें लगभग इसी तरहके श्रर्थ मिलते हैं।

उपर्यु क्त १८वें पदके ग्रन्तिम शब्द 'ग्रौक्षेण वा ग्रार्षभेण वा' हैं जिनका ग्रर्थ या तो 'उक्षा' ग्रथवा 'ऋषभक' है। अतएव 'उक्षा' ग्रौर 'ऋषभक' निश्चय ही दो वस्तुएँ होनी चाहिए, न कि क ही वस्तु । शब्दकोशके त्रनुसार 'उक्षा' शब्दका अर्थ 'गोवत्स' (बछड़ा) नहीं है ; यदि 'उक्षा' ग्रौर 'ऋषभ' दोनों ही शब्दोंका गो-सन्तानके रूपमें विचार किया जाय तो उनका ग्रर्थ '(गायोंका गर्भाधान करनेमें समर्थ) सांड़' होगा ग्रर्थात् दोनों एक ही होंगे। ग्रतएव 'उक्षा' ग्रौर 'ऋषभ' शब्द 'या तो' ग्रौर 'ग्रथवा' शब्दोंके साथ एक ही वस्तुके लिये और एक ही ग्रर्थमें ग्रर्थात् सांड़के लिये नहीं हो सकते । इस पदका तात्पर्य 'उक्षा' स्रौर 'ऋषभ' शब्दोंके साथ 'या तो' ग्रौर 'ग्रथवा' शब्दोंका सम्बन्ध 'उक्षा' ग्रौर 'ऋषभ'—इन दो शब्दों द्वारा निरुचय ही किन्हीं भिन्न वस्तुओंका बोध कराना होगा। ग्रौषि शास्त्रमें 'उक्षा' का ग्रथ 'ऋषभ' भी हो सकता है, किन्तु 'उक्षा' ग्रीर 'ऋषभ' के साथ 'या तो' ग्रीर 'अथवा' शब्द होनेपर औषधि-शास्त्रका 'उक्षा' का ग्रर्थ 'ऋषभ' यहाँ नहीं हो सकता । ग्रतएव 'उक्षा' शब्दका ग्रर्थ (भरता-टपकता हुम्रा-म्रथीत् रससे परिपूर्ण) 'सोम' तथा 'ऋषभ' का म्रथं चरक-संहिता, सुश्रुत-संहिता ग्रौर भावप्रकाश में एक औषधीय पौधा है— जो 'ऋषभक' कहलाता है - होगा।

चरक-संहिताके खण्ड १, ग्रध्याय ४-१३ में दस औषिधयोंके प्रथम महाकषायका वर्णन है जिसमें 'ऋषभ' भी एक है ग्रौर उसको जीवनीया (शक्ति-संवर्द्धक) कहा जाता है। पाठ इस प्रकार है—

१ पूर्व १ जीवकर्षभकौ मेदा महामेदा काकोलो क्षीरकाकोली १ प्रतिस्था काकोलो क्षीरकाकोली १ प्रतिस्था काकोलो क्षीरकाकोली १ प्रतिस्था काकोली क्षीरकाकोली १ प्रतिस्था काकोली क्षीरकाकोली भवन्ति भवन्ति ।

सुश्रुत-संहिताके ३८वें अध्याय (सूत्र-स्थानम्) में, जिसको द्रव्यसंग्रहणीय कहा जाता है, ग्रनेक चीजोंमें 'ऋषभक' भी एक है।

भावप्रकाश पूर्ण-खण्डमें 'ऋषभक' अष्टवर्गकी श्रौषिधयोमेंसे एक है । पाठ निम्न प्रकार है —

१ २ १-४ ५-६ ७-५ जीवकर्षभकौ मेदे काकोल्यो ऋद्धिवृद्धिके ॥१२०॥

अष्टवर्गके विभिन्न गुणोंमेंसे निम्न गुण सबसे महत्वपूर्ण हैं-वृंहण (धातुवर्धक), शुक्रजनक ग्रौर बलवर्धक।

वहाँ यह भी विर्णित है कि ऋषभ नामक श्रौषिध हिमालयकी चोटीपर प्राप्त होती है। इसका श्राकार बैलके सींगके समान होता है।

उपर्युक्त अनेक प्रसंगों मेंसे एक ग्रर्थात् वृहदारण्यकके उसी अध्यायके पद्र संख्या १, १४, १५, १६ ग्रौर १७ से यह विलकुल स्पष्ट है कि पद-संख्या १८ में 'उक्षा' ग्रौर 'ऋपभ' के ग्रर्थ आयुर्वेदिक ग्रौपिधयों के अतिरिक्त ग्रौर कुछ भी नहीं हो सकते हैं। इसमें गो-वत्संका मांस ग्रथवा गाय या बैलका मांस ग्रथवा युवा या वृद्ध सांडका मांस ग्रादिके लिये कोई स्थान नहीं है।

## क्या राजा रिन्तदेवके यहां गोवध होता था?

राजा राजेन्द्रलाल मित्रकी श्रंग्रेजी भाषाकी 'प्राचीन भारतमें गोमांस'—Beef in Ancient India (प्रकाशक : मनीषा ग्रन्थालय प्रा० लि०, कलकत्ता, जून, १६६७ संस्करएा) नामक पुस्तकमें भूमिकाके पृष्ठ ३ पर राजा रन्तिदेवके यहाँ प्रतिदिन दो हजार गायें ग्रतिथि-सेवामें मारे जानेकी बात महाभारतमें बतायी गयी है । प्रमाएगमें निम्न श्लोक दिया गया है जो महाभारत, वनपर्व, ग्रध्याय २०७ का बताया गया है, लेकिन वास्तवमें यह श्लोक चित्रशालाके संस्करएाके ग्रध्याय २०८ में ग्रौर भण्डारकर संस्थाके संस्करएाके ग्रध्याय १६६ में मिलता है । सम्भव है, २०७ मुद्रएाकी भूल हो ।

राज्ञो महानले पूर्व रिन्तदेवस्य वै द्विज। द्वे सहस्रे तु वध्येते पञ्चनामन्वहं तदा। स्रहन्यहिन वध्येते द्वे सहस्रो गवां तथा॥

इन तीनों पंक्तियोंका ग्रर्थ 'वध्येते' शब्दका 'मारी जाती थीं' लेकर यह माना है कि राजा रन्तिदेवकी रसोईमें दो हजार पशु ग्रौर दो हजार गायें रोज मारी जाती थीं। 'वध्येते' शब्दका ग्रर्थ व्याकरएके ग्रनुसार 'मारी जाती थीं' बनता ही नहीं, जिसका विवेचन ग्रागे किया जायगा।

भारतीय विद्या भवन, बम्बईसे प्रकाशित 'भारतीय लोगोंका इतिहास ग्रौर संस्कृति'—'The History and Culture of the Indian People'—जिसके सम्पादक श्री ग्रार. सी. मजुमदार, एम.ए., पी.एच.डी., एफ.ग्रार.ए.एस.बी. हैं—के खण्ड दो के पृष्ठ ५७६ पर भी उल्लेख हैं—

"According to Mahabharata, a King called Rantideva killed every day two thousand cattle and two thousand kine in order to dole out meat to the people."

श्रर्थात—"महाभारतके अनुसार रिन्तिदेव नामक एक राजा प्रतिदिन लोगोंको मांस बांटनेके लिये दो हजार पशुश्रों श्रीर दो हजार गायोंकी हत्या करता था।" इस उक्तिके प्रमाणमें न तो उन्होंने महाभारतका कोई उद्धरण दिया है ग्रीर न प्रसंगके स्थानका संकेत किया है। प्रतीत होता है कि उन्होंने भी पूर्वापर प्रसंगके विना सोचे-समभे दूसरोंकी देखा-देखी यह बात लिख मारी है जो भारतीय विद्या भवन जैसी संस्थाके लिये नितान्त ग्रमुचित है क्योंकि उनके प्रकाशनोंका साधारण जन बड़ा सम्मान करते हैं।

ये श्लोक महाभारतके सब संस्करगोंमें नहीं हैं, किसी-किसीमें हैं। जिन-जिन संस्करगोंमे ये श्लोक हैं उनमें ग्रागेकी दो पंक्तियाँ इस प्रकार हैं —

#### समांसं ददतो ह्यन्नं रन्तिदेवस्य नित्यशः। श्रतुला कीर्तिरभवन्नृपस्य द्विजसत्तमः॥

इसका ग्रर्थ है--हे द्विजश्रेष्ठ ! सदा मांस सहित भोजन देनेवाले राजा रन्तिदेवकी ग्रनुपम कीर्ति हुई।

ग्राइये, ग्रव उनकी यथार्थताके सम्बन्धमें विचार किया जाय ।

## 'अहिंसा' धर्मके प्रतिपादनके साथ हिंसा द्वारा राजा रन्तिदेवके कीर्ति-गान पर विवेचन

महाभारत, वनपर्वमें यहाँपर धर्मव्याध द्वारा कौशिक ब्राह्मणको धर्मका उपदेश देते हुए हिंसा और अहिंसाका विवेचन किया गया है। इसके पूर्व अध्यायमें गीताप्रेस और चित्रशाला वाले संस्करणोंके ७४वें श्लोकमें और भण्डारकर संस्थाके संस्करणके ६६वें श्लोकमें धर्मव्याधने 'अहिंसा परमो धर्मः' का उपदेश किया है। इस अध्यायमें हिंसा और अहिंसाका विवेचन करनेमें हिंसाकी बुराई और अहिंसाकी प्रशंसा की गयी है एवं इस विवेचनमें कोई भी ऐतिहासिक उदाहरण नहीं दिया गया है।

विषयके सन्दर्भको लेकर पूर्वापर विचार किया जाय तो कोई भी समभदार व्यक्ति यह स्वीकार नहीं करेगा कि पूर्व ग्रध्यायमें 'ग्रहिंसा परमो धर्मः, का उपदेश देकर इस ग्रध्यायमें सर्वत्र हिंसाकी निन्दा ग्रौर ग्रहिंसाकी प्रशंसा करनेवाला धर्मव्याध ऐसे राजाकी कीर्ति गा सकता है जिसके यहाँ नित्य प्रति दो हजार निर्दोष पशुग्रों ग्रौर दो हजार निर्दोष गायोंकी हत्या होती हो। ग्रतः ये श्लोक ग्रन्य वैसे ही कुछ श्लोकों सहित

#### क्या राजा रन्तिदेवके यहाँ गोवध होता था? उनके कीर्ति-गान पर विवेचन

90

विषय-सम्बद्ध न होनेके कारण निश्चय ही प्रक्षिप्त हैं। इन श्लोकोंके प्रक्षिप्त होनेके सम्बन्धमें महाभारतमें ही ग्रौर भी प्रमाण हैं, जिनसे यह स्पष्ट हो जायगा कि राजा रिन्तिदेवके यहाँ एक भी पशुकी हिंसा नहीं होती थी। वे प्रमाण हैं—

(१) श्रनुशासन-पर्वके ग्रध्याय ११५ में गीताप्रेसके संस्करणमें श्लोक-संख्या ६३ से ६७ तक ग्रौर चित्रशालाके संस्करणमें श्लोक-संख्या ७२ से ७६ तक बहुत-से राजाग्रोंके नाम गिनाये गये हैं, जिन्होंने कभी मांस नहीं खाया। उन्हींमें राजा रन्तिदेवका नाम भी है। भण्डारकर संस्थाके संस्करणमें ये श्लोक ग्रध्याय ११६ में संख्या ६७ से ७० तक हैं।

यदि राजा रिन्तदेवके यहाँ ब्राह्मएगोंको गोमांस या साधारण पशुका मांस खिलाया जाता होता तो यज्ञाविशष्ट प्रसाद (पशु-मांस) राजा रिन्तदेव भी श्रवश्य खाते श्रीर ऐसे होनेपर कभी भी मांस न भक्षरण करने वालोंकी श्रेग्गोमें राजा रिन्तदेवका नाम नहीं गिनाया जाता।

- (२) यदि 'समांसं ददतो ह्यन्नं' पाठ ही ठीक माना जाय तो भी आगे वर्णित राजा रन्तिदेवकी विशेषताको देखते हुए 'मांस' शब्दका अर्थ 'पशुमांस' नहीं हो सकता । शतपथ ब्राह्मएगमें 'मांस' शब्द 'परमान्न' का पर्यायवाची भी है (एतदु ह व परममन्नाद्यं यन्मांसम् । शतपथ ब्राह्मएग ११. ७. १. ३) और 'परमान्न' नाम दूध-चावलके मिश्रएगसे बनी शक्करयुक्त खीरका है (परमान्न तु पायसम् । अमरकोश २. ७. २४) । अतः इसका अर्थ होगा पायस सहित अन्न भोजन करानेसे राजा रन्तिदेवकी अतुल कीर्ति हुई, न कि पशु-मांस भोजन करानेसे ।
- (३) २००० गायोंका प्रतिदिन वध हो तो एक सालमें ७,२०,००० गायें नष्ट हो जायेंगी। प्रतिवर्ष लगातार इतनी गायोंका वध हो तो धीरे-धीरे गोवंश ही नष्ट हो जायगा। ग्रतः व्यावहारिक दृष्टिसे भी यह बात ठीक नहीं लगती।
- (४) गीताप्रेस ग्रौर चित्रशालाके संस्करणों महाभारत, द्रोणपर्व, ग्रध्याय ६७ में राजा सृ जयसे नारदजी राजा रन्तिदेवकी महत्ताका वर्णन कर रहे हैं, जिस ने उन्होंने कहा है कि राजा रन्तिदेवने ब्राह्मणोंको न्याय-पूर्वकं प्राप्त हुए धनका दान किया ग्रौर उस दानमें वे हजारों 'निष्क'

प्रतिदिन दान किया करते थे। वहाँ एक 'निष्क' का परिमाण बताया है — 'सुवर्णके एक हजार वृषभ, प्रत्येक वृषभके पीछे सौ-सौ गायें स्रौर एक सौ स्राठ स्वर्ण-मुद्राएँ'।

(५) शान्तिपर्व, गीताप्रेस ग्रौर चित्रशालाके संस्करण ग्रध्याय २६२, श्लोक संख्या ४७ तथा भण्डारकर संस्थाके संस्करण ग्रध्याय २५४, श्लोक-संख्या ४५ इस प्रकार हैं—

#### ग्रघ्न्या इति गवां नाम क एता हन्तुमर्हति। महच्चकाराकुशलं वृषं गां वालभेत् तु यः।।

ग्रर्थात् - श्रुतिमें गोग्रोंको ग्रध्न्या (ग्रवध्या) कहा गया है, फिर कौन उन्हें मारनेका विचार करेगा ? जो पुरुष गाय ग्रौर बैलोंको मारता है, वह महान् पाप करता है।

इससे पाठक विचार करें कि ऐसे दानी ग्रौर मांस-भक्षण से घृणा करनेवाले महात्मा राजा रन्तिदेवके यहाँ २००० निर्दोष पशु ग्रौर २००० निर्दोष गायों का मांस ग्रितिथियोंके लिये रसोईमें राँधा जाना सम्भव ग्रौर युक्तिसंगत है क्या ?

गायके 'ग्रवध्या' होनेके ग्रौर राजा रिन्तदेवके महाभारतके उपर्युक्त उदाहरणोंसे - राजा राजेन्द्रलाल मित्रके ग्रंग्रेजी प्रबन्ध 'प्राचीन भारतमें गोमांस' की भूमिकामें जो क्लोक महाभारतके बताये हैं—वे यथार्थ हैं, इस-पर कैसे विक्वास किया जा सकता है।

बहुत-से लोग किसी भी प्रसिद्ध व्यक्तिके द्वारा जनसाधारएाके सम्मुख घोषित किये हुए शास्त्रीय प्रमाराको सत्य विश्वास कर लेते हैं ग्रौर स्वयं संस्कृत भाषासे ग्रनभिज्ञ होनेके कारएा उसको मूल ग्रन्थसे मिलान करनेका कष्ट भी नहीं उठाते ग्रौर उसके विषयमें संदिग्धता भी नहीं रखते।

## संयुक्तप्रांत विधानसमाके भूतपूर्व उपाध्यक्ष श्रीमुकन्दीलाल तथा राहुल सांकृत्यायनके भ्रामक विचारोंपर विवेचन

कुछ समय पूर्व एक पुस्तक 'Cow Slaughter-Horns of a Dilemma' 'गोहत्या—द्विविधाकी परिस्थिति,' लालवानी पब्लिशिंग

हाउस द्वारा प्रकाशित हुई थी जिसके सम्पादनकर्ता हैं कोई श्री ए. वी. शाह, जो पूना व बम्बई विश्वविद्यालयमें २० वर्षों तक गिरातशास्त्रके प्राध्यापक रहे बताये गये हैं एवं वर्तमानमें Congress of Cultural Freedom संस्थाके Director of Programme in India हैं, जिन्होंने इसी प्रकारकी बहत-सी अनर्गल बातें लिखी हैं। इसी प्रतकमें एक प्रबन्ध है 'Cow-cult in India'—'भारतमें गो-पूजा', जिसके लेखक हैं कोई मूकन्दीलाल, जो ग्राक्सफोर्ड विश्वविद्यालयके स्नातक-Oxford Graduate तथा कानूनके बैरिस्टर हैं एवं ब्रिटिश सरकारके जमानेमें सन् १६२७-३० के समयमें यू. पी. की विधान-सभाके उपाध्यक्ष रहे हैं । उनके संस्कृत-ज्ञानकी शिथिलता इसी बातसे प्रकट हो जाती है-जहाँ वे लिखते हैं कि वैष्ण्व-ग्राचार्य महाप्रभु श्रीवल्लभाचार्यजीने श्रीभद्भागवत महापुराणका हिन्दी अनुवाद किया है । जहाँ तक हमारी जानकारी है, उन्होंने इस ग्रंथकी संस्कृत टीका लिखी है, जिस टीकाका नाम 'सुवोधिनी' है । ग्रंपने प्रबन्ध 'Cow-cult in India' में भारतवर्षमें प्राचीनकालमें गोहत्या होती ग्राई है, इसके प्रमागामें मुकन्दीलालने राहुल सांकृत्यायनके स्वच्छन्दतासे प्रमागा दिये हैं जो उन्होंने ग्रपनी हिन्दींकी पुस्तक 'बोल्गासे गंगा' में यत्र-तत्र उल्लेख किये हैं। ग्राइये, ग्रव मुकन्दीलालके द्वारा दिये गये प्रमागों पर जो राहुल सांकृत्यायनकी 'बोल्गासे गंगा' पुस्तक में दिये गये हैं, विचार किया जाय।

राहुल सांकृत्यायनने अपनी पुस्तकके पृष्ठ २२८ की पाद-टिप्पग्तीमें महाभारत, द्रोग्पर्व, अध्याय ६७ के पहले दो क्लोकोंकी तीन पंक्तियोंका उद्धरण दिया है जो इस प्रकार है—

सांकृति रन्तिदेवं च मृतं मृंजय गुश्रुभ । यस्य द्विशतसाहस्रा ग्रासन् सूदा महात्मनः ॥ गृहानभ्यागतान् विप्रानितथीन् परिवेषकाः ।

राहुल सांकृत्यायनने इसका भाव बताया है कि राजा रिन्तदेवकी रसोईमें गोमांस पकानेवाले दो हजार रसोइये रहा करते थे ग्रौर इसीको मुकन्दीलालने भी मान लिया है। मूल श्लोकमें शब्द है 'द्विशतसाहस्रा'— जिसका ग्रर्थ है २०० हजार ग्रर्थात् दो लाख, न कि दो हजार। इसीसे राहुल सांकृत्यायन एवं मुकन्दीलालके संस्कृतभाषाके ज्ञानका ग्रनुमान लगा लीजिए। इन तीन पंक्तियोंमें गोमांसका कहीं भी उल्लेख नहीं है। राहुल

#### प्राचीन भारतमें गोमांस-एक समीक्षा

सांकृत्यायनने बड़ी चालाकीके साथ इन तीन पंक्तियोंके बाद चौथी पंक्ति छोड़ दी, जिसका पाठ इस प्रकार है—

#### पक्वापक्वं दिवारात्रं वरान्तममृतोपमम्।

इन चारों पंक्तियोंका ग्रर्थ गीताप्रेसके महाभारतमें इस प्रकार है—

80

'पुत्र-शोकमें दुखी राजा सृंजयसे नारदजी कहते हैं—सृंजय ! सुना है कि संकृतिके पुत्र रिन्तदेव भी जीवित न रह सके । उन महामना नरेशके यहाँ दो लाख रसोइये थे, जो घरपर ग्राये हुए ब्राह्मण ग्रतिथियोंको ग्रमृतके समान मधुर कच्चे (दाल, भात इत्यादि) ग्रौर पक्के (पूड़ी, कचौड़ी, मिठाई, सब्जी ग्रादि) उत्तम ग्रन्न दिन-रात परोसते थे।'

म्रागे जाकर उसी म्रध्यायकी दो पंक्तियोंके म्रथंमें भी राहुल सांकृत्यायनने म्रथंका म्रनर्थ किया है। उनका पाठ इस प्रकार है—

#### तत्र स्म सूदाः क्रोशन्ति सुमृष्टमिराकुण्डलाः। सूपं भूयिष्ठमश्नीध्वं नाद्य मासंयथा पुरा॥

राहुल सांकृत्यायन इस क्लोकके 'मास' शब्दका पाठ 'मांस' बदलकर इसका ग्रर्थ करते हैं —

'रिन्तिदेवके यहाँ ब्राह्मणा श्रितिथि इतने बढ़ जाते थे कि उ रसोइयोंको मांसकी कमीके कारण सूप ज्यादा ग्रहण करनेकी प्रार्थना करनी पड़ती थी।'

शुद्ध पाठके अनुसार अन्वय और गीताप्रेसने जो इसका अर्थ किया है, वह

तत्र (वहाँ) सुमृष्टमिएाकुण्डलाः (विशुद्ध मिएामय कुण्डल धारएा किये) सूदाः (रसोइये) क्रोशन्ति स्म (पुकार-पुकारकर कहते थे) सूपं भूषिष्ठम्(ग्राप लोग खूव तरल पदार्थ—दाल, कढ़ी ग्रादि) ग्रश्नीध्वं (खाइये) यथा (वैसी) पुरा (पहले) मासं (एक मीहने तक) नाद्य (नहीं बनी थी)।

पूर्वोल्लिखित महाभारत द्रोगापर्व ६८२ की दूसरी पंक्तिमें । 'वरान्तममृतोपमम्' में ब्राह्मणोंको 'वरान्तम्' भोजन करानेकी बात् स्राती है जिसका अर्थ होता है 'ग्रमृत समान उत्तम स्रन्न'। यहाँ ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

'वरान्नम्' वाक्य ग्रमृत-तुल्य होनेसे 'परमान्नम्' का पर्यायवाची है। ग्रमरकोशमें 'परमान्नं तु पायसं' (ग्रमरकोश २.७.२४) बताया है, ग्रर्थात् पायस (दूध ग्रौर चावल से बनी शक्करयुक्त खीरू) ही परम ग्रन्न है जो पहिले भी बताया जा चुका है। ग्रतः राजा रिन्तदेवके यहाँ रसोईके लिये जो गायें बांधी जाती थीं वे पायसके लिये ग्रपने दूधको मुलभ करनेके लिये ही हो सकती है, न कि वध करके मांसके लिये । पशु-वधशाला न तो रसोईमें होती है ग्रौर न रसोईके निकट। वधशालामें इतनी गन्दगी होती है कि ग्रावाससे बहुत दूर नगर के बाहर रक्खी जाती हैं। ग्रतः यह सिद्ध होता है कि राजा रिन्तदेवके यहाँ न तो गोवध होता था ग्रौर न ग्रन्य पशुग्रोंका वध ग्रौर न किसी प्रकारका मांस खिलाया जाता था या खाया जाता था।

द्रोरापर्वका उपर्युक्त प्रसंग, अभिमन्यु-वधसे दुःखी राजा युधिष्ठिरको व्यासदेव द्वारा सान्त्वना देते हुए सुनाया गया लिखा है जा पूर्वकालमें पुत्र-शोकमें दुःखी राजा सृ जयको देविष नारदने सुनाया था । इसको भण्डारकर संस्था, पूना वालोंने क्षेपक मानकर ग्रपने महाभारतके

1. With the stanza commences the story of the Sixteen Great Kings, which is found duplicate in the Dronaparva. The occasion in Dronaparva, the death of Abhimanyu, would lead one to suppose that these sixteen stories must have been first told in the Dronaparva and subsequently repeated in the Shantiparva. But the fact seems to have been otherwise. There are also some variations in the names of the kings and in the sequence of the stories, as can be seen at a glance .....

As far as the Dronaparva list is concerned, since the Kashmir version omits the chapter altogether, it is obvious that there is a duplication from the Shantiparva original, probably by one interest in glorifying the Bhrigus.

(Bhandarkar Oriental Institute, Poona, Mahabharata, Vol. 13, Shantiparva—Rajdharma, page 649 of critical notes on chapter 29.)

संस्कररामें स्थान नहीं दिया है। यही शान्तिपर्वमें कूल-क्षयसे पीडित राजा युधिष्ठिरको पुनः भगवान् श्रीकृष्णाने संक्षेपमें सुनाया बताया गया है। वहाँपर गीताप्रेस ग्रौर चित्रशालाके महाभारत, शान्तिपर्व, ग्रध्याय २६ में १२८वां श्लोक इसी पाठ जैसा है, जिसमें श्लोकके ग्रन्तिम चररापें 'मासं' शब्दकी जगह चित्रशाला संस्कररामें 'मांसं' शब्द है ग्रीर गीताप्रेस संस्कररामें 'भोज्यं' गुब्द है । इसका पाठ 'भोज्यं' शब्द सहित राहुल सांकृत्यायनने भी स्वीकार किया है (देखिये 'वोल्गासे गंगा', पृष्ठ २२८, पाद-टिप्पगोकी ग्रन्तिम पंक्ति) । भण्डारकर संस्था, पूनाके संस्करगामें शान्तिपर्व, ग्रध्याय २६ में इस श्लोककी क्रम-संख्या १२० है ग्रौर वहाँ भी पाठ 'मांसं' है, किन्तु उन्होंने बताया है कि उनके पास बम्बई-शासन-संग्रहमें १८६१-६५ के पुराने हस्तलिखित ग्रन्थ क्रमांक १६८ में काश्मीरी शाखाका पाठ 'भोज्यं' है । ''ग्रहिंसा परमो धर्मः'' के सिद्धान्तोंके ग्रनुसार 'तत्र स्म सूदा.....ं श्लोकके ग्रन्तिम चररामें 'मांसं' पाठ सुसंगत नहीं होता । ग्रतः या तो 'मासं' या 'भोज्यं' पाठ ही ठीक है । ग्रतः राजा रन्तिदेवकी ख्याति दो हजार निर्दोष पशुस्रोंकी स्रौर दो हजार निर्दोष गायोंकी हत्याके द्वारा कदापि नहीं हो सकती, विलक उन पशुस्रों स्रौर गायोंको पालकर उनका दान करने से ही हो सकती है।

# राजा रन्तिदेवकी कोतिके महामारतमें वर्णित

राजा रन्तिदेवको ख्याति ग्रौर सिद्धि प्राप्त होनेका उल्लेख मह।भारत, शान्तिपर्व, गीताप्रेस ग्रौर चित्रशाला संस्करणके ग्रध्याय २६२ और भण्डारकर संस्था, पूनाके ग्रध्याय २८१ के श्लोक संख्या ७ में भी है। जहाँभी फल-मूल ग्रौर पत्र ग्रादि द्वारा ऋषियोंके सम्मानकी बात कही है, मांस द्वारा नहीं। श्लोक इस प्रकार है—

# रन्तिदेवेन लोकेष्टा सिद्धिः प्राप्ता महात्मना । फलपत्रेरथों मूलेर्मु नीर्नाचतवांश्च सः ॥

महाभारत, शान्तिपर्व—राजधर्मप्रकररा, ग्रध्याय २६ में कुलक्षयके शोकसे ग्रसित राजा युधिष्ठिरको समभाते हुए भगवान श्रीकृष्णिने, पुत्रशोकसे पीड़ित राजा सृंजयको नारदजी द्वारा वर्गित प्रसंग सुनाया था जिसमें पूर्वकालके कई गुरावान्—धर्म, ज्ञान, वैराग्य ग्रौर ऐश्वर्यसे युक्त

#### क्या राजा रन्तिदेवके यहाँ गोवध होता था ? उनकी कीर्तिके वास्तविक कारण

90

राजाश्रोंका उल्लेख है, जिन्होंने शुभ कर्मों द्वारा श्रनंक ख्याति पायी थी, श्रीर वे भी जीवित नहीं रहे — ऐसा बताया है। उन शुभ कर्मों में कहीं भी जीव-हिंसा या गो-हिंसा द्वारा ख्याति—प्राप्तिकी बात नहीं कही गयी है, बल्कि गायके दानकी बात ग्रनेक जगह श्रायी है। वहाँ राजा रन्तिदेवका भी उल्लेख है। गोदान द्वारा ख्याति-प्राप्तिके उदाहरग्य—

> शतं शतसहस्राणि वृषाणां हेममालिनाम् । गवां सहस्रानुचरं दक्षिणामत्यकालयत् ॥ (३४-३५; ३०)

इस श्लोकमें ग्रंगदेशके राजा वृहद्रथद्वारा एक करोड़ स्वर्णमालाधारी गायें ग्रौर बैल, सहस्रों सेवकोंके साथ दिये जानेका उल्लेख है।

तावतीः प्रददौ गाः स शिविरौशीनरोऽध्वरे । (४२ ; ३७)

इसमें राजा शिवि द्वारा ग्रपने यज्ञमें लाखों-लाखों गो-दान्की बात है।

शतं गवां सहस्रारिए शतमश्वतरारिए च। (११५; १०८) तावतीरेव गाः प्रादादामूर्तरयसो गयः। (११८; १११)

इसमें राजा गयके द्वारा लाख-लाख गायोंके दानकी बात है।

बाह्मरोभयो ददौ निष्कान् सदिस प्रतते नृपः । तुभ्यं निष्कं तुभ्यं निष्कमिति क्रोशन्ति वै द्विजाः ॥ सहस्रं तुभ्यमित्युक्तवा ब्राह्मराग्न् सम्प्रपद्यते । ग्रन्वाहार्योपकररां द्रव्योपकररां च यत् ॥ घटाः पात्र्यः कटाहानि स्थाल्यश्च पिठरागाः च । नासीत् किंचिदसौवरां रन्तिदेवस्य धीमतः ॥ सांकृते रन्तिदेवस्य यां रात्रिमवसन् गृहे । ग्रालभ्यन्त शतं गावः सहस्रागाः च विशतिः ॥

(१२४-१२७ ; ११७-११६)

ं (उपर्यु क्त श्लोकोंकी क्रम-संख्याके पूर्व ग्रंक गीताप्रेस ग्रौर चित्रशालाके महाभारतके हैं ग्रौर दूसरे ग्रंक भण्डारकर संस्था, पूनाके हैं।)

इन श्लोकोंमें राजा रिन्तिदेवके द्वारा सहस्रों निष्क ग्रौर हजारों गायोंके दान की बात है। 'ग्रालभ्यन्त' का ग्रर्थ यहाँ हिंसा नहीं है, बल्कि स्पर्श द्वारा गो-दान-कार्य सम्पादनकी बात है।

इस पूरे अध्यायमें राजा रिन्तदेव सिहत जितने भी राजाओं का ख्याति प्राप्तिकी बात बतायी गयी है उसमें कहीं भी जीव-हिंसा या गो-हिंसा द्वारा ख्यातिकी बात नहीं कही गयी है।

संसार भरमें जहाँ हिंसाको ग्रधमं नहीं मानते हैं वहाँपर भी हिंसाके द्वारा ख्याति मिले—ऐसी बात कहीं भी देखनेमें नहीं ग्रायी । हिंसा द्वारा ख्याति केवल युद्धमें-प्रदिशत पराक्रमसे होने वाली हिंसासे ग्रथवा निर्वलकी सबलसे रक्षा करनेमें हुई हिंसासे तो हो सकती है; ग्रन्य प्रकारकी हिंसासे नहीं । राजा रिन्तदेव द्वारा न तो यहाँ युद्धमें पराक्रम प्रदिशत है ग्रौर न सबलसे निर्वलकी रक्षा । ऐसी हालतमें में दो हजार निर्दोष पशुग्रों ग्रौर दो हजार निर्दोष गायोंकी हिंसा द्वारा उनकी ख्याति हुई हो—यह बात युक्तिसंगत प्रतीत नहीं होती, गोदान द्वारा ख्यातिकी वात ही संगत हो सकती है।

महाभारतमें स्थान-स्थानपर ग्रहिंसाकी प्रशंसा ग्रौर हिंसाकी बुराईकी गयी है (देखिये—धर्म शास्त्रोंमें 'ग्रहिंसा धर्मकी विशेषता' के ग्रन्तर्गत महाभारतके उद्धरएा) । ग्रनुशासनपर्व के गीताप्रेस संस्करएाके ग्रध्याय ११४, ११५ ग्रौर ११६ तथा भण्डारकर संस्करएाके ग्रध्याय ११५, ११६ ग्रौर ११७ तो पूरे ही ग्रहिंसा धर्मकी विशेषतापर हैं। उन ग्रध्यायोंके कुछ क्लोक नीचे ग्रथं सहित उद्धृत हैं:—

यथा नागपदेऽन्यानि पदानि पदगामिनाम् । सर्वाण्येवापि घीयन्ते पदजातानि कौञ्जरे ।। ११४.६ ; ११४.६ एवं लोकेष्वीहंसा तु निर्दिष्टा धर्मतः पुरा । ११४.७ ; ११४.६

जसे हाथीके पैरके चिन्हमें सभी पदगामी प्रािणयोंके पदचिन्ह समा जाते हैं, उसी प्रकार पूर्वकालमें इस जगत के भीतर धर्मतः ग्रहिंसाका निर्देश किया गया है, ग्रर्थात् ग्रहिंसा-धर्ममें सभी धर्मोंका समावेश हो जाता है।

> त्र्राहिसा परमो धर्मस्तथाहिसा परं तपः । त्र्राहिसा परमं सत्यं यतो धर्मः प्रवर्तते ॥ ११५.२३ ; ११६.२५

अहिंसा परम धर्म है, अहिंसा परम तप है और अहिंसा परम सत्य है; क्योंकि उसीसे घर्मका प्रवृत्ति होती है।

क्या राजा रिन्तदेवके यहाँ गोवध होता था ? चर्मेण्वती नदी वननेके सम्भाव्य कारण श्रीहंसा परमो धर्मस्तथाहिसा परो दसः।

आहसा परमा धमस्तथाहिसा परा दमः । अहिंसा परमं दानमहिंसा परमं तपः॥ ११६ २८ ; ११७ ३७ ;

अहिंसा परम धर्म है, अहिंसा परम संयम है, अहिंसा परम दान है और अहिंसा परम तपस्या है।

श्रीहंसा परमो यज्ञस्तथाहिसा परं फलम्। श्रीहंसा परमं मित्रमिहंसा परमं सुखम्॥ ११६.२६; ११७.३८ श्रीहंसा परम यज्ञ है, श्रीहंसा परम फल है, श्रीहंसा परम मित्र है श्रीर श्रीहंसा परम सुख है।

> सर्व यज्ञेषु वा दानं सर्वतीर्थेषु वाऽऽप्लुतम् । सर्वदानफलं वापि नैतत्तुल्यमहिंसया ॥ ११६.३० ; ११७.३६

सम्पूर्ण यज्ञोंमें जो दान किया जाता है, समस्त तीर्थों में जो गोता लगाया जाता है तथा सम्पूर्ण दानों का जो फल है—यह सब मिलकर भी अहिंसाके बराबर नहीं हो सकता।

इस प्रकार ग्रहिंसा धर्मका प्रतिपादन करनेवाले महाभारत ग्रन्थमें यदि राजा रन्तिदेवके यहाँ गोहिंसा या ग्रन्य पशु हिंसा हुग्रा करती तो उनकी कीर्तिका गान करना कभी सम्भव नहीं होता ।

### चर्मण्वती नदी बनने के सम्माव्य कारण

राहुल सांकृत्यायनने 'बोल्गासे गंगा' के पृष्ठ २२७ पर लिखा है '' रिन्तदेवके भोजनालयमें प्रति दिन दो हजार गायें मारी जाती थीं ग्रौर उनका गीला चमड़ा रसोईमें रखा जाता था, उसीका टपका हुग्रा जल जो वहा, वही एक नदी बन गया ग्रौर चर्मसे निकलनेके कारण उसका नाम चर्मण्वती पड़ा। प्रमाणमें उन्होंने शान्तिपर्वका श्लोक पाद-टिप्पणीमें दिया है जो इस प्रकार है—

#### महानदी चर्मराशेष्ट्रक्लेदात् समृजे यतः। ततश्चर्मण्वतीत्येवं विख्याता सा महानदी।।

यह श्लोक गीताप्रेस चित्रशाला ग्रौर भण्डारकर संस्थाके महाभारत, शान्तिपिर्व, ग्रध्याय २६ में हैं। श्लोककी क्रम-संख्यामें थोड़ा ग्रन्तर है। इस उद्भृत पूर्वापर श्लीकोंके साथ इसका विचार किया जाय, जो नीचे ग्रथं सहित

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

30

## प्राचीन भारतमें गोमांस-एक समीक्षा

दिये जाते हैं। इलोकोंकी क्रम संख्या गीताप्रेसके संस्करएाके अनुसार दी गई है।

उपातिष्ठन्त पशवः स्वयं तं संशितव्रतम् । ग्राम्यारण्यां महात्मानं रन्तिदेवं यशस्विनम् ॥१२२ ॥

50

कठोर व्रतका पालन करने वाले, यशस्वी महात्मा राजा रन्तिदेवके पास गाँवों ग्रौर जंगलोंके पशु ग्रपने-ग्राप यज्ञके लिये उपस्थित हो जाते थे।\*

महानदी चर्मराशेरुत्वलेदात् ससृजे यतः। ततश्चर्मण्वतीत्येवं विख्याता सा महानदी ।।१२३।।

वहाँ भीगी चर्मराशिसे जो जल बहता था, उससे एक विशाल नदी प्रकट हो गयी, जो चर्मण्वती (चम्बल) के नामसे विख्यात हुई।

बाह्मरोभयो ददौ निष्कान् सदिस प्रतते नृपः। तुभ्यं निष्कं तुभ्यं निष्कमिति क्रोशन्ति वै द्विजाः ॥१२४॥ सहस्रं तुभ्यमित्युक्तवा ब्राह्मरागन् सम्प्रपद्यते।

राजा ग्रपने विशाल यज्ञमें ब्राह्मणोंको सोनेके निष्क दिया करते थे। वहाँ द्विजलोग पुकार-पुकारकर कहते थे कि ब्राह्मणों! यह तुम्हारे लिये निष्क है, यह तुम्हारे लिये निष्क है, परन्तु कोई लेने वाला ग्रागे नहीं बढ़ता था। फिर वे यह कहकर कि तुम्हारे लिये एक सहस्र निष्क हैं, लेने वाले ब्राह्मणोंको उपलब्ध कर पाते थे।

ग्रन्वाहार्योपकरग्गं द्रव्योपकरग्गं च यत् ।।१२५।। घटाः पात्र्यः कटाहानि स्थाल्यश्च पिठराग्गि च । नासीत् किंचिदसौवर्गं रन्तिदेवस्य घीमतः ।।१२६।।

बुद्धिमान् राजा रिन्तदेवके उस यज्ञमें ग्रन्वाहार्य ग्रग्निसे ग्राहुित देनेके लिये जो उपकरण थे तथा द्रव्य-संग्रहके लिये जो उपकरण—घड़े, पात्र, कड़ाहे, बटलोई ग्रीर कठौते ग्रादि समान थे, उनमें से कोई ऐसा नहीं था, जो सोनेका बना हुग्रा न हो।

सांकृते रन्तिदेवस्य यां रात्रिमवसन् गृहे। ग्रालभ्यन्त शतं गावः सहस्राणि च विश्वतिः।।१२७।। संकृतिके पुत्र राजा रन्तिदेव के घरमें जिस रातको ग्रतिथियोंका समुदाय

<sup>\*</sup> ग्रगले पृष्ठ पर पाद टिप्पणी देखिये।

#### क्या राजा रन्तिदेवके यहाँ गोवध होता था ? चर्मएवती नदी वननेके सम्भाव्य कारण

58

निवास करता था, उस समय उन्हें बीस हजार एक सौ गौएं छूकर दी जाती थीं।

#### तत्र स्म सूदाः क्रोशन्ति सुमृष्टमिग्कुण्डलाः। सूपं सूयिष्ठमश्नीध्वं नाद्य भोज्यं यथा पुरा॥१२८॥

वहाँ विशुद्ध मिर्गामय कुण्डल धारण किये रसोइये पुकार-पुकारकर कहते थे कि ग्राप लोग खूब दाल-भात खाइये। ग्राजका भोजन पहले-जैसा नहीं ग्रर्थात् पहलेकी ग्रपेक्षा बहुत ग्रच्छा है।

इस प्रकारसे यह स्पष्ट है कि राजा रिन्तदेवके यहाँ हिंसा नहीं होती थी। हिंसा हुआ करती तो यज्ञमें भरनेके लिये पशु अपने आप नहीं आते। अध्यपने आप आनेका भाव स्पष्ट यही है कि वे स्नेह देने और स्नेह प्राप्त करने आते थे। गौ आदि पशु यज्ञके लिये दूध आदि देनेको या अन्य सेवा करनेको ही आते थे। आगे चलकर राजा रिन्तदेव द्वारा दानकी बात बतायी गयी

\*मुनिगन निकट विहग मृग जाहीं । बाधक बिषक विलोकि पराहीं ।। (रामचरितमानस, ग्रयोध्या काण्ड, दोहा संख्या २६३ ग्रौर २६४ के वीच)

मुस्लिम सन्तोंकी जीवनींका परिसयन भाषाका एक ग्रन्थ है, जिसका नाम है 'तज्किरत्-उल-ग्रौलिया'। इसका उर्दू श्रनुवाद 'ग्रब्बार-उल-इतकया' (सन्तोंकी जीवन घटनाएँ) नामसे प्रकाशित हुग्रा है। उसके पृष्ठ ५६, पंक्ति १६-२३ पर एक घटना का वर्णन इस प्रकार है—

"हज़रत राबिग्रा बसरी एक बार पहाड़पर गयीं। तमाम शिकारी जानवर उनके गिर्द जमा होकर ग्रापकी तरफ देखने लगे। इतने में हज़रत हसन बसरी वहाँ पहुँचे। सब जानवर उनको देखकर भाग गये। हसन बसरीने दरयाफ्त किया कि जानवर मुफी देखकर क्यों भागे ग्रीर तुम्हारे पास क्यों खड़े रहे? हज़रत राबिग्राने पूछा—"तुमने क्या खाया हैं?" उत्तर मिला—"मैंने गोश्त-रोटी खायी है।" उन्होंने कहा—"जब तुमने गोश्त खाया है तो वे तुमसे क्यों न भागेंगे।"

इस घटनाका वर्णन 'सस्ता साहित्य मण्डल', नयी दिल्लीसे प्रकाशित हिन्दीमें 'सूफ़ी सन्त-चरित्र' १६६१ के संस्करणके पृष्ठ १६ पर भी है।

इससे स्पष्ट है कि राजा रन्तिदेवके यहाँ पशु अपने आप मरनेके लिये नहीं आते थे, बल्कि स्नेह देने और स्नेह लेनेके लिये आते थे। है। इससे यह प्रतीत होता है कि राजा रन्तिदेव उन पशुग्रोंको यज्ञके समय दानमें देते थे। दानमें देनेके पूर्व उनको जलसे स्नान करवाकर, धी-पोंछकर स्वच्छ बनाकर उनका शृंगार किया जाता होगा ग्रौर उस स्नान करानेसे उनके चर्मका घोना होता था। उस चर्मसे जो जल बहता था उससे नदी बनी जो चर्मण्वती (चम्बल) नामसे विख्यात हुई। राहुल सांकृत्यायनके लिखनेका भाव होता है कि रसोईमें गायोंको काटा जाता था ग्रीर मांस पकाया जाता था तथा कत्लके बाद मांसका उपयोग करके चर्म वहीं रसाईमें (भोजनालय-में) रक्खा जाता था, उससे टपका हम्रा जल जो वहा, वही नदी बन गया। पहली बात तो यह है कि जो मांसाहारी हैं, वे भी पश्को भोजनालयमें नहीं काटते श्रीर न भोजनालयमें चर्म रखते हैं श्रीर मारे हए पश्के मत-चर्मसे टपकी हुई बूदें इतनी अधिक मात्रामें नहीं होती हैं कि उनसे नदी बन जाय। श्रतः राहुल सांकृत्यायनकी यह ग्रसम्भव कल्पना मान्य नहीं हो सकती। पूर्वापर प्रसंगके अनुसार अपने आप आये हुए पशुओंको दानके पूर्व स्नान करानेसे जो जल बहता था वह जीवित अशुओं के चर्मकी घोवन होती थी ग्रीर उसी जलसे जो नदी बनी उसीका नाम चर्मण्वती पडना ग्रधिक यक्ति-संगत है।

मोनियर विलियम्सके संस्कृत-ग्रंग्रेजी कोशमें 'चमण्वती' के दो अर्थ दिये हैं—एक तो उस नदीका नाम जो बुन्देलखण्डके मध्य बहती हुई गंगामें जा मिलती है जिसको ग्राजकल 'चम्बल' नदी कहते है; दूसरा ग्रर्थ है Musa Sapientum—यह वनस्पतिशास्त्र(botany)में सामान्य बदली (केलेके वृक्ष) का पारिभाषिक नाम है। Musa शब्द अरबीके 'मौजः' शब्दका तथा संस्कृत के 'मोच' शब्द का पर्यायवाची है। यह भी सम्भव हो सकता है कि जिस प्रदेशके भीतरसे चर्मण्वती (चम्बल) नदी बहा करती थी किसी समयमें वहाँ Musa Sapientum कदली बन रहा हो, इसीसे उसका नाम चर्मण्वती पड़ गया हो और वहाँ पर राजा रन्तिदेव द्वारा दान दिये जाने वाली गायें चरा करती हों तथा इसीलिये गोदान द्वारा फैली हुई राजा रन्तिदेवकी कीर्तिमें चर्मण्वती नदीका भी उल्लेख ग्राया हो। जो भी हो, इतना तो निश्चय है कि राजा रन्तिदेवके रसोईघरमें मारी गयी गायोंके एकत्रित किये हुए चर्मकी ढेरोसे टपकी हुई रक्तकी बूंदोंके बहावसे चर्मण्वती नदी बनी—यह बिल्कुल निराधार बात है ग्रौर न चर्मसे टपकी हुई रक्तकी बूंदोंके कारण उसका नाम 'चर्मण्वती' पड़ा। ग्रतः राजा रन्तिदेवकी कीर्तिमें

#### क्या राजा रन्तिदेवके यहाँ गोवध होता था ? श्रीमद्भागवतमें रन्तिदेव

53

चर्मण्वती नदीके उल्लेखसे यह कदापि प्रमाणित नहीं हो सकता कि उनकी रसोईमें गायें मारी जाकर वहाँ उनका चर्म एकत्रित होता था तथा उससे रक्तकी बूंदे टपककर नदीका बहाव बन गया ग्रौर इसलिये उस नदीका नाम चर्मण्वती पड़ गया।

प्रसंगको ग्रादिसे ग्रन्त तक ध्यानपूर्वक देखा जाय तो राजा रन्तिदेवके यहां गोमांसकी संगति कहीं भी नहीं बैठती, गोदानकी जरूर बैठती है।

### श्रीमद्भागवतमें रन्तिदेव

श्रीमद्भागवत महापुराणमें भी नवें स्कन्धके २१वें भ्रध्यायमें राजा रिन्तदेवका इतिहास दिया है, जिसका सारांश इस प्रकार है—

राजा रन्तिदेव इतने उदार थे कि ग्रपने स्वयंके लिये ग्रथवा परिवारके लिये चिन्ता किये विना जो कुछ उनके पास था या जो उन्हें प्राप्त होता था, वह सब कुछ दूसरोंको दे दिया करते थे। एक बार ४८ दिन तक उनको भूखा रहना पड़ा। उसके बाद उन्हें खीर (दूध-चावलके मिश्रग्रासे बना भोजन), हलवा इत्यादि प्राप्त हुमा। जैसे हो वे भोजन करने बैठे, एक ब्राह्मए ग्राया, जिसके भीतर राजा रिन्तदेवने भगवानको ही देखा ग्रौर उन्होंने उसका ग्रादरपूर्वक स्वागत किया। जब ब्राह्मएा खाकर चला गया, तब राजा श्रपने परिवार सहित बचा हुग्रा भोजन करनेके लिये बैठे, तभी एक श्रूद्र ग्रा गया । राजाने उस ग्रतिथिको भी भोजनका एक ग्रंश दिया। जैसे ही शुद्र म्रतिथि गया, एक दूसरा म्रतिथि कुछ कृत्ते साथ लिये हुए पहुँचा भौर उसने अपने भूखे कृत्तोंके लिये भोजन मांगा। राजा रन्तिदेवने बड़े आदरके साथ बचा हुग्रा सम्पूर्ण भोजन दे दिया ग्रौर उन्हें भगवान्का रूप मानकर प्रणाम किया । भ्रव उनके पास केवल भोजन पकाये हुए वर्तनोंका धोवन-पानी बचा हुम्रा था ग्रौर वह भी केवल एक व्यक्तिके लिये ही पर्याप्त था । वे सकुटुम्ब ग्रापसमें बाँटकर उस पानीको पीने ही वाले थे कि पानीकी खोज करता हुमा एक प्यासा चाण्डाल म्रा पहुँचा। राजाको दया म्रा गयी भीर उन्होंने सारा पानी उसे दे दिया भ्रौर स्ष्टिकत्त्ति प्रार्थना की-

न कामयेऽहं गतिसीः इवरात् परामर्ष्टिद्धियुक्तामपुनर्भवं वा । भ्राति प्रपद्येऽखिलदेहभाजामन्तः स्थितो येन भवन्त्यदुःखाः ॥ (श्रीमद्भागवत ६.२१.१२)

ग्रर्थात्—''हे भगवन् ! न तो मैं ग्रब्टसिद्धियोंसे युक्त सर्वोच्च स्थान चाहता हूँ

ग्रौर न मुक्ति । मैं केवल इतना चाहता हूँ कि प्राणिमात्रके ग्रन्तः करणमें बैठकर उनके दुं:खोंको स्वयं सहन कर लूँ, जिससे कि सभी प्राणी ग्रपने सभी प्रकारके दुःखोंसे बच सकें।"

जो व्यक्ति भगवानसे यह वर माँग रहा है कि मुभे मोक्ष नहीं चाहिये, स्वर्ग नहीं चाहिये, योग-साधनाके द्वारा प्राप्त होनेवाली ग्रष्टिसिद्धियाँ ग्रौर नविनिध्याँ नहीं चाहिये, त्रिलोकीका साम्राज्य भी नहीं चाहिये, किन्तु मुभे चाहिये सारे संसारके प्राणियोंका दुःख, जिसे मैं ही ग्रकेला भोग लूँ ग्रौर संसारके सब प्राणियोंको ग्रपने सम्पूर्ण ग्रागे-पीछेके जन्मोंके पाप कर्मोंके फलस्वरूप प्राप्त होनेवाले दुःख न भोगने पड़ें, वे सुखी हो जायँ ग्रौर उनके बदले उनका दुःख मैं भोग लूँ—पाठकोंको स्वयं निर्णय करना चाहिये कि इतने उच्च चरित्रके वे राजा रिन्तिदेव कभी भी किसी भी जीवधारीको ग्राधात पहुँचानेकी बात सोच भी सकते हैं क्या ? उन्हें मार डालना तो ग्रलग रहा।

जैसा ऊपर उल्लेख हो चुका है कि महाभारत, वनपर्वके ग्रध्याय २०६ में हिंसा-ग्रहिंसाका विवेचन है एवं उसमें कोई भी ऐतिहासिक उदाहरएए नहीं दिया गया है, तब राजा रिन्तदेवको ही कहाँसे घुसेड़ दिया गया ग्रीर वह भी प्रतिपादित विषयके विरुद्ध एवं खण्डनमें। अर्थात् प्रतिपादित विषयके विरुद्ध एवं खण्डनमें। अर्थात् प्रतिपादित विषय है—ग्रहिंसा परम धमं है, सब प्रकारसे ग्राचरणीय है, हिंसा ग्रधमं है, ग्राचरणीय नहीं है ग्रीर राजा रिन्तदेवका इस रूपमें उदाहरएए कि २००० निर्दोष पशुग्रोंकी एवं २००० निर्दोष गायोंकी प्रतिदिन हत्या करवाकर उसने बड़ा भारी यश कमाया था—मिथ्या होनेके साथ-साथ ग्रप्रासंगिक होनेसे निश्चय ही प्रक्षिप्त है, गोमांस-भक्षी लोगोंने इसको यहाँ जबरदस्ती घुसेड़ दिया है, जिससे कि दूसरे लोग भी भ्रमित हो जायँ। महाभारत, शान्तिपर्व, ग्रध्याय २६५, श्लोक ६ इसका प्रमाण है—

# मुरा मत्स्या मधु मांसमासवं कृसरौदनम्। घूर्तैः प्रवर्तितं ह्योतन्नैतद् वेदेषु कल्पितम्॥

श्रर्थात्—सुरा, मत्स्य, मघुसे बनी शराब, श्रासव, तिल-चावलकी खिचड़ी, मांस श्रादिका यज्ञोंमें उल्लेख धूर्तीने घुसेड़ दिया है, ये सब वेदोंके द्वारा प्रतिपादित नहीं हैं।

#### क्या राजा रन्तिदेवके यहाँ गोवध होता था?

'बध्येते' का व्याकरण शुद्ध अर्थ

यदि प्रतिपक्षियों की यही जिद्द हो कि ये श्लोक प्रक्षिप्त नहीं हैं तब भी इन क्लोकोंसे पूर्वापर विषयके सम्बन्धको लेकर इन क्लोकोंका तात्पर्य 'दो हजार निर्दोष पशुँ भौर दो हजार निर्दोष गायोंके मारनेका' कदापि नहीं हो सकता क्योंकि दोनों क्लोकोंमें 'वध्येते' शब्दका प्रयोग स्राया हुस्रा है जिसका ग्रर्थ 'गोवधके पक्षपाती मारना' करते हैं, किन्तु संस्कृत व्याकरगामें 'बघ' धातु स्वतन्त्र है ही नहीं जिसका 'मारना' ग्रर्थ हो सके, बल्कि मारनेके ग्रर्थमें 'हन्' धातुका प्रयोग हुग्रा है । यह बात महाभाष्य (२.४.४२-४३) के 'उद्योत' तथा 'ण्वुल्तृचौ' (३.१.१३३) कृदन्तके 'शब्देन्दुशेखर' में स्पष्ट है। इस 'हन्' धातुके स्थानमें 'वध' श्रादेश होता है। पागिनिका सूत्र है — 'हनो वध लिङि लुङि च'। इस सूत्रका ग्रर्थ 'हन्' धातुको 'वध' ग्रादेश होता है 'लिङ्' और 'लुङ्' लकारोंमें । 'लिङ्' लकार दो प्रकारके होते हैं - एक 'विधिलिङ' ग्रौर दूसरा 'ग्राशिषलिङ्'। दोनों प्रकारके 'लिङ्' में 'वध' ग्रादेश नहीं होता, किन्तुं केवल 'ग्राशिषलिङ्' में ही होता है, जिसका अर्थ 'आशीर्वाद देना' होता है। क्योंकि 'वध' आदेश करने वाले सूत्रके पहले पारिएनीका सूत्र है - 'ग्रार्ध-धातुके (इत्यधिकृत्य)', —इसका ग्रर्थ है कि ग्रार्ध-धातुकमें ही 'हन्' को 'वध' ग्रादेश होता है, 'सार्वधातुक' में नहीं । इन दो लकारों (ग्रर्थात् ग्राशीर्वाद ग्रर्थमें ग्रौर भूतकाल अर्थमें) के सिवा ग्रौर कहीं भी 'हन्' धातुको 'वध' ग्रादेश होता ही नहीं। 'वध्येते' प्रयोग इन दो लकारोंका नहीं है। उन दो लकारोंमें तो 'ग्रवधीत्' ग्रौर 'वध्यात्' बनता है, 'वध्येते' तीन कालमें भी नहीं बन सकता, क्योंकि 'वध्येते' यह वर्तमान काल ग्रर्थवाले 'लट्' लकारका प्रयोग है । इस लकारमें 'हन्' धातुको 'वध' ग्रादेश नहीं होता । इसलिए उसके प्रयोग 'हन्यते' 'हन्येते' इत्यादि बनते हैं, जैसा कि 'न हन्यते हन्यमाने शरीरे' (गीता २।२०), यह 'मारने' म्रर्थमें 'हन्' घातुका प्रयोग है । यदि वर्तमान कालमें 'वध' स्रादेश होता तो 'न वध्यते वध्यमाने शरीरे'—ऐसा होना चाहिये था। किन्तु यह सभी जानते हैं कि ऐसा नहीं है। इसलिये महाभारतके रन्तिदेव प्रकरणमें ग्राये हुए दोनों श्लोकोंके 'वघ्येते'—ये प्रयोग 'हिंसा' — ग्रर्थवाले 'हन्' धातुके प्रयोग नहीं माने जा सकते । स्वतन्त्र 'वध' धातु 'हिंसा' ग्रर्थमें संस्कृत व्याकरणमें कोई है नहीं । तब यह सोचना पड़ेगा कि यह 'वध्येते' किस धातुका प्रयोग है। स्रतः यही निश्चय होता है कि यह प्रयोग 'हिंसा' म्रर्थवाले 'हुन्' धातुका नहीं है, बल्कि बन्धन

54

ग्नर्थवाले 'बध बन्धने' धातुका है। संस्कृत व्याकरणमें 'ब' कार 'व' कार,
'र' कार 'ड' कार ग्रौर 'ल' कार 'र' कार—इनका ग्रभेद होता है ग्रर्थात्
'व' की जगह 'ब' ग्रौर 'ब' की जगह 'व' का प्रयोग, 'र' की जगह 'ड'
ग्रौर 'ड' की जगह 'र' का प्रयोग तथा ल' की जगह 'र' ग्रौर 'र' की
जगह 'ल' का प्रयोग क्षम्य माना गया है।

## महाकवि कालिदासके मेघदूतमें रन्तिदेव

महाकिव कालिदासने भी ग्रपने 'मेघदूत' काव्यमें 'पूर्वमेघ' में एक श्लोकमें राजा रिन्तदेवकी कीर्तिका उल्लेख किया है, जिसकी क्रम संख्या किसी संस्करणमें ४५ है, किसीमें ४८ ग्रौर किसीमें ४६। उस श्लोकका संधिविच्छेद ग्रथं सहित नीचे उद्धृत किया जाता है—

श्वाराघ्य एनम् शरवणभवम् देवम् उल्लङ्घिताघ्वा

प्रमुक्तिमागः।

इसमेंके 'सुरिभतनया-ग्रालम्भजाम् परिरणतां भुवि स्रोतोमूर्त्या' ग्रंशकी मल्लीनाथने ग्रपनी 'संजीवनी' व्याख्यामें निम्न प्रकारसे टीका की है—

पुरा (प्राचीनकालमें) किल (निश्चय ही) राज्ञो रन्तिदेवस्य (राजा रन्तिदेवके) गवालम्भेषु (गौग्रोंके ग्रालम्भमें) एकत्र (एक स्थानपर)

#### ( पृष्ठ ८६, पंक्ति ५ के बाद जोड़ दिया जाय )

ग्रथर्ववेदमें विवाह प्रकरणमें १४.१.२६ मन्त्रके तथा ऋग्वेदमें १०.८५.२८ मन्त्रके उत्तरार्द्धमें 'बध्यते' शब्द स्पष्ट रूपसे 'बाँधने' के अर्थमें ग्राया है —''पितर्बन्धेषु बध्यते—पित बन्धनमें बाँधा जाता है।''

ग्रतः इस क्लोकका यथार्थ भाव होगा—दो हजार गायें राजा रिन्तदेवके यहाँ बराबर दिन-रात राजा रिन्तदेवके रसोई घरके पास बँधी रहती थीं जिससे कि अतिथियोंको सेवाके लिये जब भी ग्रावक्यकता हो उनसे दूध आदि मिल सके ग्रीर दो हजार ग्रन्य पशुग्रोंके बँधे रहनेका तात्पर्य यह हो सकता है कि ग्रतिथियोंके सेवा-सत्कारके लिये ग्रावक्यक भार ढोनेमें उनकी सेवाका उपयोग हुग्रा करता होगा।

स्मरण रहे कि राजा रिन्तदेव सम्बन्धी ये क्लोक महाभारतके सब संस्करणोंमें नहीं मिलते हैं। जैसा कि पहले कहा जा चुका है— धर्मव्याधने कौशिक ब्राह्मणको अनेक धर्मों तथा कर्त्तव्योंका उपदेश देते हुए कोई भी ऐतिहासिक उदाहरण नहीं दिया है। धर्मव्याध श्रौर कौशिक ब्राह्मणका संवाद वनपर्वके १० ग्रध्यायोंमें है, जिनमें सब मिलाकर लगभग एक वर्षके दिनोंके बराबर क्लोक हैं। उनमें-से लगभग २० क्लोक धर्मव्याधके पूर्व-जन्मके वृत्तान्तके हैं ग्रौर लगभग पौन सौ क्लोक प्रक्त ग्रादिके हैं। इस प्रकार २५० से ग्रधक क्लोक धर्मव्याधके उपदेशके हैं। उनमें किसी भी धर्म या कर्त्तव्यके सम्बन्धमें कोई भी ऐतिहासिक उदाहरण नहीं दिया गया है। केवल ग्रहिसा धर्मके प्रतिपादन करनेमें प्रतिपादित विषयके विषद्ध प्रतिपक्षियों द्वारा किये गये ग्रथंके ग्रनुसार हिंसाके द्वारा ग्रतुल कोर्ति मिलनेका ऐतिहासिक उदाहरण प्रसंगके विपरीत होनेके साथ-साथ धर्मव्याधको उपदेश-पद्धतिके भो विपरीत होनेसे राजा रिन्तदेव सम्बन्धी इन क्लोकोंकी यथार्थता भी सन्देहजनक है।

F F T Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

# क्या राजा रन्तिदेवके यहाँ गोवध होता था ?

संभृताद् (इकट्ठे हुए) चर्मराशेः (चर्मराशिसे) रक्तनिष्यन्दात् (रक्त टपकनेसे) काचित् (कोई) नदी (नदी) सस्यन्दे (वह पड़ी)। सा (वह) चर्मण्वती (चर्मण्वती) इति श्राख्यायत (नामसे प्रख्यात है) इति ॥

50

इसी ग्रंशकी व्याख्या पं० माधव शास्त्रीने सुन्दरलाल जैन, पंजाब संस्कृत पुस्तकालय, लाहौरसे प्रकाशित 'काव्यसारसंग्रह' (१६२६ संस्कर्णा) के पृष्ठ १८ पर इस प्रकार की है—

सुरभितनया —गावः, तासां श्रालम्भनं — प्रोक्षरां, ततो जातां — प्रसूतां, भुवि, च स्रोतोमूर्त्या — प्रवाहरूपेरा, परिरातां — रूपान्तरं गताम्। इसका ग्रर्थ होता है —

सुरिभतनया जो गायें हैं, उनका म्रालम्भन, ग्रर्थात् जलसे प्रोक्षरण (पिवत्रीकररण) हुग्रा । उस कार्यसे उत्पन्न पृथ्वीपर स्रोतका प्रवाह रूपमें रूपान्तर हुग्रा ।

पं० माधव शास्त्रीने 'ग्रालम्भ' का ग्रर्थ प्रोक्षण—जलके द्वारा पिवत्रीकरण करके उसके द्वारा स्रोतका प्रवाह बताया है, जो केवल जलके छींटोंसे
पिवत्रीकरण करनेसे सम्भव नहीं हो सकता, बिल्क जलकी धारासे प्रोक्षण—
स्नान करानेसे ही सम्भव हो सकता है। यद्यपि उन्होंने इसके बाद राजा
रिन्तदेव द्वारा गोहत्या बतायी है—जो महाभारतमें स्थान-स्थानपर राजा
रिन्तदेवके वर्णन ग्रौर पूर्वापर प्रसंगके ग्रनुसार ठीक नहीं है —िकन्तु उन्होंने
'ग्रालम्भन' शब्दका सीधा ग्रर्थ हिंसा नहीं किया (इसी प्रकरणमें—
'ग्रालम्यन्त' 'ग्रालम्भन' ग्रादि शब्दोंके ग्रर्थ—उपशीर्षक देखिये)। कोई भी
बुद्धिमान व्यक्ति पक्षपातरहित होकर विचार करे तो इसी निष्कर्षपर
पहुँचेगा कि महाभारतमें जहाँ-जहाँ भी राजा रिन्तदेवके सम्बन्धमें उल्लेख है,
उनमें कहीं भी पूर्वापर प्रसंगके ग्रनुसार राजा रिन्तदेवके द्वारा हिंसा
प्रमाणित नहीं होती बिल्क गोदान ही प्रमाणित होता है जिसके कारण
उनकी कीर्ति फैली ('राजा रिन्तदेवकी कीर्तिके महाभारतमें विणित वास्तिवक
कारण' उपशीर्षक इसी प्रसंगमें देखिये)।

हिन्दू धर्मशास्त्रोंमें ग्रौर ईसाईयोंके धर्मग्रन्थोंमें गोहिसा वर्जित है; मुस्लिम धर्ममें भी गोमांस खाना हानिकारक बताया गया है (क्या वैदिक कालमें गोहिसा, मांसपरक यज्ञ ग्रौर मांस-भक्षरा प्रचलित थे? प्रबन्ध देखिये)। ग्रतः बुद्धिमान मनुष्य यह स्वीकार नहीं कर सकता कि राजा रिन्तदेवकी कीर्तिमें गोहिसा जनित जघन्य कार्य कारण रहा हो। ऐसी हालतमें महाभारतके 'म्रालभ्यन्त' ग्रौर महाकवि कालिदासके 'म्रालम्भ' शब्दोंका ग्रर्थ हिंसापरक नहीं हो सकता।

एक बात और भी विचारगीय है। मिल्लिनाथका कहना है कि गौग्रोंके आलम्भसे एक स्थानपर इकट्ठी हुई चर्म राशिसे टपकते हुए रक्तसे कोई नदी बह पड़ी, वह चर्मण्वती नामसे प्रख्यात है। इस व्याख्याका ग्राधार भी महाभारत, शान्तिपर्व, ग्रध्याय २६ का श्लोक ही हो सकता है जिसका उल्लेख ग्रौर विवेचन ऊपर हो चुका हैं ('चर्मण्वती नदी बननेके सम्भाव्य कारग्।' उपशीर्षक देखिये)।

ग्रव पाठक स्वयं विचार करें कि रक्तकी वात न तो महाकवि कालिदासके काव्यके मूल पाठमें है ग्रौर न उसके प्रमाणका कोई ग्राधार ही है—ऐसी मल्लिनाथकी चर्मण्वतो नदी बननेकी व्याख्या किसी भी बुद्धिमान व्यक्तिके द्वारा स्वीकार नहीं की जा सकती।

## 'आलम्यन्त' 'आलम्म' आदि राब्दोंका अर्थ

तत्वज्ञ मुनि श्रीपाणिनिके व्याकरण-शास्त्रमें ६७५ संख्यामें 'डुलभण्-प्राप्तों' घातु म्वादिगण्में है, इसका 'लभते' रूप बनता है। समस्त शास्त्रोंके स्रादर करनेवाले लोग पाणिनी व्याकरणको ही सर्वश्रेष्ठ, महत्वपूर्ण और प्रामाणिक मानते हैं, इसमें 'प्राप्त करने' के सिवाय और दूसरा अर्थ बनता ही नहीं। व्याकरण शास्त्र बहुत बड़ा और गहन है—'श्रनन्त पारं किल शब्दशास्त्र'। स्रतः इस दृष्टिसे कि 'लभ' धातुका व्याकरण शब्द-शास्त्रमें सौर भी सर्थ सम्भव हो सकता है क्या?—इसी समीक्षामें व्याकरण शास्त्रके धातुपाठका स्रन्वेषण किया गया तो प्रतीत हुम्ना कि प्रेरणा स्रर्थक 'लभ' धातु भी है, जिसको 'प्रेरणा' स्रर्थमें मैत्रायणी-संहितामें, सायण-भाष्यमें, चान्द्र व्याकरणमें, जैनेन्द्र व्याकरणमें, काशकृत्सन व्याकरणमें, कातन्त्र व्याकरणमें, शाक्टायन व्याकरणमें और हेमचन्द्र व्याकरणमें स्वीकार किया है। भारतवर्षकी ज्ञानमयी नगरी वाराणसीमें वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालयसे भी 'धातुपाठसमीक्षा' का प्रकाशन हुम्ना है, उसमें भी हिसा-प्रर्थक 'लभ' घातु कहीं भी उपलब्ध नहीं है।

किसी महानुभावका इस प्रकार कहना है—

'पागि निके कुछ पूर्व ही 'लम्भ' धातुके 'तिङन्त' के प्रयोग संस्कृत

## क्या राजा रन्तिदेवके यहाँ गोवध होता था ?

58

भाषामें ग्रस्वीकार हो जानेके कारण वैयाकरणोंने 'लम्भ' धातुका धातुपाठमें संग्रह नहीं किया ग्रौर लम्भ' धातुसे निष्पन्न होनेवाले शब्दोंका सम्बन्ध 'लभ' धातुसे जोड़ दिया गया जिससे 'ग्रालभ' ग्रौर, ग्रालम्भ' दोनों शब्दोंके ग्रर्थ समान माने जाने लगे; वस्तुतः 'लभ' ग्रौर 'लम्भ' दोनों धातुग्रों ग्रौर उससे वननेवाली क्रियाग्रोंका ग्रर्थ भिन्न है; 'लभ' धातुके दो ग्रर्थ हैं—१. प्राप्ति ग्रौर २, स्पर्श; तथा 'लम्भ' धातुके भी दो ग्रर्थ हैं—१. हिंसा ग्रौर २. स्पर्श; तात्पर्य यह है कि 'लभ' धातुका 'ग्रालभ' ग्रौर 'लम्भ' धातुका 'ग्रालम्भ' दोनों 'स्पर्श' अर्थमें समानार्थक हैं; इतना निश्चय है कि 'ग्रालभ' का कहीं 'हिंसा' ग्रर्थ नहीं है ग्रौर 'ग्रालम्भ' का 'प्राप्ति' ग्रर्थ नहीं है।

इसकी पुष्टिमें उन्होंने कोई शास्त्रीय या ऐतिहासिक प्रमाण नहीं बताया।

'लम्भ' का हिंसापरक अर्थ किसी भी कोषमें नहीं मिलता। योरोपके पिण्डतोंने संस्कृतका अध्ययन और संस्कृत शब्दोंके अर्थके अन्वेषणमें जितना परिश्रम किया है उतना आधुनिक कालमें किसीने नहीं किया। किसी भी शब्दका हिंसापरक अर्थ कभी रहा होता तो वह उनके अन्वेषणमें छिप नहीं सकता था क्योंकि योरोपके उन पिण्डतोंका ध्येय ही 'हिन्दू धर्मशास्त्रोंमें हिंसाका विधान है'— इसीका प्रचार करना था।

'श्रा' के जितने भी श्रर्थ विभिन्न कोषों में मिलते हैं उनके श्रनुसार भी 'लभ' या 'लमभ' में 'श्रा' उपसर्ग लगानेपर भी 'श्रालभ' या 'श्रालमभ' का 'हिंसा' श्रर्थ नहीं बनता । तब भी कोषकारोंने 'श्रालभ' श्रौर 'श्रालमभ' दोनोंका ही हिंसापरक श्रथं भी किया है जो रूढ़ि श्रथंमें ही सम्भव हो सकता है तथा उन कोषोंने दोंनों शब्दोंके ही 'ग्रह्ण करने, स्पर्श करने, पकड़ने' ग्रादि श्रहिंसापरक श्रर्थ भी किये हैं । व्याकरणकी व्युत्पत्तिके हिसाबसे 'श्रालभ' श्रौर 'श्रालम्भ' के हिंसापरक श्रर्थ न रहनेपर भी जब कोषोंमें उनके हिंसापरक श्रर्थ भी स्वीकार कर लिये गये श्रौर कई स्थानोंपर इन शब्दोंका 'हिंसा' श्रर्थमें प्रयोग भी हुश्रा देखनेमें श्राता है तब जिस-जिस प्रसंगमें ये शब्द श्राये हैं, वहाँ-वहाँ विषयके पूर्वापर सम्बन्धके श्रनुसार ही उनके हिंसापरक या श्रहिंसापरक श्रर्थ करने होंगे।

यजुर्वेद ३०.५ में 'म्रालभ्' का 'प्राप्ति' मुख्य मर्थ है जैसे-

- १. ब्रह्मे ब्राह्मे ग्रालभते ज्ञानके लिये ज्ञानी को प्राप्त करता है।
- २. क्षत्राय राजन्यं ग्रालभते शौर्यके लिये शूरको प्राप्त करता है।
- नृत्ताय सूतं ग्रालभते—नाचनेके लिये सूतको बुलाता है।
- ४. धर्माय समाचरं ग्रालभते—धर्मके लिये धर्म सभाके सदस्यको प्राप्त करता है।

स्मृति, गृह्यसूत्र ग्रादि ग्रन्थोंमें 'आलम्भन्' तथा 'ग्रालभते' 'स्पर्श' के अर्थमें ग्राता है, जैसे—

- मीमांसा दर्शन २.३.१७ की सुबोधिनी टीकामें लिखा है...'ग्रालम्भः स्पर्शो
   भवित' ग्रर्थात् 'स्पर्श' ही 'ग्रालम्भन' है।
- ब्रह्मचारीके धर्ममें—'वर्जयेत् स्त्रीणां च प्रेक्षरणालम्भम्'—ब्रह्मचारीके लिये स्त्रीकी ग्रोर देखना एवं उसको स्पर्श करना मना है। (मनु० २.१७६)
- ३. उपनयन संस्कारमें 'ग्रथास्य (ब्रह्मत्रारिगः) दक्षिणांसं ग्रधिहृदयं ग्रालभते' ग्राचार्य, ब्रह्मचारोके हृदयका स्पर्श करता है। (पारस्करगृह्यसूत्र २.२.१६)
- ४. विवाह संस्कारमें—'वरो वध्वा दक्षिगांसम् ग्रधि हृदयं ग्रालभते'-वर वधूके दक्षिण कन्धेके ऊपरसे हाथ ले जाकर उसके हृदयका स्पर्श करता है। (पारस्करगृह्यसूत्र १.५.५)
- ५. श्रीमद्भागवत महापुराएगमें भी इस बातका स्पष्ट प्रमाएग है कि यज्ञमें 'पशु-ग्रालभन' का अर्थ 'हिंसा' नहीं है— 'यद् प्राएगभक्षो विहितः सुरायास्तथा पशोरालभनं न हिंसा'। (श्रीमद्भागवत् ११. ५. १३) अर्थात्...यज्ञमें सुराको सूंघने का विधान है, पीनेका नहीं। यज्ञमें पशुका आलभन (स्पर्श) ही विहित है, हिंसा नहीं।
- ६. स्पर्श शब्द दानके श्रर्थमें भी श्राता है। महाकित कालिदासने 'गाः कोटिशः स्पर्शयता घटोध्नीः' (रघुवंश २.४९) पद्यमें 'स्पर्शयता' का प्रयोग 'दान' के श्रर्थमें किया है।

#### क्या राजा रन्तिदेवके यहाँ गोवध होता था ? श्रालभ्यन्त—श्रालम्भ शब्दोंके श्रर्थ

83

स्राजकल भी यह प्रथा है कि दान दी जानेवाली वस्तुका दाता हाथसे स्पर्श करके छोड़ देता है। फिर दान लेनेवालोंको वे वस्तुयों दे दी जाती हैं या पहुँचा दी जाती हैं। जहाँपर दान दी जानेवाली वस्तुयोंके प्रकार या संख्या इतनी अधिक होती है कि जिससे सबका हाथसे स्पर्श सम्भव नहीं हो वहाँ दृष्टिपात द्वारा दृष्टिस्पर्श मात्र भी होता है।

रिन्तदेव प्रकरणमें महाभारत, शान्तिपर्व, राजधर्म प्रकरणके ग्रध्याय २६ में गोदानके द्वारा कीर्ति प्राप्त राजाग्रोंका उल्लेख होनेसे गीताप्रेस ग्रौर चित्रशाला संस्करणके १२७वें श्लोकमें तथा भण्डारकर, पूना संस्करणके ११६वें श्लोकमें तथा भण्डारकर, पूना संस्करणके ११६वें श्लोकमें 'ग्रालभ्यन्त शतं गावः' के 'ग्रालभ्यन्त' शब्दका ग्रथं भी गोदानसे सम्बन्धित 'प्राप्ति' या 'स्पर्श' करनेके ग्रथंमें ही है। इसी प्रकार महाकि कालिदासके 'मेघदूत' काव्यके 'पूर्वमेघ' नामक खण्डके 'सुरिभतनयाग्रालम्भजां रिन्तिदेवस्य कीर्तिम्' में भी 'ग्रालम्भ' शब्दका ग्रथं गोदानसे सम्बन्धित ही है, हिंसासे नहीं।

## वया मधुपर्कमें गोमांस सम्भव हैं ?

राजा राजेन्द्रलाल मित्रने अपनी ग्रंग्रेजी पुस्तक 'प्राचीन भारतमें गोमांस' तथा पाण्डुरंग वामन कारोने ग्रपनी ग्रंग्रेजी पुस्तक 'धर्मशास्त्रका इतिहास', खण्ड २, भाग १, ग्रध्याय १०, 'मधुपर्क और ग्रन्य रीति-रिवाज' (Madhuparka & Other Usages) तथा खण्ड २, भाग २, ग्रध्याय १२, 'भोजन ग्रौर मांसाहार' (Bhojana—Flesh-eating)—प्रकरणों में मधुपर्कको मांसयुक्त और वह भी गोमांसयुक्त सिद्ध करनेका प्रयास किया है । विदेशियोंके ग्रतिरिक्त ग्रौर भी ग्रनेक भारतीय लेखक समय-समयपर ग्रपने लेखोंमें इसीका वखान ग्रौर उल्लेख करते रहते हैं । ग्राइये, इसपर विचार किया जाय।

## वेदोंमें मधुपर्क

वर्तमान युगके वेदोंके प्रसिद्ध विद्वान् स्वर्गीय पण्डित श्रीपाद दामोदर सातवलेकर श्रपने गो-ज्ञान-कोश, प्राचीन खण्ड—वैदिक विभाग, प्रथम खण्डमें मधुपर्कके प्रकरणमें लिखते हैं—

"कइयोंका कथन है कि मधुपर्क विधि वैदिक है ग्रौर उसमें मांस ग्रावश्यक है। परन्तु ऋग्वेद, यजुर्वेद ग्रौर सामवेदमें मधुपर्क शब्द ही नहीं है, ब्राह्मणों ग्रौर उपनिषदों में भी यह शब्द नहीं है। केवल श्रथवंवेद संहितामें एक वार मधुपर्क शब्द ग्राया है। वह मंत्र यह है—

यथा यशः सोमपीथे मधुपकें यथा यशः। (ग्रथर्व०१०.३.२१) जैसा यश सोमपानमें ग्रौर जैसा मधुपकेंमें है वैसा मुक्ते प्राप्त हो।

वेदकी चारों संहिताग्रोंमें मधुपर्क विषयक इतना ही उल्लेख है, इसलिये मधुपर्कमें वैदिक रीतिसे क्या होना चाहिये ग्रौर क्या नहीं—-इसका पता नहीं लग सकता। परन्तु इतना सत्य है कि— मधुपर्कमें मांस ग्रवश्य है—ऐसा जिनका पक्ष होगा उनके मतकी

#### क्या मधुवर्क में गोमांस सम्वहै ? वेदों में मधुवर्क

83

सिद्धि वैदिक मन्त्रोंसे नहीं हो सकती। ब्राह्मण और उपनिषद् ग्रन्थों तक किसी भी ग्रन्थमें मधुपर्कका इससे ग्रधिक उल्लेख नहीं है। ग्रतः वेदके मधुपर्कमें मांसकी ग्रावश्यकता है—यह बान वैदिक प्रमाणोंसे सिद्ध होना ग्रसम्भव है।

यद्यपि वेदोंमें ग्रन्यत्र कहीं भी मधुपर्क शब्द नहीं है तथापि मधुपेय शब्द है यह भी इसके समानार्थक माना जा सकता है। यह एक उत्तम मधुर अर्थात् मीठा-पेय है, ऐसा निम्नलिखित मन्त्रसे प्रतीत होता है—

वृषाऽसि देवो वृषभः पृथिन्या वृषा सिन्धूनां वृषभस्तियानाम् । वृष्णे त इन्दुर्नृषभ पीपाय स्वादू रसो मधुपेयो वराय॥ (ऋग्वेद ६.४४.२१)

इस मन्त्रके ग्रन्तिम भागमें 'स्वाद रसो मधुपेयो 'ऐसे शब्द हैं। इनका अर्थ है—मीठा रस मधुपेय। परन्तु यह कोई स्वतन्त्र पेय नहीं है, यह सोमरस ही है जिसका सूचक इन्दु शब्द इसी मन्त्रमें है। इस मन्त्रमें वृषा, वृषभ;—पे बैलवाचक शब्द हैं।

इनके देखनेसे कइयोंने मधुपेयमें बैलके मांस की कल्पना की होगी। परन्तु यह मन्त्र इन्द्र देवताकी प्रशंसापर है ग्रौर इसका शब्दार्थ है—हे इन्द्रदेव! तू पृथ्वी द्युलोक, निदयों, स्थावर-जंगम पदार्थ ग्रादिको बल देनेवाला है, इसिलये इस मधुपानके समय यहाँ ग्रा। यद्यापि ग्रंग्रेजी भाषान्तरमें मि॰ ग्रिफिथने Thou art the bull of earth, the bull of heaven ऐसे शब्द लिखे हैं, तथापि यहाँका तात्पर्य बैल नहीं है, ग्रपितु शक्ति देनेवाला है—यह ग्रंग्रेजी शब्दोंके बीचका भाव समभने वालोंको पुनः कहनेकी आवश्यकता नहीं है। यदि कोई मनुष्य इस मन्त्रमें वृषा और मधुपेय—ये दो शब्द ग्राये हैं, इसिलये मधुपेयमें बैलके मांसकी ग्रावश्यकता है—ऐसा कहेगा तो वह कथन विश्वास करने योग्य नहीं होगा, क्योंकि जो बात मन्त्रमें नहीं है, वह मन्त्र के सिरपर मढ़ देना कोई विद्वत्ताकी बात नहीं हो सकती।"

मौनियर विलियमके संस्कृत-स्रंग्रेजी कोशमें भी वृष, वृषभ स्रौर वृषकर्मा शब्दोंके निम्नलिखित स्रर्थ मिलते हैं—

वृष—(i) a strong or a potent man.

## ग्रर्थात्-शक्तिशाली पुरुष।

(ii) The chief of the class or anything the most excellent or prominent or best of its kind.

ग्रथांत्-िकसी वर्गका प्रमुख या अपनी श्रेणीमें सर्वश्रेष्ठ। वृषभ—bull (in Veda, epithet of various Gods, as of Indra).

ग्रर्थात्—बेल (यह शब्द वेदोंमें विभिन्न देवताग्रोंका, जैसे इन्द्रका विशेषण है)।

वृषकर्मा—Doing manly deeds as Indra (Rigveda). ग्रयीत्-(ऋग्वेदमें) इन्द्रकी तरह पौरुषेय कर्म करनेवाला।

इसमे यह सिद्ध होता है कि ग्रथवंवेदमें एक स्थानको छोड़कर वेदोंमें कहीं भी 'मधुनर्क' का उल्लेख नहीं है । ऋग्वेदमें एक स्थानपर 'मधुपेय' का उल्लेख ग्राता है । मधुपर्कमें क्या-क्या वस्तु होनो चाहिये, इसका वेदोंमें कहीं उल्लेख नहीं हैं । नामसे इतना ही सिद्ध होता है कि यह कोई मीठी वस्तु है । ग्रतः यह सिद्ध नहीं हो सकता कि वेदोंके ग्रनुसार मधुपर्कमें किसी भी प्रकारका मांस होना सम्भव है । ग्रन्य ग्रन्थोंके ग्रनुसार मधुपर्कमें क्या-क्या वस्तुएँ हैं, उनपर विचार किया जाय ।

# मधुपर्ककीं वस्तुएँ

दूरसे चलकर श्राये हुए विशेष-विशेष सम्माननीय श्रितिथयोंके लिये मधुपर्क] श्रपंणका विधान है। शास्त्रोंमें जहाँ-जहाँपर भी मधुपर्ककी वस्तुश्रोंका वर्णन है, वहाँपर कहीं भी उनमें मांसका उल्लेख नहीं है। मधुपर्ककी वस्तुश्रोंमें दही, धी, दूध, मधु, मिश्री—ये ही प्रमुख हैं। किसी-किसी जगह मधुपर्कमें सत्तूका भी उल्लेख है।

### क्या मधुपर्कमें गोमांस सम्भव है ? मधुपर्कन्नी वस्तुएँ

EX

किस-किस ग्रन्थमें मधुपर्ककी कौन-कौन-सी वस्तुग्रोंका वर्णन है, उसको देखा जाय—

१. तन्त्रसार (चौखम्भा संस्कृत सीरोज, वाराणसीका नवम्बर १६३८ संस्करण, प्रथम परिच्छेद, पृष्ठ ५३)—

ग्राज्यं दिधमधुमिश्रं मधुपर्के विदुर्बु धाः

मधुपर्कमें घृत, दिध ग्रौर मधुका मिश्रण ही बुद्धिमानोंने बताया है। तन्त्रसारका यही उद्धरण शब्द कल्पद्रुम (चौखम्भा संस्कृत सीरीज, वाराणसी द्वारा प्रकाशित, १६६१ संस्करण, भाग ३, पृष्ठ ५६६, कालम २) में भी मधुपर्कके अर्थमें उद्धत किया गया है।

२, शब्द कल्पद्रुम में वहीं पर मधुपर्कके अर्थमें, कालिका पुराण, अध्याय ७ से निम्न उद्धरण दिया है—

> दिध सर्पिर्जलं क्षौद्रं सितैताभिस्तु पञ्चिभः। प्रोच्यते मधुपर्कस्तु सर्वदेवोपतुष्टये।।

दही, घी, दूध, मधु (शहद) ग्रीर मिश्री—इन पाँचोंका मधुपर्क बनता है जो सब देवोंको तुष्ट करनेवाला है।

३. ब्रह्मोक्त याज्ञवल्क्यसंहिता, (स्मृति-सन्दर्भ, चतुर्थ भाग, प्रथम संस्करण, पृष्ठ २४३०, प्रकाशक—मनसुखराय मोर, नं० ५, क्लाइव रो, कलकत्ता) ग्रब्टम ग्रध्याय, क्लोक संख्या २०२—

कांस्यपात्रे समायुक्तं दिधमधुघृतैर्युतम् । मधुपर्कः स विज्ञेयो मित्रस्य त्वा प्रतीक्षणी ।।

दिध, मधु और घृतसे युक्त कांस्यपात्रमें बना हुम्रा पदार्थ मधुपर्क कहा जाता है।

४. ग्राइवलायनगृह्यसूत्र १.२४, ५.६— दधित मध्वानीय सर्पिवा मध्वलामे ॥ दही ग्रौर मधु मिलावे, मधुके ग्रभावमें घृत ।

प्रारस्करगृह्यसूत्र, विवाह प्रकरण १०३०५—
ग्राहरन्ति विष्टरं पाद्यं पादार्थमुदकमर्घमाचमनीयं
मधुपकं दिधमधुवृतिमिहितं कांस्ये कांस्येन ॥

पृह्ली पंक्तिमें ग्रौर बातें वताकर दूसरी पंक्तिमें मधुपर्ककी वस्तुएँ बतायी हैं—

मधुपर्क -दिध, मधु, घृत कांसेके पात्रमें कांसके पात्रसे ढका हुआ।

### प्राचीन भारतमें गोमांस-एक समीक्षा

६. वाराहगृह्यसूत्र १२.४—

33

कांस्ये चमसे वा सद्धिन मध्वासिच्य । वर्षीयसा पिधायाचमनीयप्रथमैः प्रतिपद्यते ॥

कांसेके कटोरेमें या प्रणिताके समान चमसपात्रमें मधु ग्रौर दही मिलाकर एक बड़े पात्रसे ढककर ग्राचमनीय जल ग्रादिके सहित पूजाके लिये पूजक ग्रावे।

- ७. ग्रापस्तम्बीय धर्मसूत्र २.४.५.५.६—
  दिध मधुसंसृष्टं मधुपर्कः पयो वा मधुसंसृष्टम् । ग्रभावे उदकम् ।
  दिही ग्रौर मधु मिलाकर मधुपर्क तैयार करे ग्रथवा दूध ग्रौर मधु
  मिलाकरः ग्रभावमें जल ग्रथीत् जल और मधु मिला लेवे ।
- वोधायनगृह्यसूत्र १.२.६-१० —

सूत्र ६ में मधु लानेकी बातका उल्लेख है।

दशवें सूत्रमें मधुमें मिलाने वाली वस्तुएँ इस प्रकार बतायी हैं— दिख पयो वा द्वितीयं स द्विवृत्—मधुमें दही ग्रथवा दूध मिलानेसे वह द्विवृत् कहलाता है।

<mark>घृतं तृतीयं वा त्रिवृत् —</mark>तीसरी वस्तु घृत मिलानेसे त्रिवृत् कहलाता है।

यद् द्वितीयं चतुर्थं सा चतुर्वृत् —दूसरी वस्तु ग्रर्थात् पहले दूध मिलाया हो तो दही मिलानेसे अथवा पहले दही मिलाया हो तो दूध मिलानेसे वह चतुर्वृत् कहलाता है ।

<mark>म्रापः पञ्चमीस्स पाङ्क्तः</mark> —पाँचवाँ जल मिलानेपर वह पाङ्क्त कहलाता है।

६. जैमिनीयगृह्यसूत्र १.१६—

तयोर्दिघ मधु संनिहिते भवतो, दध्ना चेत् दिधमन्थोऽद्भिरुचेद् उदमन्थः पयसा चेत् पयस्यः। ग्रथीत्—उनमें दही ग्रौर मधु मिले रहते हैं। यदि दही हो तो

# क्या मध्पकेंमें गोमांस सम्भव है ?

मधपर्वेकी वस्तएँ

दिधमन्थ कहलाता है, यदि पानी हो तो उदमन्थ कहलाता है और यदि दुध (पयस्) हो तो पयस्य कहलाता हैं।

23

#### हिरण्यकेशीगृह्यसूत्र १.१२.१०-20.

हिरण्यकेशीगृह्यसूत्रका ग्रन्थ न तो किसी पुस्तक-विक्रेतासे प्राप्त हो सका ग्रौर न किसी पुस्तकालयसे ही। लेकिन इसका प्रमाण एक जर्मन ग्रन्थसे मिला है, जो नीचे उद्धत किया जाता है-

Ritual Literatur Vedische Opfer und Zauber (a German language book) by Alfred Hillebrandt, published by Verlag von Karl. J. Trubner, Strassburg, 1897 में मध्पर्कका वर्णन है-

(इसमें प्रत्येक जमन भाषाकी पंक्तिके नीचे ग्रंग्रेजी ग्रन्वाद दिया है)

Hierauf folgt die Darbietung des Spulwassers und Hereafter follows the offering of rinsing water and des Madhuparka. of Madhuparka.

Dieser besteeht nach H. I. 12, 10 aus drei These comprise according to H. I. 12.10 of three oder funf Bestandteilen, namlich dadhi, madhu, or five components, namely curd, honey, ghrta wozu noch apah und saktu's treten konnen. ghee which can be mixed with water and saktus (flour of corn roasted in hot sand)

ग्रर्थात-हिरण्यकेशी १.१२.१० के ग्रनुसार-प्रक्षालनके लिये जल ऋषण ऋौर फिर मध्यक्रं, जिसमें तीन या पाँच वस्तूएं हैं-दिध, मधु, घृत-उसमें ग्रापः (जल) श्रीर सक्तू (सत्त्) भी मिलाया जा सकता है।

- ११. मोनियर विलियम्स संस्कृत-ग्रंग्रेजी कोशके पृष्ठ ७५० पर मधु-पर्कका ग्रर्थ—
  - 1. A mixture of honey—
    मधुके मिश्रग्रासे बनी वस्तु ।
  - An offering of Honey & Milk— मधु-दुग्ध मिश्रित उपहार ।
  - 3. A respectful offering to a guest, or to the bridegroom on his arrival at the door of the father of bride, (sometimes consisting of equal parts of curd, honey and clarified butter).

ग्रथात् — अतिथिके लिये सत्कारपूर्ण समर्पणकी वस्तु, ग्रथवा कन्याके पिताके द्वारपर वरके ग्रागमनपर उस वरके लिये सत्कारपूर्ण समर्पणकी वस्तु, जिसमें प्रायः दही, मधु ग्रौर घृत सम-भागम होता है।

और भी जहाँ-जहाँ मध्पर्ककी वस्त्रग्रोंका वर्णन है, कहीं भी मांसका उल्लेख तो दूर रहा, मांसकी गन्ध भी नहीं है। जब मधुपर्कके बनानेकी वस्तुओंमें कहीं पर भी मांसका उल्लेख नहीं है, तब यह कैसे कहा जा सकता है कि मधुपर्कमें मांस होना आवश्यक है या मांसविहीन मधुपर्क हो ही नहीं सकता। मध्यकं में सबसे ग्रावश्यक चीज मधू है जिसके बिना मधुपर्क नहीं बनता। केवल आश्वलायन-गृह्यसूत्रमें मध्के ग्रभावमें घत लेनेका विधान मिलता है, स्रोर कहीं भी नहीं। दूध, दही या घृतके बदलेमें तो दूसरी वस्तु लेनेका विधान है। ग्रापस्तम्बीयधर्मसूत्रमें तो दूध ग्रौर दही दोनोंमें कोई भी उपलब्ध न हो तो उनकी जगह जलमें मधू मिलाकर मधूपर्क बनानेका विधान भी दिया है। केवल ग्राश्वलायनगृह्यसूत्रमें मधुके ग्रभावको कैसे स्वीकार कर लिया-यह समभमें नहीं म्राता, जब कि मध्यक नाम ही मध्की आवश्यकता का द्योतक है। ग्रवश्य ही इसमें कोई भूल है जो सम्भव है, ग्राश्वलायनके अनुयायियों मेंसे किसीने किसी ग्रवसरपर मधूके ग्रभावमें, ग्रतिथिको प्रतीक्षा करनेका कष्ट न करना पड़े, इसलिये शोध्रतामें मधु ग्रभावे घृत मिलानेको कह दिया होगा। तभीसे मधुके स्रभावमें घृत मिलानेकी परम्पराको ग्रारवलायनके ग्रन्यायियोंने मान्यता दे दी होगी। जो हो, मध्पर्ककी वस्तुयोंमें मांसका तो कहीं खोजनेपर भी उल्लेख नहीं मिलता है।

### क्या मधुपर्कमें गोमांस सम्भव है ? मधुपर्क विधिमें गोमांस श्रसम्भव है।

33

शास्त्रोक्त मधुपर्कंकी वस्तुग्रोंके वर्णनके ग्रनुसार यह सिद्ध होता है कि मधुपर्कमें मांसका नाम तो दूर रहा, मांसकी गन्ध भी नहीं है। इससे यह ग्रच्छी प्रकार सिद्ध हो जाता है कि मधुपर्कमें मांस नहीं होता। जहांपर भी मधुपर्कमें मांस होनेकी बात कही गयी बतायी जाती है, जैसे—

- १. नामांसो सधुपकों भवति भवति (ग्राइवलायनगृह्यसूत्र),
- २. न त्वेवामांसोऽर्घः स्यात् (पारस्करगृह्यसूत्र)
- ३. मधुपर्के च यज्ञे च पितृदैवतकर्मागि । श्रत्रैव पज्ञवो हिंस्या नान्यत्रेत्यज्ञवीन्मनुः ॥ (मनु० ५.४१)

इत्यादि, वे सब वास्तिविक नहीं हैं, भिथ्या हैं ग्रौर प्रक्षिप्त हैं। इनका कमसे पीछे विवेचन किया जायगा।

## मधुपर्क द्वारा आतिश्य-सत्कारकी विधिमें गोमांस असम्भव है।

सम्माननीय ग्रतिथिके मधुपर्क द्वारा सम्मानकी विधि ग्राश्वलायनगृह्यसूत्र १.२४ एवं पारस्करगृह्यसूत्र १.३ में विस्तारपूर्वक दी हुई है। इन्हीं दोनों गृह्यसूत्रोंके ग्रनुसार लोग मधुपर्कमें मांस होना जरूरी बताते हैं। ग्रतः इनमें विगत विधिके अनुसार मधुपर्कमें गोमांस होनेकी सम्भावनापर विचार किया जाय।

संस्कृतज्ञ पाठकोंके लिये दोनों गृह्यसूत्रोंके मूल पाठ पूरे नीचे दिये जाते हैं:—

पारस्करगृह्यसूत्र १.३

पडध्या भवन्त्याचार्य ऋत्विग्वैवाह्यो
राजा प्रियः स्नातक इति ॥१॥ प्रतिसंवत्सरानहंयेयुः ॥२॥ यक्ष्यमाणास्त्वृत्विजः
॥३॥ ग्रासनमाहार्याह साधु भवानास्तामर्चयिष्यामो भवन्तमिति ॥४॥ ग्राहरन्ति
विष्टरं पाद्यं पादार्थमुदकमर्घमाचमनीय
मधुपकं दिधमधुष्टतमितिहतं कांस्ये
कांस्येन ॥४॥ ग्रन्यस्त्रिस्तः प्राह विष्ट-

### म्राव्वलायनगृह्यसूत्र १.२४

ऋित्वजो वृत्वा मधुपर्कमाहरेत् ।।१।।
स्नातकायोपस्थिताय ।।२।। राज्ञे च ।।३।।
ग्राचार्यक्ष्वगुरपितृव्यमातुलानां च ।।४।।
दधिन मध्वानीय ।।४।। सिप्वा मध्यलामे ।।६।। विष्टरः पाद्यमध्यमाचमनीयं
मधुपर्को गौरित्येतेषां त्रिस्त्रिरेकंकं वेदयन्ते
।।७।। अहं वर्ष्म सजातानां विद्युतामिव
सूर्यः। इदं तमधिति ध्टामि यो मा कश्चा-

(पारस्करहह्यसूत्र १.३ - चालू)

रादीनि ॥६॥ विष्टरं प्रतिगृह्णाति ॥७॥ वर्षोऽस्मि समानानामुद्यतामिव सर्यः। इमं तमभितिष्ठामि यो मा कश्चाभिदास-तीत्येनमभ्यपविशति ॥६॥ पादयोरन्यं विष्टर ग्रासीनाय ।।१।। सन्यं पादं प्रक्षाल्य दक्षिणं प्रक्षालयति ॥१०॥ ब्राह्मणश्चे-हक्षिणं प्रथमम् ।।११।। विराजो दोहोऽसि विराजो दोहमशीय मिय पाद्याय विराजो दोह इति ।।१२।। श्रर्घ प्रतिगृह्णात्यापः स्थ युष्माभिः सर्वान्कामानवाप्नवानीति ।।१३।। तिनयन्नभिमन्त्रयते, समुद्रं वः प्रहिणोमि स्वां योनिमभिगच्छत । श्ररिष्टा श्रस्माकं वीरा मा परासेचिमत्पय इति ।।१४।। आचामत्यामागन्यशसा संसज वर्चसा । तं मा कुरु प्रियं प्रजानामधिपति पश्चनामरिष्टिं तनूनामिति ।।१५।। मित्रस्य त्वेति मधुपर्कं प्रतीक्षते ॥१६॥ देवस्य त्वेति प्रतिगृह्णाति ॥१७॥ सब्ये पाणौ कृत्वा दक्षिणस्यानामिकया त्रिः प्रयोति नमः इयावास्यायान्नशने यत्त श्राविद्धं तत्ते निष्कुन्तामं।ति ॥१८॥ अनामिकाङ्गुष्ठेन च त्रिनिरुक्षयति ।।१६।। तस्य त्रिः प्राक्ताति यत्मधूनो मधव्यं परमं रूप-मन्नाद्यम् । तेनाहं मधुनो मधव्येन परमेण रूपेणान्नाद्येन परमो मधन्योऽन्नादो sसानीति ।।२०।। मधुमतीमिर्वा प्रत्यृचम् ॥२१॥ पुत्रायान्तेवासिने वोत्तरत स्रासी-नायोच्छिष्टं दद्यात् ॥२२॥ सर्वं वा प्राइनीयात् ॥२३॥ प्राग्वाऽसञ्चरे निनयेत् ।।२४।। ग्राचम्य प्राणान्त्संमृशति वाङ्म आस्ये नसोः प्राणोऽक्ष्णोश्चखुः कर्णयोः

(ग्राश्वलायनगृह्यसूत्र १.२४--चालू)

भिदासतीत्युदगग्रे विष्टर उपविशेदाक्रस्य वा ॥६॥ पादौ प्रक्षालापयीत दक्षिणमग्रे ब्राह्मणाय प्रयच्छेतु ॥६॥ सव्यं शुद्राय ।१०।। प्रक्षालितपादोऽध्यमञ्जलिना प्रतिगृह्य ।।११।। श्रथाऽऽचमनीयेनाऽऽचा-मति - ग्रमुतोपस्तरणमसीति मधुपकंमाह्नियमाणमीक्षेत सित्रस्य त्वा चक्षषा प्रतीक्ष इति ॥१३॥ देवस्य सवितुः प्रसवेऽिवनोर्बाहभ्यां पूरणो हस्ताभ्यां प्रतिगृह्णामीति तदञ्जलिना प्रतिगृह्य सब्धे पाणौ कृत्वा मध्याता ऋतायत इति तृचेनावेक्ष्यानामिकया चाङगुष्ठेन च त्रिः प्रदक्षिणमालोडय वसवस्तवा गायत्रेण च्छन्दसा भक्षयन्तिवति पुरस्तान्तिमार्ष्टि ।।१४।। रुद्रास्त्वा त्रैब्टु-भेन च्छन्दसा भक्षयन्त्वित दक्षिणत श्रादित्यास्त्वा जागतेन च्छन्दसा भक्षय-न्तिवति पश्चाद् विश्वे त्वा देवा श्रानुष्ट भेन च्छन्दसा भक्षयन्त्वत्युत्तरतो भूतेभ्यस्त्वेति मध्वात् त्रिरुद्गृह्य ।।१५।। विराजो दोहो-ऽसीति प्रथमं प्राक्तीयाद् विराजी दोहम-शीयेति द्वितीयं मृथि दोहः पद्याये विराज इति तृतीयम् ॥१६॥ न सर्वम् ॥१७॥ न तृष्तिं गच्छेत् ।।१८।। ब्राह्मणायोदङ्ङ्-च्छिष्टं प्रयच्छेदलाभेऽप्सु ॥१६॥ सर्वे वा ।।२०।। भ्रथाऽऽचमनीयेनान्वाचामत्यमृता-पिघानमसीति ।।२१।। सत्यं यशः श्रीमंथि श्रयतामिति द्वितीयम् ॥२२॥ श्राचान्तोदकाय गां वेदयन्ते ।।२३।। हतो मे पाप्मा पाप्मा मे हत इति जिपत्वों क्र-तेति कारविष्यंतु ।।२४।। माता उद्राणां

### क्या मधुपर्कमें गोमांस सम्भव है ? मधुपर्क विधिमें गोमांस असम्भव है।

303

(पारस्करगृह्यसूत्र १.३ — चालू)

श्रोत्रं वाह्वोर्बलसूर्वोरोजोऽरिष्टानि
मेऽङ्गानि तलूस्तन्वा से सहैति ।।२५।।
श्राचान्तोदकाय शासमादाय गौरिति त्रिः
प्राह ।।२६।। प्रत्याह । साता रुद्राणां
दुहिता वसूनां स्वसादित्यानाममृतस्य
नामिः । प्र नु वोचिन्चिकतुषे जनाय
मा गामनागामदिति विधिष्ट । सम चामुष्य
च पाप्मानं हनोमीति यद्यालभेत ।।२७॥
श्रथ यद्युत्सिसृक्षेत्मम चामुष्य च
पाप्मा हत श्रोमुत्सृजत तृणान्यत्विति
सूयात् ।।२६।। न त्वेवामांसोऽर्घः स्यात्
।।२६॥ अधियज्ञमधिविवाह कुरुतेत्येव
सूयात् ।।३०॥ यद्यप्यसङ्गत्संवत्सरस्य
सोमेन यजेत कृताध्यों एवैनं याजयेयुर्नाकृताध्यां इति श्रतेः ।।३१॥

(ग्राश्वलायनगृह्यसूत्र १.२४—चालू) दुहिता वसूनामिति जिपत्वोमुत्सृजतेत्यु-त्स्रक्ष्यन् ॥२५॥ नामांसो मधुपको भवति भवति ॥२६॥

इन सूत्रोंमें वर्णित विविका अस इस प्रकार है:-

- १. ग्रासन समर्पण ग्रीर ग्रहणी
- २. पाद्य समर्पण (चर्गा-प्रक्षालन)
- ३. ग्रध्यं-समर्पण ग्रौर ग्रहण
- ४. ग्राचमनीय-सम्पंण ग्रौर ग्रहण
- प्र. मधुपर्क ग्रहण करना, ग्रंगुष्ठ ग्रौर अनामिका ग्रंगुलियों द्वारा मिलाना, उन्हीं ग्रंगुलियोंसे चारों दिशाग्रोंमें मधुपर्क छिड़कना, मधुपर्कके मध्यभागसे उन्हीं ग्रंगुलियोंसे तीन बार मधुपर्क खाना, अवशिष्ट छोड़ देना।
- ६. आचमन करके मुख-शुद्धि करना।

यहाँ तककी विधि थोड़े अन्तरसे आश्वलायन और पारस्कर दोनों गृह्य-सूत्रोंमें एक-सी है। इसमें कोई विशेष मतभेदकी बात नहीं है। इसके बादकी मान्यतामें मतभेद है जिसका विवेचन ग्राश्वलायन एवं पारस्कर दोनों गृह्य-सूत्रोंके ग्रनुसार ग्रागेके ग्रलग-ग्रलग प्रकरणमें दिया जायगा। यहाँ इतना ही बता देना यथेष्ट है कि न तो मधुपकंकी वस्तुग्रोंमें कहीं मांसका उल्लेख है ग्रौर न मघुपर्क ग्रहण कर लेनेके पश्चात् आचमन कराके मुख-शुद्धि करा-कर मघुपर्ककी विधि पूरी करा दी गयी वहाँ तक माँसका कोई उल्लेख है। अतिथिके पहुँचनेके बाद मघुपर्क द्वारा सम्मान-पूजाकी विधिमें सब क्रियाएँ एकके बाद दूसरी, क्रमसे लगातार होती रहती हैं। उसमें कोई लम्बे समय-की प्रतीक्षा नहीं होती। ग्रतः उसमें ऐसी सम्भावना भी नहीं लगती कि उसी समय गायको मारकर उसका मांस निकालकर, पकाकर, मघुपर्कमें मिलाकर अतिथिको दिया जाय। तुरन्त गायको मारकर मांस निकालकर पकानेमें पर्याप्त समय लगता है। उतने समयके लिये सम्माननीय ग्रतिथिको प्रतीक्षा कर।ना सम्भव नहीं हो सकता। ग्राव्वलायनके ग्रनुयायी तो सम्माननीय ग्रतिथिको मधुके लिये भी प्रतीक्षा नहीं कराते, मधुके ग्रभावमें धृतको स्वीकार कर लेते हैं।

इसके ग्रितिरिक्त एक ग्रितिथि एक गायका सम्पूर्ण मांस खा भी नहीं सकता। मधुपर्ककी जितनी मात्रा होती है उसमें यदि मांस मिलाया भी जाय तो एक या दो तोला मांस ही मिल सकता है। इतनेसे मांसके लिये गायकी हत्या कराना कैसे अभीष्ट हो सकता है? ग्रतः मधुपर्क विधि पूरी हो जानेके वाद, ग्राचमन द्वारा ग्रितिथिकी मुख शुद्धि करा देनेके पश्चात् गायका लाना या तो दानके लिये ही हो सकता है अथवा अतिथिको धारोष्ण द्वा पिलानेके लिये हो सकता है, जिसके लिये ग्रितिथिको प्रतीक्षा नहीं करानी पड़ती।

## मधुपर्क में गोदान-गोसमर्पग

मधुपर्कमें गोदानका विधान कहीं-कहींपर शास्त्रोंमें देखनेमें स्राता है।

१ श्रहणस्मित, श्रध्याय १ (मनसुखराय मोर, नं•-५, क्लाइव रो, क्लकत्ता द्वारा प्रकाशित)—

यज्ञकर्मिं या घेनुर्या घेनुर्धर्मकर्मिं ॥११६॥ प्रायिक्चतिनिमत्ते वा होमार्थं दुर्बलाय वा। मधुपर्के च या घेनुः या घेनुः कर्मंसिद्धये ॥११७॥ एताः सर्वा द्विजो विद्वान् प्रतिगृह्य यतस्ततः। न स पापेन लिप्येत पद्मपत्रिमवांभसा ॥११८॥

श्रर्थात्—यज्ञकर्ममें, धर्मकर्ममें, प्रायश्चित्तके निमित्ता, होमके लिये, दुर्बलता दूर करनेको, मधुपर्क विधिमें, कर्मसिद्धिके श्रनुष्ठानमें — इन

### क्या मधुपर्कमें गोमांस सम्भव है ? मधुपर्कमें गोदान

103

सब कार्योमें दान दी हुई गायको विद्वान द्विज ग्रहरण करता है तो वह पापसे लिपायमान नहीं होता, जैसे कमलके पत्तेपर जलका ग्रसर नहीं होता।

## २. मनुस्मृति ३.३—

तं प्रतीतं स्वधर्मेण ब्रह्मदायहरं पितुः । स्रान्विग्तं तलप श्रासीनमहंयेत्प्रथमं गवा ॥

(स्वधर्मण) ग्रपने ब्रह्मचर्य-ग्राश्रमके धर्म-पालनसे (प्रतीतं) ख्याति-प्राप्त हुए, (पितुः) जन्मदाता या गुरुह्म पितासे (ब्रह्मदायहरं) पितृत्र ब्रह्मविद्या—वेदोंका ज्ञान प्राप्त किये हुए, (स्रिग्वणं) पुष्पहारसे सुसज्जित, (तल्प ग्रासीनं) उच्चासनपर विराजमान (तं) उस स्नातकको (प्रथमं) सर्वप्रथम (गवा) गाय समर्पण द्वारा (ग्रहंयेत्) सम्मानित करे।

विद्याध्ययन करके ग्राये हुए स्नातकका मनुस्मृति ३.११६-१२० के ग्रनुसार मधुपर्क द्वारा सम्मान करनेका विधान है ग्रीर उसमें स्नातकको गाय-समर्पणका विधान मनुस्मृति ३.३ में बताया है ग्रीर उसके पश्चात्के शलोकों में शुभ लक्षणों वाली कन्याके साथ विवाह करनेकी अनुमति दो गयी है। इससे स्पष्ट है कि स्नातक ब्रह्मचारीके प्रति सर्वप्रथम गौ-समर्पणके साथ मधुपर्क द्वारा स्वागतका विधान है। सम्भवतः यह इसलिये है कि ब्रह्मचर्य-ग्राश्रमके कठोर नियमोंका पालन करते हुए विद्याध्ययनके परिश्रमसे कृशगात्र हुए ब्रह्मचारीको विवाहके पूर्व गोदुग्ध-पान द्वारा ग्रपना शरीर बलिष्ठ कर लेना चाहिये जिससे गृहस्थ-धर्मके निर्वाहमें सरलता रहे।

- ३. ग्रापस्तम्बीय धर्मसूत्र २.४.८ के निम्न वाक्य भी गोसमर्पण या गोदानवाचक ही हैं—
  - १. गोमधुपर्काहों वेदाध्यायः ग्रर्थात् वेदाध्यायी गाय श्रीर मधुपर्क ग्रहणा करनेके योग्य है ॥५॥
  - २. ग्राचार्यायित्वंजे क्वशुराय राज्ञ इति परिसंवत्सरादुपतिष्ठद्भयो गौर्मधुपर्कंश्च—ग्रथित् ग्राचार्यं, ऋत्विज्, क्वशुर, राजा—ये प्रति-संवत्सर ग्रथित् वर्षमें एक वार ग्रावें तब इनको गौ ग्रौर मधुपर्कं ग्रपंण करे।

### प्राचीन भारतमें गोमांस-एक समीक्षा

इन सूत्रोंके बाद ही मधुपर्ककी वस्तुओंका वर्णन ग्राता है—दिधि मधुसंसृष्टं मधुपर्कः पयो वा मधुसंसृष्टम्। ग्रभावे उदकम्॥ यदि गौका भाव गायके मांससे होता तो मधुपर्ककी वस्तुग्रोंके वर्णनमें मांसका नाम भी ग्राता। ग्रतः इन सूत्रोंमें भी गायके समर्पणका भाव ही अभीष्ट है।

## आववलायनगृह्यसूत्र

पाण्डुरंग वामन काणे महोदयने अपनी ग्रंग्रेजीकी पुस्तक धर्मशास्त्रका इतिहास, खण्ड २, भाग १, अध्याय १०, पृष्ठ ५४३-५४५ में मधुपर्ककी विधि ग्राश्वलायगृह्यसूत्र, ग्रध्याय १, कण्डिका २४ में विणित वतायी है—यह ठीक है। यहाँपर मधुपर्ककी वस्तुग्रोंके उल्लेखमें दिध ग्रौर मधुका मिश्रण बताया है ग्रौर मधुके ग्रभावमें घृतका मिश्रण, जिसका पहले भी वर्णन आ चुका है। ग्रागेकी विधि जो वर्णन की गयी है ग्रौर उसका जो ग्रर्थ लगाया है उसमें कोई मतभेद नहीं है। मधुपर्क ग्रहण करलेनेके पश्चात् ग्राचमन कर लेनेके बादकी विधिमें पाण्डुरंग वामन कागो महोदय पृष्ठ ५४५ पर पंक्ति ३ से ८ तक लिखते हैं—

"When he has sipped water, they announce to him the cow. Having muttered the words destroyed is my sin, my sin is destroyed, he says 'Om, do it', if he desires to have the cow killed; if he is desirous of letting her go, he mutters the verse (Rig. VIII, 101, 15) the mother of Rudras and daughter of Vasus and says, let her go?"

मूल सूत्र इस प्रकार है-

808

श्राचान्तोदकाय गां वेदयन्ते ॥२३॥

हतो मे पाप्मा पाप्मा मे हत इति जिपत्वों कुरुतेति कारियस्यन् ॥२४॥

इसका सीघा-सादा अन्वय-अर्थ इस प्रकार बनता है—

प्राचान्तोदकाय (जलसे ग्राचमन करनेके उपरान्त) गां वेदयन्ते (गाय निवेदन की जाती है) । मे (मेरा) पाप्मा (पाप) हत (समाप्त हुग्रा), मे (मेरा) पाप्मा (पाप) हत (समाप्त हो गया) – इति (यह) जिपत्वा (जपकर कहकर — उच्चारण करके) ॐ (ओं उच्चारण करके) कुरुत (करो) इति (यह कहता है) कारियध्यन् (यदि करवाना चाहता है)।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

#### -१०४ क-

(पृष्ठ १०४ की पंक्ति ४ के पश्चात् ग्रीर 'ग्राश्वलायन गृह्यसूत्र' उपशीर्षकके पूर्व जोड़ दिया जाय)

## मधुपर्कके ऐतिहासिक उदाहरण

कुछ ऐतिहासिक उदाहरण भी देखे जायँ जिनमें मधुपर्कके साथ गोसमर्पराका उल्लेख है, न कि गोमांसका—

### बाल्मोकीय रामायण

भरद्वाज मुनिसे जब श्रीराम मिले हैं, तब भरद्वाज मुनिने श्रीरामका ग्रर्घ्य (मधुपर्क) तथा गौ-समर्परा द्वारा स्वागत किया था---

> तस्य तद् वचनं श्रुत्वा राजपुत्रस्य धीमतः । उपानयत धर्मात्मा गामध्यंमुदकं ततः ॥ (ग्रयोध्याकाण्ड ५४.१७)

भ्रथीत्—परम बुद्धिमान राजकुमार श्रीरामका यह वचन सुनकर धर्मात्मा भरद्वाज मुनिने उनके लिये आतिथ्य-सत्कारके रूपमें (उदकम्) पाद-हस्त धोनेको जल, (श्रर्घ्यम्) मधुपर्क तथा (गाम्) एक गौ सर्मापत किये।

भगवान् श्रीरामने भी ग्रगस्त्य ग्रादि महर्षियोंके पधारनेपर उनके स्वागतमें ग्रर्घ्य (मधुपर्क) के साथ गाय भेंट की थी—

हष्ट्वा प्राप्तान् मुनींस्तांस्तु प्रत्युत्थाय कृताञ्जलिः । पाद्यार्घ्यादिभिरानर्च गां निवेद्य च सादरम् ॥ (उत्तरकाण्ड १.१३)

अर्थात्—उन मुनीश्वरोंको उपस्थित देख श्रीरामचन्द्रजी हाथ जोड़कर खड़े हो गये। फिर पाद्य, अर्घ्य (मधुपर्क) ग्रादिके द्वारा उनका आदरपूर्वक पूजन किया ग्रौर उन सबके लिये एक-एक गाय भेंट की।

### -१०४ ख-

महाभारत -

राजा युधिष्ठिरको सभामें नारदजी स्राये तब राजा युधिष्ठिरने उनका गौ-समर्पराके साथ मघुपर्क द्वारा स्वागत-सत्कार किया—

> गां चैव मधुपर्कं च सम्प्रदायार्घ्यमेव च। ग्रर्चयामास रत्नैश्च सर्वकामैश्च धर्मवित्।। (सभापर्व ४.१५)

अर्थात्—धर्मज्ञ नरेशने गौ, मधुपर्क तथा अर्घ्य ग्रादि उपचार ग्रपंगा करते हुए रत्नोंसे उनका विधिपूर्वक पूजन किया तथा उनकी सब इच्छाग्रोंकी पूर्ति करके उन्हें संतुष्ट किया।

भगवान् श्रीकृष्ण जव कौरवोंकी सभामें ग्राये तव उनके श्रातिथ्य-सत्कारके लिये मधुपर्कके साथ गाय समर्पणके लिये लायी गयी थी—

> श्रथ गां मधुपर्कं चाप्युदकं च जनार्दने । उपजह्युर्यथान्यायं धृतराष्ट्रपुरोहिताः ।। (उद्योगपर्व ८६.१६)

ग्नर्थात्—तदनन्तर धृतराष्ट्रके पुरोहितलोग भगवान् जनार्दनके ग्नातिथ्य-सत्कारके लिये उत्तम गौ, मधुपर्क तथा जल ले ग्राये।

जब कुरुराज दुर्योधनके घर भगवान् श्रीकृष्ण गये तब वहाँ भी मधुपर्कके साथ गाय-समर्पणका ही उल्लेख है—

> तिस्मन् गां मधुपकं चाप्युदकं च जनार्दने ॥ निवेदयामास तदा गृहान् राज्यं च कौरवः । (उद्योगपर्व ६१.६-१०)

अर्थात्—उस समय कुरुराजने जनार्दनकी सेवामें गौ, मधुपर्क, जल, गृह तथा राज्य सब कुछ निवेदन कर दिया।

#### -१०४ ग-

### श्रीमद्भागवत महापुराण

श्रक्रूरके ब्रजमें पहुँचनेपर भगवान् श्रीकृष्णने मधुपर्क द्वारा उनका स्वागत-सत्कार किया, उसमें भी गाय भेंटमें उनको दी गयी—

पृष्ट्वाथ स्वागतं तस्यै निवेद्य च वरासनम् । प्रक्षात्य विधिवत् पादौ मधुपर्कार्हग्गमाहरत् ॥ निवेद्य गां चातिथये संवाह्य श्रान्तमाहतः । ग्रन्नं बहुगुगां मेध्यं श्रद्धयोपाहरद् विभुः ॥ (श्रीम० भा० १०.३८.३८-३९)

प्रथित् — घर ले जाकर भगवान्ने उनका वड़ा स्वागत-सत्कार किया।
कुशल-मङ्गल पूछकर श्रेष्ठ ग्रासनपर बैठाया ग्रौर विधिपूर्वक उनके
पाँव पखारकर मधुपर्क (शहद मिला हुग्रा दही) ग्रादि पूजाकी सामग्री
भेंट की। इसके बाद भगवान्ने ग्रतिथि श्रक्त्रको एक गाय दी ग्रौर पैर
दवाकर उनकी थकावट दूर की तथा बड़े ग्रादर एवं श्रद्धासे उन्हें
पवित्र ग्रौर ग्रनेक गुर्गोंसे युक्त श्रन्नका भोजन कराया।

वलरामजीका कौरवोंने मधुपर्क द्वारा स्वागत किया, उसमें भी गाय अर्पण की गयी—

> तं संगम्य यथान्यायं गामध्यं च न्यवेदयत्। तेषां ये तत्प्रभावज्ञाः प्ररोमुः शिरसा बलम्॥ (श्रीम०भा० १०.६८.१९)

ग्रर्थात्—िफर ग्रपनी-ग्रपनी अवस्था ग्रौर सम्बन्धके ग्रनुसार सव लोग बलरामजीसे मिले तथा उनके सत्कारके लिये उन्हें गौ ग्रर्पण की एवं ग्रर्घ्य (मधुपर्क) प्रदान किया।

सुदामा जब द्वारकामें आये तब उनके सत्कारमें भी गाय ग्रर्पणका उल्लेख है। यद्यपि मधुपर्कका स्पष्ट उल्लेख नहीं है, तथापि ग्रतिथि-

### -१०४ घ-

सत्कारमें गायका स्रपंण प्रमाणित होता है-

धूपैः सुरभिभिमित्रं प्रदीपाविलिभिर्मुदा। अचित्वाऽऽवेद्य ताम्बूलं गां च स्वागतमब्रवीत्।। (श्रीम०भा० १०-८०-२२)

ग्नर्यात्—िफर उन्होंने बड़े ग्रानन्दसे सुगन्धित धूप और दीपावलीसे ग्रपने मित्रकी ग्रारती उतारी। इस प्रकार पूजा करके पान एवं गाय देकर मधुर वचनोंसे 'भले पधारे' ऐसा कहकर उनका स्वागत किया।

जनकपुरमें भक्त बहुलाश्वके यहाँ जानेपर भगवान् श्रीकृष्णका श्रातिथ्य-सत्कार किया गया, उसमें मधुपर्कके साथ भक्त बहुलाश्वके द्वारा गाय तथा बैल समर्पण करनेका स्पष्ट उल्लेख है—

> सकुदुम्बो वहन् मूर्ध्ना पूजयांचक्र ईश्वरान् । गन्धमात्याम्बराकल्पधूपदीपार्घ्यगौवृषैः ।। (श्रीम०भा० १०.८६.२६)

ग्रर्थात्—राजा बहुलाश्वने ग्रपने कुटुम्बके साथ उनके चरगोंका लोकपावन जल सिरपर घारगा किया ग्रौर फिर भगवान् एवं भगवत्स्वरूप ऋषियोंको गन्ध, माला, वस्त्र, ग्रलंकार, धूप, दीप, ग्रध्यं (मयुपर्क), गौ, वैल ग्रादि समर्पित करके उनकी पूजा की ।

ऐसे ग्रौर भो ग्रनेक ऐतिहासिक उदाहरण पुराणों में खोजनेसे मिल सकते हैं। किन्तु ऐसा एक भी ऐतिहासिक उदाहरण नहीं मिलेगा जिसमें मधुपर्कमें गोमांस या ग्रन्य कोई मांस दिया गया हो। ग्राज भी मांसाहारी व्यक्ति भी मधुपर्कके साथ तत्काल वध किये हुए पशुका कच्चा मांस खाना स्वोकार नहीं करेगा।

# नया मघुपर्कमें गोमांस सम्भव है ?

श्रीजीवानन्द विद्यासागर, नं०-२, रमानाथ मजूमदार स्ट्रीट, कलकत्ता द्वारा ईस्वी सन् १८६३में प्रकाशित गार्गनारायणीय वृत्ति सहित ग्राइवलायन गृह्यसूत्रके सूचीपत्रमें इस २४वें सूत्रका शीर्षक दिया है— ग्राचान्तोदकाय गोदानम् जिसका ग्रर्थ है ग्राचमनके उपरान्त गोदान जिसको 'they announce to him the cow' शब्दोंसे पाण्डुरंग वामन काणे महोदयने व्यक्त किया है।

२४वें सूत्रके 'कारियण्यन्' शब्दका ग्रर्थ पाण्डुरंग वामन काणे महोदयने 'do it' अर्थात् 'कर्त्तव्य कर्म करें' ठीक किया है, परन्तु वादमें 'if he desires to have it killed' अर्थात् 'यदि वह उसके वधकी इच्छा रखता हो '—कहाँसे ला धुसेड़ा—यह समभमें नहीं आता। जब मधुपकं ग्रहण हो चुका, ग्राचमन करके मुख-शुद्धि कर ली गयी ग्रौर गाय दानके लिये—समर्पणके लिये घोषित कर दी गयी, तब उत्तर बनता है—'ॐ' उच्चारणपूर्वक कहना—मुभे स्वीकार है, दानकी विधिकी जाय ग्रौर स्वीकार न हो तो पीछे दिया हुग्रा सूत्र (ऋग्वेद ८. १०१. १५) उच्चारण करनेका विधान बताया है—माता रुद्राणां दुहिता वसूनाम्—इति जिपत्वो-मुत्सुजतेत्युत्स्रक्ष्यन् ॥२५॥

"He mutters—'the mother of. Rudras and the daughter of Vasus' and says—let her go'."

स्रथित्—हद्रोंकी माता, वसुस्रोंकी दुहिताको (अपने स्थानपर) जाने दो, (मैं नहीं ले जाऊंगा)। यह मन्त्र भी यहाँ उपयुक्त नहीं है जिसका विवेचन हम स्रागे करेंगे। इसमें 'if he desires to have the cow killed' अर्थात् वह गायका वध कराना चाहता हो' मूलसूत्रमें कहीं भी नहीं है स्रीर स्वागत-सत्कारकी स्थात् पाद्य (चरण धोने) की, अर्ध्य (सुगन्धित जल स्रपंण) की, मधुपर्क श्रपंण स्रीर ग्रहिंगाकी, उसके उपरान्त स्राचमन द्वारा मुख-शुद्धि करानेकी विधि पूरी होनेके बाद गौ-समपंणकी बात\* तो समफ में स्रातो है, वधकी बातकी तो कल्पना भी कठिन है।

इसके पश्चात् पाण्डुरंग वामन कार्गो महोदय पृष्ठ ५४५, पंक्ति ६-६ में लिखते हैं—Let the Madhuparka not be without flesh' जो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

१०५

<sup>\* &#</sup>x27;मधुपर्कमें गोदान—गोसमर्पण' शीर्षकके ग्रन्तर्गत मधुपर्कमें गोदानका शास्त्रीय विधान देखिये ।

ग्राश्वलायन-गृह्यसूत्रको प्रथम ग्रध्यायको २४वीं कण्डिकाका ग्रन्तिम सूत्र 'नामांसो मधुपर्को भवति भवति' ।।२६।। ग्रर्थात् 'मांसविहीन मधुपर्क होता ही नहीं' का अर्थ लगता है। वर्तमान मुद्रित ग्रन्थोंमें यह सूत्र देखनेमें जरूर आता है जिसका सीघा-सादा अर्थ यही है कि मधुपर्क अमांस—मांसविहीन नहीं होता, लेकिन यह विषय सम्बद्ध नहीं है। मधुपर्ककी विधिमें मधुपर्ककी वस्तुओं के उल्लेखमें दिघ ग्रौर मघु या दिघ ग्रौर घृत बताया है, मांसकी गन्ध भी नहीं है। मघुपर्ककी विधि पूर्ण हो जानेपर प्रर्थात् मधुपर्क ग्रहण करके ग्राचमन कर लनेके बाद अतिथिकी गायके वध करानेकी इच्छा हो तो 'ॐ' उच्चारण करके कहे कि 'इसका वध करो' ग्रौर 'मांसके विहीन मघुपर्क नहीं होता'—यह बात क्रमके हिसाबसे भी नहीं बैठती ग्रौर सिद्धान्तसे भी ठीक नहीं बैठती । यदि मधुपर्कमें मांस ग्रावश्यकीय होता तो जहाँ मधुपर्कको वस्तुग्रोंका वर्णन है वहां मांसका उल्लेख होता ग्रौर मधुपर्क म्रपंण तथा ग्रह्णाके पूर्व गायके समर्पणाकी घोषणा होती ग्रौर म्रतिथिकी वासना मांसयुक्त मधुपर्क लेनेकी होती तो मधुपर्क ग्रहरा करनेके पूर्व 'ॐ' उच्चारण करके 'do it' (इसका वध) करो कहता, उसके बाद मधुपर्क तैयार होता, अर्पण किया जाता, ग्रहण किया जाता ग्रौर फिर ग्राचमन करके मखशूद्धि होती । ग्रतः यह निश्चय है कि गायके समर्पणकी घोषएा। दानके लिये ही है, ग्रौर ग्रतिथि गायको न ले जाना चाहे तो वह कह सकता है कि 'Let her go' - इसको ग्रपने स्थानपर जाने दो, मैं नहीं ले जाऊँगा। ग्रौर मधुपर्कमें मांसकी कल्पना भी नहीं हो सकती, द्वारपर त्राये त्रितिथिके सत्कारकी विधिमें इतने समय की गुंजाइश ही नहीं होती कि गोवध करके उसका मांस निकाला जाय ग्रौर पकाया जाय। ग्रतः 'मध्रपर्क मांसविहोन नहीं होता' यह कल्पना नितान्त अनुचित लगती है। पाण्डुरंग वामन काएो जैसे कानूनशास्त्री (M. A., LL. M., Advocate) के यह तर्क ह्यानमें न ग्रावे - यह बात मानी नहीं जा सकती । वे जान-बूभकर किसी ग्रौर लक्ष्य-सिद्धिके लिये इसकी ग्रोरसे ग्रांख वन्द कर लें ग्रौर इसको लोगोंसे भी ग्रपनी लक्ष्य-सिद्धिके लिये छिपाये रखनेकी चेष्टा करें - यह वात ग्रलग है।

अब आश्वलायनगृह्यसूत्र, अध्याय १, कण्डिका २४ के २५ वें सूत्रपर विचार किया जाय जो असंगत है और जिसके लिये हमने आगे जाकर विचार करनेका उल्लेख किया है:—

माता खद्राणां दुहिता वसूनामिति जिपत्वोमुत्सृजतेत्युत्स्रक्ष्यन् ।।२४।।

### क्यां मधुपकीं गीमांसं सम्भव है ? श्राखलायनगृह्यसूत्र

१०७

इसका अर्थ है—'माता रुद्राणां दुहिता वसूनाम्' मन्त्र का उच्चारण करके गायको छोड़ देनेकी या लेने की अनुमित देवें। यह मन्त्र ऋग्वेद द. १०१.१५ का है जिसका पूरा रूप इस प्रकार है—

माता रुद्रागां दुहिता वसूनां स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः।
प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय मा गामनागां ग्रदितिं विधिष्ट ॥
इसका ग्रन्वय-अर्थ इस प्रकार है—

रुद्वारणां माता (शत्रुग्नोंको रुलानेवाले वीर महतोंको माता), वसूनां दुहिता (वसुग्नोंको कत्या), ग्रादित्यानां स्वसा (ग्रदितिके पुत्रोंको विहन ग्रीर) ग्रमृतस्य नाभिः (ग्रमृत-रसकी केन्द्र गाय है, इसिलये) चिकितुषे जनाय (ज्ञानी मनुष्यसे) प्र वोचं नु (मैं घोषणा करके कहता हूं कि) ग्रनागां ग्र-दिति गां (निरपराध तथा ग्रवध्य गायका) मा विधष्ट (वध न करो)। ग्रदितिके यहां दो ग्रर्थ हैं—एक जो ऊपर दिया है ग्रीर दूसरा ग्रदनात् ग्रदितिः—भक्षण करने योग्य दूध, दही, मक्खन, घी ग्रादिकी उत्पत्ति करानेवाली। दोनों ही ग्रर्थ उपयुवत ग्रीर ग्राह्म हैं। मां गां विधष्ट (गाय का वध न कर) यह वेदकी ग्राज्ञा इस मन्त्रमें है। (देखिये पं० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर द्वारा सम्पादित गो-ज्ञान-कोश, प्राचीन खण्ड—वैदिक विभाग, प्रथम खण्ड, पृष्ठ ३)।

मधुपर्ककी विधि सभ्पूर्ण हो जानेके बाद उपर्युक्त वेद-मन्त्रकी ग्राज्ञाके विरुद्ध यह कल्पना करना कि ग्रतिथि 'ॐ' उच्चारणके साथ do it (kill it) if he (the honoured guest, who has been offered madhuparka and who has completed the Madhuparka ceremony) desires to have the cow killed—ग्रर्थात् वध कार्य सम्पादन करनेकी ग्राज्ञा देवे यदि वह (ग्रतिथि जो मधुपर्क ग्रहण करके, ग्राचमनद्वारा मुख-शुद्धि करके मधुपर्क विधिको पूरी समाप्त कर चुका है) गोवध करवाना चाहता हो। ग्रमुमान किया जाय कि यह कितनी ग्रसम्भाव्य कल्पना है ग्रीर इसके पश्चात् उल्लेख करना कि 'मांस-रहित मधुपर्क नहीं होता' जब कि मधुपर्ककी विधि बिना मांसके समाप्त करायी जा चुकी। (कोष्ठकके शब्द स्पष्ट करनेके लिये हमारी तरफसे जोड़े गये हैं)।

उपर्यु क्त तर्कोंके अतिरिक्त एक वात और भी विचारणीय है। मधुपर्क-की विधि समाप्त होनेके बाद अतिथिको उसी समय तुरन्त गाय मारकर ग्रंग्रेजीको पुस्तक 'कैम्ब्रिज हिस्ट्री ग्राफ इण्डिया' खण्ड १, ग्रध्याय १०, लेखक: ई० डब्ल्यू० होपिकन्स, पृष्ठ २०८ (द्वितीय संस्करण, १६६२, प्रकाशक—एस. चांद, दिल्ली) में E. W. Hopkins महोदय मधुपर्कके सम्बन्धमें लिखते हैं—

"But it is an old rite of hospitality to kill a cow for a guest and as a matter of form, each honoured guest is actually offered a cow."

ग्रर्थात्—ग्रतिथिके लिये गायकी हत्या करना ग्रातिथ्यकी प्राचीन प्रथा है, ग्रीर इस प्रथाके ग्रनुसार प्रत्येक सम्माननीय ग्रतिथिको वास्तवमें गाय दी जाती है।

### इसके बाद E. W. Hopkins लिखते हैं -

"The host says to the guest, holding the knife ready to slay the cow that he has the cow for him but the guest is directed to say—'Mother of Rudras, daughter of Vasus, sister of Adityas, Navel of immortality (is she), Do not kill the guiltless cow; she is (earth itself), Aditi the goddess.' I speak to them that understand. He adds, 'My sin has been killed and that of so and so, let her go and eat grass'. But if he really wants to have her eaten, he says, 'I kill my sin and the sin of so and so, (in killing her)', and though in many cases, the offer of the cow is thus plainly a formal piece of etiquette, yet the offering to the guest was not complete without flesh of some sort; and it is clear from the formulas, any of the worthiest guests might demand cow's death."

श्रयांत्—गायको कत्ल करनेके लिये छुरी हाथों में लिये हुए यजमान ग्रतिथिको कहता है कि यह गाय उस ग्रतिथिके लिये है। लेकिन ग्रतिथिसे यह कहलाया जाता है—रुद्रोंकी माता, वसुग्रोंकी पुत्री, ग्रादित्योंकी बहिन, ग्रमृतरसकी केन्द्र है, निरपराध गायको मारो मत, यह स्वयं पृथिवी ग्रदिति देवी है। वह ग्रतिथि ग्रौर भी कहता है —''मैं तो उनसे कहता हूँ जो समभदार हैं, मेरे ग्रौर ग्रमुक व्यक्तिके पाप नष्ट हुए, इस गायको घास चरने जाने दो।'' यदि ग्रतिथि गायको (मरवाकर) खाना चाहे तो वह कहता है—(इस गायके नाशके साथ-

# क्या मधुपर्कमें गोमांस सम्भव है ?

साथ) मैं अपने श्रोर अमुकके पाप नष्ट करता हूँ। गो-समर्फें एकी वात श्राजकल प्रतिष्ठा मात्रकी प्रथा रह गयी है, तो भी अतिथिको मधुपर्कका सत्कार-समर्पण किसी-न-किसी प्रकारके मांसके बिना सम्पूर्ण नहीं होता। वह कथित मन्त्रों (formula) से भी स्पष्ट है कि सम्मानीय श्रतिथि गोहत्याकी माँग कर सकता है।

इस प्रकारका कथन पारस्करगृह्यसूत्र १.३.२६ सूत्रके ग्राधारपरही लगता है, जहाँ पाठ इस प्रकार है—

### श्राचान्तोदकाय शासमादाय गौरिति त्रिः प्राह ॥

इसका ग्रर्थ है (ग्रतिथिक द्वारा) श्राचमनीय जल ग्रहण कर लेनेके वाद यजमान शासं लेकर तीन बार कहता है—यह गौ (ग्रापके लिये है—यह गौ (ग्रापके लिये) है। मूल पाठमें कोई भी शब्द ऐसा नहीं है जिसका [ग्र्य कत्ल करनेका या हत्या करनेका हो। 'शासं श्रादाय' शब्दोंका W. Hopkins महोदयसे holding the knife ready to slay the cow'—ग्रर्थात् गायकी कतलके लिये छुरी हाथमें पकड़े हुए—ग्रर्थ किया लगता है। 'शासं' का ग्रर्थ ब्रह्मोक्त याज्ञवल्क्यसंहिता, ग्रध्याय द, श्लोक २१२ (स्मृति-सन्दर्भ, चतुर्थ भागके ग्रन्तर्गत, प्रकाशक—मनसुख राय मोर, नं०-५, क्लाइव रो, कलकत्ता, प्रथम संस्करण) में ऐसा दिया है—ग्राचान्तः शासमादाय शासं शासनमुच्यते—ग्राचमनके पश्चात् शासं पकड़नेका भाव शासंसे शासन करना कहा गया है।

'शासं' शब्दका ग्रर्थ किसी वस्तुके प्रयोगसे नियन्त्रणमें रखनेका है। यहाँपर नये ग्राये हुए ग्रतिथिके लिये गाय लायी जाती है, जो केवल दानके लिये हो सकती है ('मधुपर्कमें गोदान-गोसमर्पण' शीर्षक देखिए)। गायका ऐसा स्वभाव होता है कि ग्रपने पुराने पालकको छोड़कर नये पालकके यहाँ ग्रासानीसे नहीं जाती। ग्राजकल भी देखा जाता है कि कोई गाय नयी जगह भेज दी गयी हो तो दिनके ग्रन्तमें वनसे चरकर लौटते समय वह ग्रपने पुराने पालकके स्थानपर लौट ग्राती है ग्रौर थोड़ी चेष्टा करनेके बाद ही नये पालकसे हिल-मिल जाती है। इस चेष्टामें छड़ी या डण्डे द्वारा शासनके भयका भी कभी-कभी उपयोग करना पड़ सकता है। ऐसे ही नये ग्रतिथिके साथ गाय

258

### प्राचीन भारतमें गोमांस—एक समीक्षाः पारस्करगृबस्त्र

883

जानेमें ग्रापित न करे, इसलिये उनको शासनमें—नियन्त्रणमें रखनेके लिये छड़ी या डण्डा पकड़कर रखनेकी बात कही गयी है, न कि उसको कत्ल करनेके लिये छुरी पकड़नेकी। मूल पाठमें कहीं कत्ल करनेकी या मार डालनेकी गन्ध भी नहीं है। तब E. W. Hopkins महोदय इसके ग्रथं में कत्ल करनेके उद्देश्यसे छुरी हाथमें पकड़े हुए कहाँसे ले ग्राये, कुछ समक्तमें नहीं ग्राता।

मोनियर-विलियम्स संस्कृत-ग्रंग्रेजी कोषमें भी 'शास्' घातुके ग्रर्थ इस प्रकार दिये हैं:—

to chastise; to correct; to censure; to punish; to restrain; to control; to rule; to govern; to administer the law; to direct; to bid; to order; to command; to teach, etc. etc.

'शास्' घातुकी संज्ञा द्वितीया एक वचन 'शासं' होता है, जिसका स्रर्थं 'शासन करनेकी वस्तुको' होता है। जिसको शासनने मृत्यु-दण्ड दिया हो उसके लिये 'शासं' शब्दका ग्रर्थं 'छुरा' या 'तलवार' भी हो सकते हैं। किन्तु यहाँ 'छुरा' या 'तलवार' ग्रर्थं समीचीन नहीं हो सकता।

पारस्करगृह्यसूत्र १.३.२६ के आगेके "प्रत्याह माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः। प्र नु वोचिञ्चिकतुषे जनाय मा गामनागामदिति विधिष्ट । मम चामुष्य च पाप्मानं हनोमोति यद्यालभेत ॥२७॥ अथ
यद्युत्सिसृक्षेन्मम चामुष्य च पाप्मा हत ॐ उंत्सृजत तृगान्यत्विति ब्रूयात्
॥२६॥ न त्वेवामांसोऽर्घः स्यात् ॥२६॥" वचनों का तात्पर्यं प्रायः वही है जो
ग्राश्वलायनगृह्यसूत्र १.२४ के "हतो मे पाप्मा पाप्मा मे हत इति जिपत्वोंकुरुतेति कारिष्य्यन् ॥२४॥ माता रुद्रागां दुहिता वसूनामिति जिपत्वोमृत्सृजतेत्युऋक्यन् ॥२५॥ नामांसो मधुपर्को भवति भवति ॥२६॥" वचनोंका
है जिसकी ग्रालोचना 'आश्वलायनगृह्यसूत्र' शीर्षकके अन्तर्गत देखिये। केवल
२५वें सूत्रमें थोड़ी भिन्नता है जिसका सीधा-सीधा ग्रथं पाठकको जानकारी
के लिये दिया जाता है, जिसमें घास चरनेको छोड़नेकी बात भी गायका
समप्ण-गोदानकी बातको पुष्ट करता है।

### क्या मध्यर्क गोमांस सम्भव है? वशिष्ठधर्मसूत्र श्रीर शांख्यायनगृह्यसत्रः

२८वें सत्रका अर्थ इस प्रकार है-

ग्रथ यदि (यदि) उत्सिस्क्षेत् (छोडना चाहे) मम च (मेरा) ग्रमुष्य च (इस ग्रतिथेयका) पाप्सा (पाप) हतः (समाप्त हो गया) श्रोम उत्सृजत (छोड़ दो) तृणानि (धास) अतु (खाए) इति (यह) ब्रुयात् (बोले) ॥

पारस्करगृह्यसूत्रके २६वें सूत्र "नत्वेवामांसोऽद्यः स्यात्" का ग्रर्थं भी "नामांसो मधुपकों भवति" की तरह दो प्रकारका है-

- (१) न तू एव अयांसी अर्घ्यः स्यात्
- (२) न तू एव ग्रामांसो ग्रध्यः स्यात्

पहलेका भाव है-ग्रर्घ्य (मधपर्क) ग्रमांसः (मांसरहित) निश्चयपूर्वक नहीं होता । दूसरे ग्रर्थका भाव है - ग्रर्घ्य (मधुपर्क) ग्रामांसः (मांससहित) निश्चयपूर्वक नहीं होता । इन दोनों अर्थोंकी संगति तथा ग्रसंगतिका विवेचन तथा "मांस" का ग्रर्थ गूदेदार फलका विवेचन ग्राश्वलायनगृह्यसूत्रके ग्रन्तर्गत हो चुका है।

# वसिष्ठधर्मसूत्र और शांखायनगृह्यसूत्र

पाण्ड्रंग वामन कारो अपने ग्रंग्रेजीके ग्रंथ धर्मशास्त्रका इतिहास, खण्ड २, भाग २, ग्रध्याय २२, 'भोजन — मांसाहार' प्रकरणमें पृष्ठ ७७८, पंक्ति २२-२४ में लिखते हैं--

"Manu (V. 27-44) at first contains a permission to kill animals only in Madhuparka, in sacrifice (Yajna) and in rites for gods and manes and on no other occasion. This is same as Vashishtha VI. 6 Vishnudharma-Sutra 51.64, Shankhyayana-Grihya-Sutra II.16.1, (Sankhayana-griha-sutra सोमे for यजे)."

ग्रथात्-मनुने (५.२७-४४) ग्रारम्भमें मधुपर्क, यज्ञ ग्रीर देवों एवं पितरोंके कार्योंके अवसरपर जीवहिंसाकी आज्ञा दी है और किसी भी ग्रवसर पर नहीं । ऐसी ही बात विशष्ठधर्मसूत्र ४.६, विष्साधर्मसूत्र ५१.६४, सांख्यायनगृह्यसूत्र २,१६,१ में बतायी (सांख्यायनगृह्यसूत्रमें यज्ञके स्थानपर सोम शब्द प्रयोग हम्रा है)।

883

### प्राचीन भारतमें गोमांस-एक सभीक्षा

888

वर्तमान उपलब्ध मनुस्मृतिमें केवल ५.४१ में मधुपर्कमें मांस का उल्लेख आता है, जिसका विवेचन 'मनुस्मृति' शीर्षकके अन्तर्गत देखिये। ठीक यही पाठ आजकल प्राप्त वृश्चिष्ठधर्मसूत्र (वसिष्ठधर्मशास्त्र या वसिष्ठस्मृति) ४.६ में तथा सांख्यायनगृह्यसूत्र २.१६.१ में है—

## मधुपर्के च यज्ञे च पितृदैवतकर्मणि । स्रत्रेव च पशुं हिस्यान्नान्यथेत्यब्रवीन्मनुः ।।

वसिष्ठधर्मसूत्र या सांख्यायनगृह्यसूत्रका यह स्वतन्त्र ग्रादेश नहीं है कि मधुपकंमें, यज्ञमें पितृकर्ममें ग्रौर देवकर्ममें पशु-हिंसाकी जा सकती है, ग्रन्यत्र नहीं; मनुने ऐसा कहा है—यह उल्लेख है।

उपर्युक्त पाठका इलोक मनुस्मृति (५.४१) का हो नहीं सकता, जो 'मनुस्मृति' शीर्षकके ग्रन्तर्गत दिये गये तर्कसे सिद्ध हो जाता है, एवं वैसा स्वतन्त्र विधान मनुस्मृतिमें और कहीं है नहीं; ग्रतः यह भी सिद्ध हो जाता है कि विशष्ठधमंसूत्रका या पाण्डुरंग वामन कारो महोदय द्वारा उद्धृत सांख्यायनगृह्यसूत्र या ग्रन्य धमंग्रन्थोंका वैसे ही पाठका विधान वास्तविक नहीं है, कल्पित ग्रौर मिथ्या है, विशेष करके मनुस्मृतिमें जब वैसा स्वतंत्र रूपसे दिया हुग्रा विधान कहीं भी ग्रौर नहीं मिलता।

वसिष्ठधर्मसूत्र, ग्रध्याय ४ में उपर्यु क्त छठे श्लोकके ग्रतिरिक्त सातवाँ श्लोक इस प्रकार है—

नाकृत्वा प्रारिगनां हिंसां मांसमुत्पद्यते क्वचित्। न च प्राणिवधः स्वार्थस्तस्माद्यागे वधोवधः॥

यह रलोक मनुस्मृति ५.४८ से मिलता हुग्रा है, केवल ग्रन्तिम चरणमें पाठभेद है। यहाँ 'तस्माद्यागे वधोवधः' है जिसका ग्रर्थ है 'यज्ञकी हिंसा ग्रिहिंसा ही मानी जाती है' ग्रौर मनुस्मृतिका पाठ है 'तस्मान्मांसं विवजंयेत्' जिसका ग्रर्थ है-'इसलिये मांस नहीं खाना चाहिये।' मनुस्मृतिके इस श्लोकका पाठ वेद-सम्मत होनेसे ग्राह्य है एवं विशिष्ठधर्मं सूत्रका पाठ वेद-विरुद्ध होनेसे ग्रमान्य है।

## बौधायनगृह्यसूत्र

पाण्डुरंग वामन कारो महोदय ग्रपने ग्रंग्रेंजी भाषाके ग्रन्थ धर्मशास्त्रका इतिहास, खण्ड २, भाग १ ग्रध्याय १० के मधुपर्क प्रकरणमें पृष्ठ ५४४, पंक्ति

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

### क्या मधुपर्कमें गोमांस सम्भव है ? मानवगृद्यसूत्र

११५

३२-३७ में लिखते हैं-

"The Baudhayana-Grihya-Sutra says (I.2.51-54) that when the cow is let off, the flesh, of a goat or ram may be offered or some forest flesh (of a deer etc.) may be offered, as there can be no Madhu-parka without flesh or if one is unable to offer flesh, one may cook ground grain."

ग्रर्थात्—बौधायनगृह्यसूत्र १.२.५१-५४ का कथन है कि यदि गाय छोड़ दी जाय तो बकरे या भेड़ेका मांस ग्रथवा कोई जंगली मांस जैसे हरिण ग्रादिका दिया जा सकता है, क्योंकि बिना मांसके मधुपर्क हो ही नहीं सकता ग्रथवा यदि कोई मांस न दे सकता हो तो पीसा हुआ ग्रन्न ही पकाकर दे देवे।

इन सूत्रोंका मूल पाठ इस प्रकार है-

तस्यामुत्सृष्टायां मेषमजं वाऽऽलभते ॥५१॥ आरण्येन वा मांसेन ॥५२॥ न त्वेयामांसोऽष्टर्यस्स्यात् ॥५३॥ श्रज्ञावतौ पिष्टान्नं संसिद्ध्येत् ॥५४॥

मधुपर्कको वस्तुओं में बौधायनगृह्यसूत्रके अनुसार मधु, दही, दूध, घृत श्रीर जल—ये ही पाँच वस्तुएँ बतायी गयी हैं। पहले इसका विवेचन हो चुका है कि न तो मधुपर्ककी वस्तुओं में मांसका उल्लेख है, न ग्रितिथिस्तिकारकी विधिमें जो समय लगता है उसमें पशुवध करके मांस देने की गुंजाइश है, [वन्य पशु (हिरण ग्रादि) मारकर उनका मांस लाने में तो ग्रीर भी अधिक समय लगता है] ग्रीर न सिद्धान्तके अनुसार मांस वांछनीय है। ग्रातः पशुमांसके बिना मधुपर्क नहीं होता—से सब मिथ्या बातें हैं। यदि मांसके बिना मधुपर्क नहीं हो सकता, तो पीसा हुग्रा ग्रन्न पकाकर देने का विधान क्यों बताया गया? इससे सिद्ध होता है कि 'मांसके बिना मधुपर्क नहीं हो सकता' यह बात यथार्थ नहीं है।

### मानवगृह्यसूत्र

पाण्डुरंग वामन कारो महोदय ग्रपने ग्रंग्रेजीके ग्रन्थ 'धर्मशास्त्रका इतिहास,' खण्ड २, भाग १, ग्रध्याय १० में मधुपर्कके प्रकरणमें पृष्ठ ४४५, पंक्ति २८-३१ में लिखते हैं—

"The Manava-grihya-Sutra I. 9.22 says that the Veda declares

## प्राचीन भारतमें गोमांस-एक समीक्षा

that the Madhuparka must not be without flesh and so it recommends that if the cow is let loose, goat's meat or Payasa (rice cooked in milk) may be offered."

ग्नर्थात्—मानवगृह्यसूत्र १.६.२२ में बताया गया है कि वेदका कथन है कि मधुपर्क मांस-विहीन नहीं होना चाहिये, ग्रतः यदि गाय छोड़ दी जाय तो बकरो-वंशके पशुका मांस या पायस ही दे दिया जाय।

मूल सूत्र इस प्रकार है—
पत्रवङ्गः पायसं वा कारयेत् नामांसो मधुपर्को इति श्रुतिः ।।

ब्राह्मणसर्वस्व मासिक-पत्रके सम्पादक भीमसेन शर्मा द्वारा इसका हिन्दी-ग्रर्थ इस प्रकार किया गया है (सत्यव्रत शर्मा द्विवेदी द्वारा प्रकाशित, वेदप्रकाश यन्त्र द्वारा मुद्रित, सनातन धर्म पुस्तकालय, इटावासे प्राप्य, पृष्ठ १६-२०)—

पशुके ग्रङ्ग रूप पायस (खीर) मधुनकं पूजनमें करा लेवे क्योंकि दूध भी पशुका ग्रंश होनेसे उसमें कारण रूपसे सभी विद्यमान हैं। श्रुतिमें लिखा है कि मांसके विना मधुपर्क नहीं होता, सो खीर वना लेनेपर भी पश्वङ्ग होनेसे मधुपर्कका श्रुत्यर्थ चरितार्थ है।

सबसे पहले वर्णन किये गये 'वेदों में मधुपर्क ?' शीर्षक के अन्तर्गत पण्डित श्रीपाद दामोदर सातवलेकरके उल्लेखके अनुसार वेदों में कहीं मधुपर्क का नाम भी नहीं है। मानवगृह्यसूत्रके प्रिणता अथवा टीकाकारने वेदमन्त्रका उद्धरण नहीं दिया, इसलिये यह बात स्वीकार नहीं की जा सकती कि वेदमें ऐसा उल्लेख है कि मधुपर्क बिना मांसके नहीं होता। यदि मांसका अर्थ पश्से प्राप्त दुग्ध एवं चावलके मिश्रणसे निर्मित पायस लिया जाय तो यह बात मांस-प्रचारकों को स्वीकार नहीं होगी और यदि वे इसको स्वीकार कर लेते हैं तो हमको कोई आपत्ति नहीं है, क्यों कि इसमें हिंसा नहीं है। शतपथ ब्राह्मणमें भी मांसको 'परमान्न' नाम दिया है एतदु ह वे परममन्नाद्य यन्मांसन् —शतपथ ११७१३) और अमरकोशके अनुसार 'परमान्न' (दूध न्वावलके मिश्रणसे पका हुआ और शवकरयुक्त) पायसका पर्यायवाची है (परमान्नं तु पायसम् —अमरकोश २.७.२४)। किन्तु पायस तैयार करनेमें समय लगता है और मधुपकंको विधिमें इतने समयकी प्रतीक्षाको गुंजाइश नहीं है, इसलिये पायस (खार) को जगह पय (धारोब्ण दूध) का होना

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

११६

# क्या मधुपर्कमें गोमांस सम्भव है ?

290

श्रधिक उपयुक्त बात लगती है। पाण्डुरंग वामन कारो महोदय द्वारा कथित बकरेके मांसका मानवगृह्यसूत्रके इस मन्त्रमें कहीं उल्लेख नहों है, वे कहांसे बकरेका मांस खोज लाये सो वे ही जानें।

## मनुस्मृति

राजा राजेन्द्रलाल मित्रकी ग्रंग्रेजी पुस्तक 'प्राचीन भारतमें गोमांस' के पूर्वोल्लिखित संस्करणमें पृष्ठ ६ पर यह उल्लेख है कि जब ब्रह्मचारी वेदाध्ययन करके ग्रावे, तब उसको उच्चासनपर बैठाकर, पृष्पहार पहिनाकर, उसके विवाहके पूर्व उसका पिता उसको गौ देकर मधुपर्क विधिसे सम्मानित करे (मनुस्मृति ३.३)। इसमें कोई विरोधकी वात नहीं है। इसके वाद राजा राजेन्द्रलाल मित्र लिखते हैं—

"In a subsequent passage (Manu III. 119, 120) he (Manu) recommends the Madhuparka or the 'honeyed meal' with beef for the reception of Kings and other great dignitories."

'ग्रथीत्--ग्रागे जाकर मनु (३.११६,१२०) वताते हैं कि राजा एवं ग्रन्य बड़े प्रतिष्ठित व्यक्तियोंका गोमांस सहित मधुपर्कके द्वारा स्वागत किया जाय।''

मनुस्मृति, तीसरे ग्रध्यायके ११६ ग्रौर १२०वें श्लोक इस प्रकार हैं-

राजित्विवस्नातकगुरुन्प्रियश्वसुरमातुलान् । अर्हयेन्मधुपर्केगः परिसंवत्सरात्पुनः ॥ राजाः च श्रोत्रियश्चैव यज्ञकर्मण्युपस्थितौ । मधुपर्केण संपूज्यौ न त्वयज्ञ इति स्थितिः ॥

उपर्युंक्त पहले श्लोकमें—राजा, ऋित्वक्, गुरु, जामाता, श्वसुर और मामाका वर्षमें एक बारके ग्रागमन पर मधुपर्क द्वारा सम्मान करे—बताया है और दूसरे श्लोकमें यह कहा है कि यज्ञकार्यमें राजा ग्रौर श्रोत्रिय जब भी आवें तभी मधुपर्कसे उनका सम्मान करे। इन दोनों श्लोकोंमें मधुपर्कसे सम्मान करनेकी बात तो जरूर कही है, किन्तु गोमांसकी इनमें गन्ध भी नहीं है। पता नहीं, राजा राजेन्द्रलाल मित्रको ग्रथवा ग्रौर लोगोंको इस प्रसंगमें इन श्लोकोंका उल्लेख करते हुए, चाहे वह कोई भी हों, इनमें गोमांसकी गन्ध कहाँसे ग्रा गयी?

## प्राचीन भारतमें गोमांस-एक समीक्षा

राजा राजेन्द्रलाल मित्र उसी पुस्तकके पृष्ठ २६ पर लिखते हैं—

"Asvalayana emphatically ordains that no Madhuparka should be celebrated without flesh."

ग्रथात्—ग्राश्वलायन जोर देकर कहते हैं कि मांसके बिना मधुपर्ककी विधि नहीं होनी चाहिये—'नामांसो मधुपर्को भवति भवति' इसका विवेचन 'मधुपर्कको वस्तुएँ', 'मधुपर्क द्वारा आतिथ्य-सत्कारकी विधिमें गोमांस ग्रसंभव है ?' एवं 'ग्राश्वलायनगृह्यसूत्र शीर्षकोंके ग्रन्तर्गत हो चुका है।

पाण्डुरंग वामन कारो अपने अंग्रेजोके ग्रन्थ 'धर्मशास्त्रका इतिहास ?, खण्ड २, भाग २, ग्रध्याय २२, 'भोजन''मांसाहार' प्रकरणमें लिखते हैं—

"Manu (V. 41) contains a permission to kill animals only in Madhuparka and in sacrifice (Yajna) and in rites for gods and manes and no other occasions."

ग्रर्थात्—मनु (ग्रध्याय ५, श्लोक ४१) मधुपर्क, यज्ञ, पितृकर्म, देवकर्ममें जीव हिंसाको छूट देते हैं।

आजकलके उपलब्ध मनुस्मृतिके संस्करणोंमें उपर्युक्त पाठ इस प्रकार हैं—

> मधुपर्के च यज्ञे च पितृदैवतकर्मणि । स्रत्रेव परावो हिस्या नान्यत्रेत्यब्रवीन्मनुः ॥ (मनुस्मृति ५.४१)

इसका ग्रथं इस प्रकार है-

295

मधुपर्कमें, यज्ञमें, पितृकर्ममें, देवकर्ममें—इतने ग्रवसरोंपर पशुकी हिंसा की जा सकती है, ग्रीर कहीं नहीं —ऐसा मनुने कहा है।

इसके अन्तिम वाक्यांश इत्यब्रवीन्मनुः—इति अव्रवीत् मनुः—ऐसा मनुने कहा है "इस बातके द्योतक हैं कि ये वचन मनुस्मृतिके नहीं हैं। मनुस्मृतिमें दिये गये विधान सभी मनु महाराजके हैं, उसमें यह कहनेकी आवश्यकता नहीं पड़ती कि यह मनुने कहा है। और किसी ग्रन्थमें मनुके विधानका उदाहरण दिया जाय तो वहाँ ऐसा कहा जा सकता है कि ऐसा मनुने कहा है—मनुने ऐसा विधान दिया है। इसमें भी यह सिद्ध होता है कि यह वचन मनुस्मृतिके अन्तर्गत मनु महाराजके द्वारा दिये गये विधानका नहीं है।

Cambridge History of India, Vol. I, Chapter X, (by E. W. Hopkins), page 208, (Ind cdition, 1962, published by S. Chand & Co., Delhi) में भी मनुस्मृतिके उपर्यु क्त श्लोकके ग्राधारपर ही लिखा लगता है—'The general rule in this regard is that attributed to Manu—'Animals may be killed (so said Manu) at the Madhuparka and Soma sacrifice (yajna) and at the rite for manes and gods'—जो श्लोक उपर्यु क्त तर्कके ग्रनुसार मनुस्मृतिका न होनेसे यह यह लेख भी निराधार सिद्ध हो जाता है।

# ( पृष्ठ ११६, पंक्ति द ग्रौर ६ के बीच जोड़ दिया जाय )

मनुस्मृतिका उपर्युक्त क्लोक (५.४१) वास्तविक नहीं है—इसका प्रमाण महाभारत, शान्तिपर्वमें भीष्मिपतामहके द्वारा महाराज युधिष्ठरके प्रति दिये गये उपदेशके अन्तर्गत कहे गये वाक्योंमें भी है—

सर्वकर्मस्विहिसा हि धर्मात्मा मनुरब्रवीत्। कामकाराद् विहिसन्ति बहिर्वेद्या पशून् नराः॥ (गीताप्रेस संस्करण २६५.५; भण्डारकर संस्करण २५७.५)

ग्रथात्—धर्मात्मा मनुने सम्पूर्ण कर्मों ग्रहिसाका ही प्रतिपादन किया है। मनुष्य ग्रपनी कामनासे ही, ग्रथात् मांस-भक्षणकी कामनासे प्रेरित होकर ही यह बहाना बतलाकर कि यज्ञकी हिंसा हिसा नहीं मानी जाती, यज्ञकी बाह्यवेदीपर पशुओंका बलिदान करते हैं। न हो तो वसी ग्रवस्थामें ही मांस ग्रहणका विधान है, ग्रन्य अवस्थाग्रोंमें नहीं। इस विधानके अनुसार भी मधुपकंमें मांसका होना सम्भव नहीं।

निम्न श्लोक भी मनुस्मृति, पाँचवें ग्रध्यायके ही हैं—
योऽहिंसकानि भूतानि हिनस्त्यात्मसुखेच्छ्या।
स जीवंश्च मृतश्चेव न ववचित्सुखमेधते॥४५॥

जो व्यक्ति ग्रपने सुखकी इच्छासे हिंसा न करनेवाले जीवोंको मारता है वह इस लोकमें तथा परलोकमें सुख नहीं पाता। राजा राजेन्द्रलाल मित्र उसी पुस्तकके पृष्ठ २६ पर लिखते हैं—

"Asvalayana emphatically ordains that no Madhuparka should be celebrated without flesh."

प्रथात्—ग्राश्वलायन जोर देकर कहते हैं कि मांसके बिना मधुपर्ककी विधि नहीं होनी चाहिये—'नामांसो मधुपर्को भवति भवति' इसका विवेचन 'मधुपर्कको वस्तुएँ', 'मधुपर्क द्वारा आतिथ्य-सत्कारकी विधिमें गोमांस ग्रसंभव है ?' एवं 'ग्राश्वलायनगृह्यसूत्र शीर्षकोंके ग्रन्तर्गत हो चुका है।

पाण्डुरंग वामन कारो अपने अंग्रेजीके ग्रन्थ 'धर्मशास्त्रका इतिहास ?, खण्ड २, भाग २, ग्रध्याय २२, 'भोजन मांसाहार' प्रकरणमें लिखते हैं—

"Manu (V. 41) contains a permission to kill animals only in Madhuparka and in sacrifice (Yajna) and in rites for gods and manes and no other occasions."

ग्रर्थात्—मनु (ग्रध्याय ५, इलोक ४१) मधुपर्क, यज्ञ, पितृकर्म, देवकर्ममें जीव हिंसाकी छूट देते हैं।

आजकलके उपलब्ध मनुस्मृतिके संस्करणोंमें उपर्युक्त पाठ इस प्रकार हैं—

> मधुपर्के च यज्ञे च पितृदैवतकर्मणि । स्रत्रेव पशवो हिस्या नान्यत्रेत्यब्रवीन्मनुः ॥ (मनुस्मृति ५.४१)

इसका ग्रथं इस प्रकार है-

मधुपर्कमें, यज्ञमें, पितृकर्ममें, देवकर्ममें—इतने ग्रवसरोंपर पशुकी हिंसा की जा सकती है, ग्रीर कहीं नहीं —ऐसा मनुने कहा है।

इसके अन्तिम वाक्यांश इत्यब्रवीन्मनुः — इति अव्रवीत् मनुः — ऐसा मनुने कहा है "इस बातके द्योतक हैं कि ये वचन मनुस्मृतिके नहीं हैं। मनुस्मृतिमें दिये गये विधान सभी मनु महाराजके हैं, उसमें यह कहनेकी आवश्यकता नहीं पड़ती कि यह मनुने कहा है। श्रौर किसी ग्रन्थमें मनुके विधानका उदाहरण दिया जाय तो वहाँ ऐसा कहा जा सकता है कि ऐसा मनुने कहा है — मनुने ऐसा विधान दिया है। इससे भी यह सिद्ध होता है कि यह वचन मनुस्मृतिके अन्तर्गत मनु महाराजके द्वारा दिये गये विधानका नहीं है।

Cambridge History of India, Vol. I, Chapter X, (by E. W. Hopkins), page 208, (Ind cdition, 1962, published by S. Chand & Co., Delhi) में भी मनुस्मृतिके उपर्यु क्त इलोकके ग्राधारपर ही लिखा लगता है—'The general rule in this regard is that attributed to Manu—'Animals may be killed (so said Manu) at the Madhuparka and Soma sacrifice (yajna) and at the rite for manes and gods'—जो इलोक उपर्यु क्त तर्कके ग्रनुसार मनुस्मृतिका न होनेसे यह यह लेख भी निराधार सिद्ध हो जाता है।

मनुस्मृतिके इसी पांचवें ग्रध्यायमें २७ वां श्लोक इस प्रकार है— प्रोक्षितं अक्षयेन्मांसं बाह्यणानां च काम्यया। यथाविधि नियुक्तस्तु प्राणानःमेव चात्यये।।

इसका शुद्ध ग्रर्थ अन्वयसहित नीचे दिया जा रहा है-

च (ग्रौर) प्राणानाम् (प्राणोंके) ग्रत्यये (निकलनेकी स्थिति होनेपर) एव (ही) (ग्रर्थात्-प्राण-संकट उपस्थित हो, तभी ग्रौर किसी हालतमें नहीं) बाह्मणानाम् (ब्राह्मणोंकी) काम्यया (कामनासे —ग्रनुमितसे) (ग्रर्थात्-उस व्यक्तिके लिये प्राण-धारण जरूरी समफकर ब्राह्मणा लोग ऐसी कामना करें तो हो) यथाविध (विधिके ग्रनुसार) नियुक्त (नियुक्त होकर) प्रोक्षितं (ग्रिभमन्त्रित किये हुए) मांसं (मांसको) भक्षयेत् (खावे) (ग्रन्य स्थितिमें या ग्रन्य प्रकारसे नहीं।)

इससे स्पष्ट है कि उन व्यक्तियों के लिये जो प्राणों का मोह नहीं छोड़ सकते, प्राण-संकट उपस्थित होनेपर ही—जैसे अकालके समय अन्न न मिलनेपर अथवा किसी रोग विशेषमें प्राणरक्षाके लिये अन्य उपचार सम्भव न हों तो वैसी अवस्थामें ही मांस ग्रहणका विधान है, अन्य अवस्थाओं में नहीं। इस विधानके अनुसार भी मधुपर्कमें मांसका होना सम्भव नहीं।

निम्न रलोक भी मनुस्मृति, पाँचवें ग्रध्यायके ही हैं— योऽहिंसकानि भूतानि हिनस्त्यात्मसुखेच्छया। स जीवंश्च मृतश्चैव न ववचित्सुखमेधते ॥४५॥

जो व्यक्ति ग्रपने सुखकी इच्छासे हिंसा न करनेवाले जीवोंको मारता है वह इस लोक में तथा परलोकमें सुख नहीं पाता।

### प्राचीन भारतमें गोमांस-एक समीक्षा

यो बन्धनवधक्लेशान्त्रागिनां न चिकीर्षति । स सर्वस्य हितप्रेप्सुः सुखमत्यन्तमञ्जुते ॥४६॥

220

जो प्राणियोंको बन्धनमें रखनेकी, मारनेकी या क्लेश देनेकी इच्छा नहीं करता, वह सबका हित चाहनेवाला ग्रत्यन्त सुख पाता है।

> यद्घ्यायति यत्कुरुते घृतिं बध्नाति यत्र च । तदवाप्नोत्ययत्नेन यो हिनस्ति न किंचन ॥४७॥

जो किसीकी भी हिंसा नहीं करता, वह जो चाहता है, जो संकल्प करता है, जिस वस्तुको प्राप्त करनेकी इच्छा करता है, वे सब उसको अनायास प्राप्त हो जाते हैं।

नाकृत्वा प्राणिनां हिसां मांसमुत्पद्यते क्वचित् । न च प्राणिवधः स्वर्ग्यस्तस्मान्मांसं विवर्जयेत् ॥४८॥

जीवकी हिंसा किये बिना कभी मांस उत्पन्न नहीं हो सकता। प्राणियोंके वधसे स्वर्ग नहों मिलता, इसलिये मांस नहीं खाना चाहिये।

समुत्पत्ति च मांसस्य वधबन्धौ च देहिनाम् । प्रसमीक्ष्य निवर्तेत सर्वमांसस्य भक्षगात् ॥४६॥

मांसकी उत्पत्तिको और जीवोंके वध-बन्धनको ग्रच्छी तरह विचार कर सब प्रकारके मांस-भक्षणको त्याग कर देना चाहिये।

> न भक्षयित यो मांसं विधि हित्वा पिशाचवत् । स लोके प्रियतां याति व्याधिभिश्च न पीड्चते ॥५०॥

(पिशाचवत्) पिशाच ग्रथीत् दुष्ट पुरुषोंके समान (विधि) भोजन तथा भक्ष्य-ग्रभक्ष्यके नियमको (हत्वा) छोड़कर (यः मांसं न भक्षयित) जो मांसको नहीं खाता ग्रथीत् जो पुरुष भक्ष्य-ग्रभक्ष्य सम्बन्धी नियम तोड़ने वाले पिशाचोंका ग्रनुकरण नहीं करता, (स) वह (लोके) जगत्में (प्रियतां याति) प्रियता को पाता है। (व्याधिभिःच न पीड्यते) ग्रौर न रोगोंसे ग्रसित होता है।

ग्रनुमन्ता विशिष्तता निहन्ता क्रयविक्रयी। संस्कर्ता चोपहर्ता च खादकश्चेति घातकाः ॥५१॥

मारनेकी स्वीकृति देनेवाला, उसको खण्ड-खण्ड करनेवाला, मारने वाला,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

### वया मधुपर्कमें गोमांस सम्भव है ? मनुस्मृति

१२१

बेचने ग्रौर खरीदनेवाला, पकानेवाला, परोसनेवाला, ग्रौर खानेवाला—ये सब घातक माने गये हैं।

> वर्षेवर्षेऽ इवमेधेन यो यजेत शतं समाः । मांसानि च न खादे चस्तयोः पुण्यफलं समम् ॥५३॥

जो प्रत्येक वर्ष एक सौ वर्षों तक ग्रश्वमेघ यज्ञ करता है ग्रौर जो विलकुल ही मांस नहीं खाता, इन दोनोंका पुण्यफल वरावर है।

> फलमूलाशनैर्मेध्यैर्मुन्यन्नानां च भोजनैः। न तत्फलमवाप्नोति यन्मांसपरिवर्जनात्।।५४॥

फल-मूल ग्रौर मुनियोंके जैसे भोजनसे वह फल नहीं मिलता, जो केवल मांस छोड़ देनेसे मिलता है।

> मां स भक्षयिताऽमुत्र यस्य मांसमिहाद्म्यहम् । एतन्मांसस्य मांसत्वं प्रवदन्ति मनोषिएाः।।५५॥\*

मैं यहाँ जिसका मांस खाता हूँ, परलोकमें (मां) मुक्तको भी (स) वह खायगा — यही मांसका मांसत्व है (यही मांस शब्दकी निरुक्ति है) ऐसा पण्डितोंका कहना है।

मनुस्मृति अध्याय ११—

हिसया व्याधिसूयस्त्वम् ॥५२॥ । ग्रर्थात्—हिंसासे (मांस-भक्षणसे) व्याधि (रोग) उत्पन्न होता है ।

यक्षरक्षः पिशाचान्नं मद्यं मांसं सुरासवं ।।६६।।।। अर्थात्—मद्य, मांस म्रादि यक्षों, राक्षसों ग्रौर पिशाचोंका ग्रन्न है ।

\*ये त्वनेवंविदाऽसन्तः स्तब्धाः सदिभमानिनः।

पशून दुद्धान्ति विस्रब्धाः प्रेत्य खादन्ति ते च तान् ॥ (श्रीम०भा० ११.५.१४)
श्रर्थात् — जो इस विशुद्ध धर्मको नहीं जानते, वे घमण्डी वास्तवमें तो दुष्ट हैं, परन्तु
समभते हैं अपनेको श्रेष्ठ । वे धोखेमें पड़े हुए लोग पशुश्रोंकी हिंसा करते हैं
श्रीर मरनेके बाद वे पशु उन मारनेवालोंको खाते हैं ।

ौ''न्या वैदिक कालमें गोहिसा, मांसपरक यज्ञ और मांस-भक्षण प्रचलित था ?'' शीर्षकके अन्तर्गत 'मुस्लिम धर्ममें गोमांस निषेध' उपशीर्षक देखिये।

िउपर्यु क्त शीर्षकके अन्तर्गत 'मांस-भक्षीके लिये दण्ड-विधान' उपशीर्षक देखिये।

बड़े श्राइचर्य श्रीर खेदके साथ यह प्रश्न पैदा होता है कि राजा राजेन्द्रलाल मित्र (Doctor of Law, LL.D.) श्रीर श्रीपाण्डुरंग वामन कागो (M.A., LL.M. Advocate) महोदयके सदृश कानूनके शास्त्री विद्वानोंके द्वारा मनुस्मृतिके उपर्युक्त स्पष्ट विधानोंको क्यों श्रवहेलना की गयो और क्यों उनके द्वारा मनुस्मृतिके नामपर मांसाहारके प्रचारका निन्दनीय प्रयत्न किया गया ?

ऊपर उद्धत मनुस्मृति, ग्रध्याय ५, श्लोक संख्या ५५ के समर्थनमें श्रोमद्भागवत महापुराण, स्कन्ध ४, अध्याय २५ में एक राजा प्राचीनविहिके इतिहासका वर्णन ग्राता है जो पशुग्रोंकी हिंसाके द्वारा यज्ञ किया करता था। श्रोनारदजीने उसको बताया—

> भो भोः प्रजायते राजन् पशून् पश्य त्वयाध्वरे । संज्ञापिताञ्जोवसङ्धान्निर्घृ गोन सहस्रशः ।।७॥ एते त्वां सम्प्रतीक्षन्ते स्मरन्तो वेशसं तव । सम्परेतमयः कूटैश्छिन्दन्त्युत्थितमन्यवः ।।८॥

श्रीनारदजीने कहा-देखों, देखों, राजन् ! तुमने यज्ञमें निर्दयतापूर्वक जिन हजारों पशुग्रोंकी बिल दी है, उन्हें आकाश में देखो ।।७।। ये सब तुम्हारे द्वारा प्राप्त हुई पीड़ाग्रोंको याद करते हुए बदला लेनेके लिये तुम्हारी बाट देख रहे हैं। जब तुम मरकर परलोकमें जाग्रोगे, तब ये ग्रत्यन्त क्रोधमें भरकर तुम्हें ग्रपने लोहेके-से सींगोंसे छेदेंगे।।।।

श्रीनारदजी द्वारा ऐसा दिग्दर्शन करानेपर राजा प्राचीनविहिकी आंखें खुलों श्रौर हिंसापूर्ण यज्ञको बन्द करके राज छोड़कर वे तपस्या करने चले गये।

इस प्रकारके ऐतिहासिक सत्यके सामने मधुपर्क, पितृकार्य श्रीर देवकार्यके बहाने पशु-हिंसाका श्रीचित्य कसे सम्भव हो सकता है ?

## 'उत्तर-रामचरित' और 'महावीरचरित'

राजा राजेन्द्रलाल मित्र श्रपनी भ्रंग्रेजीकी पुस्तक 'प्राचीन भारतमें गोमांस' के उल्लिखित संस्करणके पृष्ठ ३ पर लिखते हैं—

"The passage in which Valmiki's preparation for the reception of Vasishtha is described in Uttara-Ramcharita, is so

### क्या मधुपर्कमें गोमांस सम्भव है ? उत्तर-रामचरित और महावीरचरित

\$23

remarkable, that I need not offer any apology to quote it entire. The scene is laid in front of hermitage of Valmiki..."

अर्थात् — उत्तर-रामचरितमें वर्णित वसिष्ठके स्वागतके लिये वाल्मीकि द्वारा तैयारीके वाक्य इतने स्पष्ट हैं कि उनका पूरा उद्धरण देनेके लिये मुफ्ते कोई क्षमायाचनाको ग्रावश्यकता महसूस नहीं होती । यह कार्य वाल्मीकिके कुटीरके सामने हुग्रा है—

इसके बाद उन्होंने उत्तर-रामचरित नाटकके उस ग्रंशका ग्रंग्रेजी भावानुवाद दिया है,जिसके उद्धरएाकी आवश्यकता नहीं। मूल पर ही विचार किया जाय।

भवभूतिका उत्तर-रामचरित करुग-रसप्रधान नाटक है। उसमें भगवान् श्रीरामके द्वारा राजितलकके उपरान्त श्रीसीता महारानीके त्यागके प्रसंगका वर्णन है। कथानक केवल पौराणिक इतिहास पर ग्राधारित नहीं है, उसमें काल्पिनक वातें भी जोड़ी गयी हैं। रसवर्धन हेतु ऐतिहासिक नाटकमें भी काल्पिनक वातें जोड़ना क्षम्य माना गया है। किन्तु जो काल्पिनक वात रसभग करती हो एवं धर्मशास्त्रके विरुद्ध हो उसको क्षम्य नहीं कहा जा सकता। भगवान् श्रीराम द्वारा श्रीसीता महारानीके त्यागके प्रसंगके पूर्व गुरु विसष्टिजी, गुरुवत्नी ग्रुरुच्धती एवं भगवान् श्रीरामकी माता कौशल्याजीको नाटककार ऋष्यशृंगके आश्रममें उनके वारह वर्षीय यज्ञमें भेज देते हैं जिससे कि श्रीसीता महारानीके त्याग-कार्यमें वाधा उपस्थित कर सकनेवाले कोई गुरुजन सन्निधिमें न रहें। यह घटना किसी पुराग्य-सम्मत नहीं हैं। यहाँ तक इस कल्पनाको क्षम्य माना जा सकता है।

प्रायः बारह वर्षके बाद ये सब लौटते हैं और मार्गमें वाल्मीकि-ग्राश्रममें ठहरते हैं।

श्रीसीता महारानीके त्यागकी सूचना सब ग्रोर बिजलीकी तरह शीघ्र ही प्रकाशित हो जाती है। इसपर श्रीसीता-महारानीके पिता राजा जनक दु:खी होकर वानप्रस्थ ग्रहण करके चन्द्रदीप तपोवनमें तपस्या करनेके लिये चले जाते हैं एवं जिस समय ग्रहन्धतीजी एवं राजमाता कौशल्याजी सहित गुरु वसिष्ठजी वाल्मीकि-ग्राश्रममें पहुँचते हैं उसी समय राजा जनकजी भी तपस्यासे विरत हो ग्रपने मित्र वाल्मीकिसे मिलनेके लिये वहाँ पहुँचते हैं।

### प्राचीन भारतमें गोमांस-एक समीक्षा

858

श्रीसीता महारानी गर्भवती प्रसवासन्ना हैं। उनकी सास राजमाता श्रीकौशल्याजीको उनकी पुत्रवधू राजरानी श्रीसीता महारानीका इस स्रवस्थामें छोड़कर दूर देश प्रस्थान कराना ग्रौर उन्हें वहाँ प्रायः बारह वर्षों तक रखना, पौत्र-जन्मोत्सव-सम्भाव्य-सुखसे वंचित करना, सीताजीके त्याग की सूचना जानकर भी ऋष्यश्रुंगके यज्ञमें बारह वर्षोंतक सबको वहीं टिकाये रखना—इस कल्पनाके औचित्यपर पाठक स्वयं विचार करें। आजकलके पाश्चात्य प्रभावसे आक्रान्त समाजमें भी ऐसी बात होनो सम्भव नहीं लगती।

इतना ही नहीं, इस दुःखपूर्ण शोकावस्थामें वाल्मीकि आश्रममें वाल्मीकिऋषि द्वारा गोमांसयुक्त मधुपर्कसे स्वागत कराना तथा राजा जनक द्वारा
गोमांसयुक्त मधुपर्क ग्रस्वोकार कराना ग्रौर महिष विसष्ठ द्वारा गोमांसयुक्त
मधुपर्क स्वीकार कराना—क्या करुण-रस-वर्धनकी वस्तु कही जा सकती है
जिस रसकी प्रधानताको लेकर नाटकको रचना हुई है? यदि इस प्रकारकी
रचना भवभूतिकी है तो इसमें उनकी कोई प्रतिभा नहीं है ग्रौर यदि
किसीने वादमें जोड़ा है तो अक्षम्य ग्रौर घोर अपराध किया है। राजा
रामचन्द्र वहाँ पधारते हैं तो उनका मधुपर्क द्वारा स्वागत नहीं कराया गया
है, यह ध्यान देनेकी बात है।

दु:ख-शोककी स्रवस्थामें मांस-मिदरा स्राजकल भी पाश्चात्य प्रभावसे स्राक्रान्त लोगोंको भी स्रच्छी नहीं लगेगी, फिर महर्षि वसिष्ठको श्रीसीता महारानोके त्यागजनित दु:खपूर्ण करुण प्रसंगमें, जनकजीकी उपस्थित उसी स्राश्रममें उस समय होते हुए भी, गोमांसयुक्त मधुवर्क स्वीकार कराना कितनी निकृष्ट कल्पना है—इसका पाठक स्वयं स्रमुमान करें।

रघुकुलके गुरु महिषि विसिष्ठजीकी निन्दिनी गायकी सेवामें भगवान् श्रीरामके पूर्वज महाराजा दिलीप उस गायपर सिहके ग्राक्रमण करनेपर उस सिहको ग्रपना शरीर अर्पण करनेको तत्पर थे। ऐसे रघुवंशके कुलगुरु महिष विसिष्ठ गोमांस ग्रहण करें और वह भी दु:ख-शोकके समय—यह एक बहुत ही ग्रसम्भाव्य कल्पना है।

क्योंकि घटना प्रसंग किल्पत है, ग्रतः वाल्मीकि ऋषि द्वारा विसष्ठ ऋषिको गोमांसयुक्त मधुपर्क दिलाना और उनके द्वारा स्वीकार कराना भी किल्पत ग्रौर मिथ्या है। ग्रतः यह सिद्ध हुग्रा कि उत्तर-रामचरित नाटकमें

### क्या मधुपर्कंमें गोमांस सम्भव है ? उत्तर रामचरित श्रीर महावीरचरित

१२५

चतुर्थ ग्रंकमें गोहत्या करवाकर ताजा गोमांसयुक्त मधुपर्ककी बात किल्पत ग्रोर मिथ्या है, ऐतिहासिक सत्य नहीं है।

उपर्युक्त प्रसङ्ग विष्कम्भकमें वाल्मीकिके दो शिष्यों द्वारा प्रहसनके रूपमें उपस्थित किया जाता है। प्रहसनकी यथार्थताका क्या मूल्य होता है, इसका पाठक स्वयं ग्रनुमान कर लें। इसके अतिरिक्त मधुपर्ककी वस्तुओं में ग्रौर मधुपर्क-विधिमें मांसकी गुंजाइश हो नहीं, इसका विवेचन पहले ही हो चुका है।

इसके बाद राजा राजेन्द्रलाल मित्र भवभूतिके 'महावीरचरितम्' से मधुपर्कमें गोमांस सिद्ध करनेका प्रयत्न करते हैं। ग्रव उसपर भी विचार किया जाय।

भैवभूतिका 'महावीरचित्तम्' नाटक भगवान् श्रीरामचन्द्रका पूर्व-चिरित्र है। विश्वामित्र ऋषि यज्ञ-रक्षाके लिये राम ग्रौर लक्ष्मगाको मांगकर ले गये—इसके बादसे नाटकका कथानक ग्रारम्भ होता है ग्रौर राम-वनवास, रावण ग्रादि राक्षसोंका वध ग्रौर ग्रयोध्या-प्रत्यागमन होकर भगवान् रामको राजितलक हुग्रा—यहां तकका वर्णन है। कथानक पुराणोंमें विणित इतिहासके ग्रनुसार नहीं लिया गया। नाटककार प्रायः इस दिशामें स्वतन्त्रता बरतते देखे जाते हैं। फलतः किसी भी नाटकको इतिहासके रूपमें मान्यता नहीं दी जा सकती। संक्षेपमें नाटकका कथानक इस प्रकार है—

विश्वामित्र ऋषिके आश्रममें यज्ञ-रक्षाके लिये जब राम ग्रौर लक्ष्मण पहुँचते हैं, तभी राजा जनकके भाई कुशध्वज भी ग्रामन्त्रित राजा जनकके प्रतिनिधि रूपमें सीता ग्रौर उमिलाके साथ वहाँ पहुँचते हैं। रामको देखकर उनके मनमें रामके प्रति इतना ग्राकर्षण होता है कि वे सोचने लगते हैं कि यदि धनुष भङ्गकी शर्त न लगायी गयी होती तो राम ग्रौर सीताका विवाह हो जाता। वहीं पर रावणकी ग्रोरसे उसका पुरोहित सर्वमाय नामक राक्षस रावणकी ग्रोरसे सीताके विवाह कर देनेका प्रस्ताव लेकर पहुँचता है, जिस प्रस्तावपर टालमटोल कर दी जाती है। उसोके सामने ताड़का राक्षसी यज्ञमें विघ्न करने ग्राती है। सबके देखते-देखते राम उसका वध कर डालते हैं। विश्वामित्र द्वारा राम ग्रौर लक्ष्मग्यको दिव्य-ग्रस्त्र दिये जाते हैं। शिव-धनुको विश्वामित्र ग्रपने ध्यान बलसे आकर्षित कर वहाँ

मंगवा लेते हैं अप्रैर राम द्वारा उसका भङ्ग करवाते है स्रौर उसो समय राम-सीता, लक्ष्मण-उर्मिला, भरत-माण्डवी स्रौर शत्रूष्टन-श्रुतकीर्तिके विवाहकी बात पक्की हो जाती है। इसके बाद सुबाहु स्रौर मारीच वहाँ उत्पात करने आते हैं स्रौर उनका भी वध हो जाता है।

सर्वमाय राक्षस लङ्कामें जाकर इन सबको सूचना देता है। उस समय रावणको जामदग्न्य परश्ररामजीका पत्र मिलता है कि दण्डकारण्यसे राक्षस लोग बहत उत्पात करते हैं, उसको बन्द किया जाय। रामके द्वारा परशुरामजीके गुरु शिवजीका धनुष-भङ्ग होनेपर रावण परश्रामजीको उकसानेकी योजना बनाकर उनको रामसे भिड़ानेके लिये जनकपूर भेजता है, वहाँ विवाहकी तैयारियाँ हो रही हैं। परशुरामजी वहाँ पहुँचकर रामका रूप देखकर चिकत से हो जाते हैं, किंतु क्रोध वनाये रहते हैं। राजा जनक ग्राकर कहते कि यदि ये ग्रतिथिके रूपमें ग्राये हैं तो इन्हें श्रोत्रियोचित मधुपर्क दिया जाय ग्रौर यदि शत्रु-रूपमें ग्राये हों तो इनका सामना किया जाय। कुछ वीरोचित वाक्योंके बाद राम तो विवाह-विधिके लिये भीतर चले जाते हैं। परश्रामजीको शान्त करनेका वसिष्ठ ग्रौर विश्वामित्र प्रयत्न करते हैं। उनका क्रोध शान्त न होनेपर दशरथ भी उनका सामना करनेको तैयार होते हैं। विवाह-कार्य पूर्ण होनेपर राम वहाँ पहुंचते हैं और परश्रामजीका पराभव हो जाता है तथा वे चले जाते हैं।

श्रयोध्यासे कैकेयोको दासी मन्यरा कैकेयीका एक पत्र लेकर रामके पास पहुँचती है, जिसमें कंकेयीने ग्रपने दो वरदानोंका उल्लेख करते हुए श्रपना मन्तव्य प्रस्तुत किया है कि राम १४ वर्षके लिये वनको जायँ, साथमें केवल सीता श्रौर लक्ष्मण जायँ तथा भरतको राजगद्दी दी जाय।

भगवान् राम पिता दशरथके पास जाकर वन जानेकी स्राज्ञा मांगते हैं और जनकपुरसे ही कैकेयीके भाई युधाजित् स्रौर स्रन्य सब परिजनोंको कलपाते हुए सीता और लक्ष्मणके साथ वन चले जाते हैं। भरतके स्राग्रहपर राम शरभङ्गकी भेजी हुई स्रपनी स्वर्ण-पादुका उनके लिये छोड़ जाते हैं स्रौर भरत उन पादुकास्रोंको

### क्या मधुपर्कमें गोमांस सम्भव है ? उत्तर-रामचरित और महावीरचरित

\$50

निन्दग्राममें स्थापित कर रामकी आज्ञाका पालन करते हैं। लक्ष्मण भीर सीता सिहत राम रास्तेमें विराध म्रादि राक्षसोंका वध करते हुए चित्रक्षट होते हुए तथा ऋषियोंसे मिलते हुए दण्डकारण्य पहुँचते हैं। यहाँ उनके हाथों खर, दूषण, त्रिश्चरा म्रादि १४ हजार राक्षसोंका वध होता है। सीताहरणपर जटायु रावणसे युद्ध करते हुए घायल हो जाता है। भरतके निन्दग्राम जानेसे लेकर यहाँ तक विष्कम्भक है।

जटायुसे श्रीराम मिलते हैं, जटायु सीता-हरणकी सूचना देकर प्राण छोड़ देता है। इसके बाद विभीषण्का शरणागित-पत्र लेकर श्रमणा श्राती है श्रीर विभीषण श्रात्म-समर्पण करता है। पश्चात् बालीसे मिलना होता है, बाली युद्धकी चुनौती देता है श्रीर श्रीरामके हाथसे मारा जाता है तथा श्रपना राज्य श्रादि सुग्रीवके लिये छोड़ देता है।

लङ्का जलने लगती है। त्रिजटा आकर माल्यवान्को अक्षयकुमारके मरनेको सूचना देती है। कुम्भकर्एको जगाया जाता है। युद्ध होता है, लक्ष्मण मूर्छित होते हैं। संजीवनी बूटो ग्राती है, लक्ष्मण ठीक हो जाते हैं। मेघनाद, कुम्भकरण ग्रादिका वध हो जाता है। सोताकी अग्नि-परीक्षा होती है। यह सब वार्तालापमें विष्कम्भक के रूपमें बताया जाता है। विमानसे श्रीरामचन्द्र, सीता, लक्ष्मण ग्रादि ग्रयोध्या आते हैं। सबसे मिलन होता है ग्रौर राजतिलक हो जाता है।

इस कथासे अनुमान लगाया जा सकता है कि यह पौराणिक इतिहाससे कितनी भिन्न और कल्पित है।

राजा राजेन्द्रलाल मित्र 'महावीरचरित' में गोमांसका उल्लेख करते हुए ग्रपनी उसी पुस्तकके उल्लिखित संस्करणमें पृष्ठ ५ पर लिखते हैं—

"Vasishtha, in his turn, likewise, slaughtered the 'fatted calf' when entertaining Viswamitra, Janaka, Satananda, Jamdagnya and other sages and friends, and in Mahaviracharita, when pacifying Jamadagnya, tempted him by saying, "The heifer is ready for sacrifice, and the food is cooked in ghee. Thou art a learned man, come to the house of the learned; favour us (by joining in the entertainment)."

ग्रथित्—बदलेमें उसी तरह विसष्ठ भी विश्वािमत्र, जनक, शतानन्द, जामदग्न्य (परशुराम) और ग्रन्य ऋषियों एवं मित्रोंके ग्रातिथ्य-सत्कारमें मोटे-ताजे गोवत्सको कत्ल किया ग्रौर जामदग्न्यको शान्त करते हुए यह कहकर प्रलोभन दिया—''बिछ्या बिलदानमें दिये जानेके लिये तैयार है ग्रौर भोजन घीमें पकाया हुग्रा है, ग्राप स्वयं विद्वान् हैं, विद्वान्के गृहमें पधारे हैं (भोजनमें सिम्मिलित होकर) हमको ग्रनुगृहीत करें।''

इसके प्रमाणमें 'महावीरचरितम्' नाटक ग्रंक ३ का मूल २लोक वहींपर पाद-टिप्पणीमें इस प्रकार दिया है—

> संज्ञाप्यते वत्सतरी सापिष्यत्नञ्च पच्यते । श्रोत्रियः श्रोत्रियगृहानागतोऽसि जुषस्व नः ॥

यहाँपर संज्ञाण्यते वत्सतरी' का अर्थ 'the heifer is ready for sacrifice' अर्थात् 'बिछ्या बिलदानके लिये तैयार है' किया गया लगता है। राजा राजेन्द्रलाल मित्रने कहा है—विशष्टिन विश्वामित्र, जनक, शतानन्द, जामदग्न्य एवं ग्रन्य ऋषियों और मित्रोंके ग्रातिथ्य-सत्कारमें मोटा-ताजा बछड़ा कत्ल किया। इस मूल श्लोकमें मोटा-ताजा बछड़ा कत्ल किया कहीं भो नहीं है ग्रौर 'महात्रोरवरित्रम्' में इस श्लोकके ग्रागे-पीछे ऐसी बात कहीं मिलती नहीं। पता नहीं, राजा राजेन्द्रलाल मित्र कहाँसे 'मोटा-ताजा बछड़ा कत्ल किया' खोज लाये। बादमें वे कहते हैं 'बछिया कत्लके लिये तैयार है'। ये दोनों बातें एक दूसरेके विषद्ध पड़ती हैं। इसी प्रकार ऐसे लोग जैसी-तैसी अनर्गल बातें कहकर सीधे-सादे लोगोंको भ्रममें डाल देते हैं।

उपर्युक्त प्रसङ्क्षमें मूल ग्रन्थमें विशविष्ठ और विश्वामित्र परशुरामजीके कोधादेशको शान्त करनेकी चेष्टामें कहते हैं—

इष्टापूर्त्तविधेः सपत्नशमनात्प्रेयान्मघोनः सखा

येन द्यौरिव विज्ञिगा वसुमती वीरेण राजन्वती । यस्यैते वयमग्रतः किमपरं वंशस्च वैवस्वतः

सोऽयं त्वां तनयप्रियः परिणतो राजा शमं याचते ।। तद्विरम शुष्ककलहात् इदं चास्तु ।

श्रर्थात् — यज्ञानुष्ठान तथा देवालय ग्रादिके निर्माण और शत्रुग्नोंका विनाश करके जो इन्द्रके मित्र बने हैं, जो स्वर्गमें देवराजके समान

#### -१२६ क-

### (पृष्ठ १२६ पर पंक्ति ६ ग्रौर १० के बीचमें निम्नलिखित मैटर जोड़ दिया जाय)

उपर्युक्त 'संज्ञप्यते वत्सतरी' इत्यादि (महावीरचरित ३.२) वाक्य उपर्युक्त 'इष्टापूर्त्तविधेः' इत्यादि (महावीरचरित ३.१) के ठीक पश्चात् हैं जो वसिष्ठ ग्रौर विश्व।िमत्र जामदग्न्य परशुरामके प्रति कह रहे हैं। इसके पूर्व राजा जनक कह चुके हैं—

''ऋषिरयमतिथिइचेद्विष्टरः पाद्यमर्घ्यं तदनु च मधुपर्कः कल्प्यतां श्रोत्रियाय । (२.४४)

अर्थात्—यदि ये ऋषि हैं तो इन्हें ग्रासन, पाद्य, ग्रघ्यं देकर श्रोत्रियोचित मधुपर्क द्वारा इनका स्वागत-सत्कार हिया जाय।" 'संज्ञप्यते वत्सतरी' ग्रादि (३.२) वाक्य इसी मधुपर्क द्वारा सत्कारके सम्बन्धमें ही हैं। मधुपर्कमें किसी प्रकारके पशुमांसकी गुंजाइश नहीं है—यह पूर्व तर्कोंसे प्रमाणित हो चुका है। मधुपकंमें गोदानके शास्त्रीय विधानका उल्लेख भी हो चुका है। इसमें 'संज्ञप्यते' शब्द ऐसा है जिसका अर्थ हिंसापरक भी है और अहिंसापरक भी। मोनियर-विलियम्सके संस्कृत-ग्रंग्रेजी कोशमें 'संज्ञपन' का ग्रयं पृष्ठ ११३३ पर कालम ३ में इस प्रकार दिया है—

causing agreement or harmony; killing a sacrificial animal.
ग्रथीत्—मेल-मिलाप, ऐक्यकरण; यज्ञके बलि पशुकी हत्या करना।
ग्रथवीवेद ६.७४.१-२ में 'संज्ञपन' का ग्रथं 'मेल-मिलाप' आया है—

सं वः पृच्यन्तां तन्वः सं मनांसि समु वता । सं वोऽयं ब्रह्मग्गस्पतिर्भगः सं वो ग्रजीगमत् ॥१॥ संज्ञपनं वो मनसोऽथो संज्ञपनं हृदः । ग्रथो भगस्य यच्छ्रान्तं तेन संज्ञपयामि वः ॥२॥

इसका ग्रर्थ Ralph T. H. Griffith ने वाराणसीसे मास्टर खेलारीलाल एण्ड सन्स द्वारा प्रकाशित ग्रथवंवेद सन् १६६२ ई॰ के तृतीय संस्करणके पृष्ठ २८५ पर इस प्रकार किया है—

(सं पृच्यन्ताम्) Close gathered be (व:) your (तन्व:) bodies:
 (सं) be (मनांसि) your minds (त्रता) and vows (सम्+उ) in unison.

#### -१२६ ख-

(म्रयं) Here present (ब्रह्मणस्पति:) Brahmanaspati (भग:) and Bhaga (सं म्रजीगमत्) have assembled (व:) you.

२ (संज्ञपनं) Let there be union (व:) of your (मनसः) minds, (संज्ञपनं) let there be union (हृदः) of your hearts:

(यत्) All that (श्रान्त:) is troubled (व:) in your (भगस्य) lot (तेन) with this (संज्ञपयामि) I mend and harmonize.

इसका हिन्दी भावार्थ इस प्रकार होगा-

"तुम लोगोंके शरीर साथ-साथ रहें ग्रर्थात् तुम लोग हिल-मिलकर रहो ; तुम लोगोंके मनोंमें तथा व्रतोंमें (संकल्पोंमें) ऐवय हो ; यहाँपर उपस्थित ब्रह्मणस्पति ग्रौर भग तुम लोगोंको मिलाये हुए हैं।"

"तुम लोगोंके मन ग्रौर हृदयका (संज्ञपनं) ऐक्य (एकता) बना रहे ; तुम लोगोंके भाग्यमें कोई ग्रशान्ति हो, उसको मैं (संज्ञपयामि) शान्त करता हूँ।"

'संज्ञप्यते वत्सतरी' का ग्रर्थ मांसलोलुप लोग 'बछड़ी मरवाकर उसके मांस खिलाने' का करते हैं। यहाँपर कोई गोमेध जैसे किसी यज्ञानुष्ठानका उल्लेख नहीं है जिससे कि मोनियर-विलियम्सके कोशके अनुसार यज्ञीय पशुकी हत्याका अर्थ बननेकी सम्भावना हो। शास्त्रोंमें मधुपकंके साथ गौ-समपंणका विधान है। ऐतिहासिक उदाहरण भी ऐसे मिलते हैं जिनमें मधुपकंके साथ गौ-समपंण किये गये हैं। एक भी ऐसा ऐतिहासिक उदाहरण नहीं है जिसमें कि मधुपकंके साथ गोमांस दिया गया हो एवं ग्राज भी मांसभक्षी भी मधुपकंके साथ गोमांस दिया गया हो एवं ग्राज भी मांसभक्षी भी मधुपकंके साथ तत्काल हत्या किये गये पशुका कच्चा मांस लेनेको तैयार नहीं होगा। इसलिये हमारे मतसे इसका ग्रर्थ होगा—'बछड़ीको परशुरामजीसे मिलाकर ग्रर्थात् उसको समपंण करके—दान करके मधुपकंमें गोदानकी विधि पूरी करना।' पूरे इलोकका ग्रर्थ होगा—

(वत्सतरी) यह बिछया (संज्ञप्यते) ग्रापको समिपत है, (सिपिषि) घीमें (ग्रन्नं) पक्वान्न (पच्यते) पक रहा है। (श्रोत्रिय) हे श्रोत्रिय ! (श्रोत्रिय गृहान्) ग्राप श्रोत्रियके घर (ग्रागतोऽसि) पधारे हैं, (ग्रातिथ्य स्वीकार करके)(नः) हमको (ज्ञुषस्व) ग्रनुगृहीत की जिये।

पाठक स्वयं निर्णाय करें कि विषयके पूर्वापर प्रसंगके अनुसार कौन-सा ग्रर्थ ठीक होगा।

### क्या मधुपर्कमें गोमांस सम्भव है ? श्रतिथि-सत्कारमें महोत्तं, महाजं श्रथवा वेहतं

328

पृथ्वीमें ग्रच्छे शासक गिने जाते हैं, हम जिनके साथ हैं जो सूर्यवंशजात हैं वे बूढ़े राजा दशरथ पुत्रप्रेमके वशीभूत होकर ग्रापसे शान्तिकी याचना करते हैं। इसलिये छोड़िये इस वृथा युद्धको।

राजा राजेन्द्रलाल मित्रने ग्रपनी मान्यताके प्रमाणमें अपनी पुस्तककी पाद-टिप्पणीमें जिस क्लोकका उद्धरण दिया है, उसका वर्णन ऊपर हो चुका। विस्वित विक्वामित्र, जनक, शतानन्द, जामदग्न्य एवं अन्य ऋषियोंके ग्रौर मित्रोंके लिये मोटा-ताजा बछड़ा कत्ल किया, ऐसा वर्णन 'महावीरचरितम्' नाटकमें कहींपर भी नहीं है और न विसष्ठद्वारा इन सबके ग्रातिथ्य-सत्कारका कहींपर भी उल्लेख है।

कितने ग्राश्चर्यकी बात है कि राजा राजेन्द्रलाल मित्र सरीखे पढ़े-लिखे विद्वान् कहे जाने वाले लोग इस प्रकार कित्पत वर्णनके ग्राधारपर और उसको भी तोड़-मरोड़कर सीधे-सादे देशवासियोंको, जो उनकी विद्वत्ताको मान्यता देते हैं, इस प्रकार भ्रमित करते हैं! इसमें क्या कारण थे—यह बात प्रस्तावनामें बहुत स्पष्ट रूपसे प्रमाणित कर दी गयी है। ग्राज भी भारत सरकारके द्वारा 'प्राचीन भारतमें गोमांसका सेवन प्रचलित था' इस बातका भ्रमात्मक प्रचार करनेके लिये उनकी इस पुस्तकको बड़े गौरवके साथ उद्धृत किया जाता है।

### म्रतिथि-सत्कारमें महोक्षं, महाजं म्रथवा वेहतं

पाण्डुरंग वामन कारो महोदय ग्रपने ग्रंग्रेजी भाषाके ग्रन्थ 'धर्मशास्त्रका इतिहास', खण्ड २, भाग २ नृयज्ञ या मनुष्य-यज्ञके प्रकररामें पृष्ठ ७५०, पंक्ति ५-१७ में लिखते हैं—

"Yajnavalkya-Smriti I.109 also says that a big ox or a goat was to be kept apart for a guest learned in Veda. But the commentary Mitakshara on Yajnavalkya-Smriti and other medieval writers to whom flesh-eating was an anathema and an unspeakable sin for a Brahman remark that an ox or a goat was to be understood as set apart for the guest to flatter him (with the words 'this ox is yours') just as one says in humility 'all this house is yours' and that the ox or goat was not meant to be given in gift or to be killed since it

would be impossible to find an ox each time a shrotriya guest comes."

ग्रथात् - याज्ञवल्क्य स्मृति १.१०६ में भी यही कथन है कि एक बड़ा साँड या बकरा श्रोत्रिय अतिथिके लिये ग्रलग रक्खा जाता था। किन्तु याज्ञवल्क्य स्मृति पर मिताक्षरा नामक टीकाके रचियता एवं दूसरे मध्यकालीन टीकाकार—जो ब्राह्मणके लिये मांस-भक्षण घृणित एवं ग्रकथनीय पाप मानते थे—कहते हैं कि साँड़ या बकरा अतिथिके लिये उसको प्रसन्न करने मात्रके लिये रक्खा जाता था (यह कहकर कि यह ग्रापका ही है, जिस तरह कि विनय ग्रीर नम्रतामें यह कहनेकी प्रथा है कि यह घर ग्रापका ही है, इत्यादि, ग्रीर साँड़ या बकरा दानमें—भेंटमें देनेके लिये या वध करनेके लिये नहीं होता था, क्योंकि प्रत्येक श्रोत्रिय ग्रातिथिके ग्रागमनपर एक साँड़ या बकरा (दिया जाय तो) मिलना ग्रसम्भव हो जायगा।

उपर्युक्त वाक्यसे सम्बन्धित याज्ञवल्क्य स्मृतिका श्लोक भ्राचार-श्रध्यायके गृहस्थधर्म प्रकरणमें है जिसका पाठ इस प्रकार है—

महोक्षं वा महाजं वा श्रोत्रियायोपकल्पयेत्। सित्क्रियाऽन्वासनं स्वादु भोजनं सूनृतं वचः॥ (याज्ञवल्क्य स्मृति १.१०६)

इसका सीघा-सादा अर्थ इस प्रकार है -

श्रोत्रिय (वेदज्ञ) स्रतिथिके लिये बड़ा साँड़ या बड़ा बकरा उसके सन्मुख उपस्थित करे। (उसके उपरान्त) उसका (पाद्यार्घ्यं, स्राचमन, स्रासन स्रादिसे) स्वागत करे, (उसके वेठ जानेपर) निकट बैठे, स्वादिष्ट भोजन करावे स्रौर प्रिय वचन बोले।

उपयुक्त श्लोकमें महोक्ष या महाज अर्पणके लिये संस्कृतका मूल शब्द 'उपकल्पयेत्' है, जो 'उप' प्रत्यय पूर्वक 'क्लृप' धातुसे बना है। 'उपक्लृप्' का अर्थ मोनियर विलियम संस्कृत-अंग्रेजी कोशमें पृष्ठ १६५ कालम ३ में इस प्रकार है —

To be fit for; to be ready at hand; to become, to serve as; to lead to; to take the shape or form of; to become; to be; to prepare; to make ready; to equip; to procure; to allot; to bring near; to fetch; to assign; to put or set up; to turn towards; to arrange; to import; to communicate; to assure; to suppose.

## क्या मधूपर्कमें गोमांस सम्भव है ? श्रितिथ-सत्कारमें महोन्नं, महानं श्रधवा वेहतं

१३१

इसमें हिंसाकी कहीं गन्य भी नहीं है। अतः यह तो स्पष्ट हैं कि अतिथिके लिये इनका वध करके उसको मांस खिलानेकी कोई बात नहीं है। श्रोतियके ग्रितिथि-सत्कारमें ग्रध्यं ग्रथीत् मधुपर्क दिया जाता है, इसका वर्णन इसके ग्रागेके ११० संख्याके क्लोकमें है। उसके ग्रागे पीछे कहीं भी मधुपर्क-ग्रध्यंके साथ देनेका या किसी जीवकी हिंसाका उल्लेख नहीं है।

इससे भी यह सिद्ध होता है कि मधुपर्कमें किसी भी प्रकारके पशु-शरीरके मांसकी आवश्यकता नहीं है।

टीकाकारोंका मत है कि महोक्ष (बड़ा साँड़) या महाज (बड़ा बकरा) मिति शिक्के सम्मुख उपस्थित किया जाता है जो एक शिष्टाचारका म्रंग मात्र है जिसमें मितिथिके लिये इस प्रकारके विनययुक्त शब्दोंका प्रयोग होता है कि यह घर-द्वार ग्रापका ही है, यह वस्तु ग्रापकी ही है, इत्यादि इत्यादि, वास्तवमें उस मितिथिको देनेके लिये नहीं है, क्योंकि नये-नये श्रोत्रिय मितिथि यदा-कदा ग्राते ही रहते हैं, यदि सबको एक बड़ा साँड़ या बड़ा बकरा दिया जाय तो इतने बड़े साँड़ या बकरे कहांसे ग्रायेंगे ? मूल पाठमें ऐसा कोई भाव नहीं है। पर यह ग्रासानीसे समभा जा सकता है कि जिसके पास अतिथिको देनेके लिये साधन हो, उसको तो विधानके ग्रनुसार बतायी हुई वस्तु देनी ही चाहिये ग्रौर जिसके पास साधन न हों उसके लिये न तो उस वस्तुके उपस्थित करनेकी आवश्यकता है और न देनेकी। रही बात शिष्टाचार विनययुक्त शब्दोंकी, यह तो आज भी प्रचलित है। जब कोई मितिथ ग्राता है, उसके सम्मुख ऐसी ही विनययुक्त भाषाका प्रयोग किया जाता है कि यह घर आपका ही है, यहाँ सुख-स्वच्छन्दतासे रहिये, ग्रमुक वस्तु ग्रापकी हो है, उसका उपभोग कीजिये इत्यादि इत्यादि।

महोक्ष या महाजके समर्पणमें सार्थकता है या नहीं, इसके विषयमें श्रागे विचार किया जायगा

त्रितिथिको महोक्ष और महाज ग्रर्पण करनेकी बात शतपथ-ब्राह्मण ग्रादिमें ग्राती है। उसपर भी विचार किया जाय।

पाण्डुरंग वामन कार्गो महोदय ग्रपने ग्रंग्रेजी भाषाके ग्रन्थ 'धर्मशास्त्रका इतिहास', खण्ड २, भाग २ ग्रध्याय २१, नृयज्ञ या मनुष्य-यज्ञके प्रकररणमें पृष्ठ ७५०, पंक्ति ४-६ में लिखते हैं—

"The Satapatha shows that an ox or a goat was cooked for a guest, either a king or a Brahman (III. 4.1.2)"

### प्राचीन भारतमें गोमांस-एक समीक्षा

ग्रर्थात्—शतपथ-ब्राह्मगा ३.४.१.२ में वर्णन है कि राजा या ब्राह्मगा ग्रतिथिके लिये साँड या वकरेको राँघा जाता था ,

मूल पाठ इस प्रकार है-

ग्रथ यस्मादातिथ्यं नाम । ग्रतिथिर्वा एष एतस्यागच्छिति यत्सोमः क्रीतस्तस्मा एतद्यथा राज्ञे वा ब्राह्मगाय वा महोक्षं वा महाजं वा पचेत्तदह मानुषं हिवर्देवानामेवमस्मा एतदातिथ्यं करोति ॥

इसमें भ्रनेक लोग 'पचेत्' का भ्रर्थ 'ग्रग्निपर पकानेका' करते है । सीधा-सादा भ्रर्थ 'पचेत्' का 'भ्रग्निपर पकाना' हो होता है । यहाँ क्या भ्रर्थ भ्रभीष्ट है—इसपर विचार करना है ।

महाभारत, शान्तिपर्व, ग्रध्याय ३१८ के वर्णनके ग्रनुसार शतपथ-ब्राह्मण् याज्ञवल्क्यको सूर्यसे प्राप्त हुग्रा था। उसी ज्ञानके ग्राधारपर उनके द्वारा याज्ञवल्क्य स्मृति बनायी गयी होगी। ग्रतः ग्रतिथिका महोक्ष या महाज द्वारा सत्कार करनेकी बातमें दोनोंका सामञ्जस्य होना चाहिये। पं० श्रीदीनानाथ शर्मा शास्त्रीने ग्रपने ग्रन्थ श्रीसनातनधर्मालोक, छठे सुमनके पृष्ठ ३३३-३३४ एवं पृष्ठ ३४२-३४३ पर इसका विवेचन करते हुए लिखा है—

शतपथ-ब्राह्मण्में 'पचेत्' का ग्रर्थं 'पकावे' नहीं है, किन्तु 'व्यक्तीकुर्यात्' (प्रकट करे) ग्रर्थं है। इसमें 'पिंच व्यक्तीकरण्' (भ्वा॰से॰ग्रा॰) यह घातु है। बालमनोरमा टीकामें (श्रीगुरुप्रसाद शास्त्री द्वारा एवं चौखम्वा संस्कृत सीरिज ग्रोफिस द्वारा वाराण्यसीमें प्रकाशित संस्करणोंमें यहाँ लिखा है—'पचेत्येके' ग्रर्थात्—इस 'पिंच' धातुका पाठभेद 'पच्' भी हैं। तब उसका ग्रर्थं 'व्यक्तीकरण्' (प्रकट करना) है। इस ग्रथंमें शतपथ-ब्राह्मण् ग्रौर याज्ञवल्क्य स्मृतिकी एकार्थता सिद्ध हो गयी। ग्रब प्रश्न यह है कि उक्त धातु ग्रात्मनेपदी है, पर शतपथके प्रयोगमें ग्रात्मनेपद नहीं, इसपर यह जानना चाहिये कि ग्रात्मनेपद तो ग्रनुदात्ते त्वलक्षरण्मात्मनेपदमित्यम्' इस परिभाषासे ग्रन्तिय है। ग्रतः शतपथके वाक्यमें वह नहीं हुग्रा, ग्रथवा ग्रार्थतासे व्यत्ययवश नहीं हुग्रा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

१३२

# क्या मधुपर्कमें गोमांस सम्भव है ? अतिथि-सत्कारमें महोजं, महाजं श्रथना बेहतं

१३३

हमारा किया हुग्रा यह ग्रथं समूल भी है। उक्षाण पृश्विनमपचन्त' (ऋ०सं० १.१६४.४३) इस मन्त्रमें 'पच्' धातुके लिये श्रीसायणाचार्यने लिखा है—''उक्षाणं-फलस्य सेक्तारं सोमम् ऋित्वजः ग्रपचन्त' पचधात्वर्थानादरेण तिङ्ग्रत्ययः करोत्यर्थः। स च क्रियासामान्यवचनः। ग्रत ग्रीचित्यात् सम्पादितवन्तः इत्यर्थः।'' ग्रथीत्—यहाँ 'पच्' धातु का ग्रर्थ 'सम्पन्न करना' है। इस प्रकार दिङ्नागकी 'कुन्दमाला' नाटिकामें भी 'इक्ष्वाकूणां च सर्वेषां क्रियाः पुंसवनादिकाः। ग्रस्माभिरेव पच्यन्ते' (१.३१) यहाँ भी 'पच्' धातुका ग्रथं उपकत्पन वा सम्पादन ही है। इसी प्रकार 'नमो मत्स्यकूर्मादिनानास्वरूषे' मखादिक्रियापाककर्नेऽघहन्त्रे' इस प्रसिद्ध पुराण-प्रोक्त देव-स्तोत्रमें भी 'पाककर्ने' का 'उपकल्पक' वा 'साधक' ही ग्रथं है। तब याज्ञवल्क्यप्रोक्त शतपथके वचनमें भी 'पच्' धातुका सम्पादन, उपकल्प इत्यादि ग्रथं है, 'पकाना' ग्रर्थं नहीं। श्रीयाज्ञवल्क्यको वही ग्रर्थं इसमें इष्ट है, जैसा कि उन्होंने ग्रपनी 'याज्ञवल्क्यस्मृति' में सूचित किया है।

\*श्रीसायणचार्यजीकी 'माधवीया घातुवृत्ति' (प्राच्यभारती प्रकाशन, वाराणसी, १६६४) के भ्वादिगण (१.८६-८७) में १०७ संख्याकी पिच व्यक्तीकरणे घातुके विवरणके ग्रन्तमें लिखा है—

पच इति दुर्गः, तथा वर्धमानोऽपि । यदाह—ग्रनिड्विधौ पच्यादिसूत्रे डुपचष् पाके, पच व्यक्तीकरसे इति । सम्मतायां तु वर्धमानवद् उक्त्वा 'अन्यैस्त्वयमिदित् पठ्यते' इत्युक्तम् । 'तिङौ गोत्रादीनि' इत्यत्र पचित गोत्रमित्युपादाय' 'पच व्यक्तीकरसे' इति पठन् न्यासकारः परस्मैपदिनं च मन्यते ।'

ग्रर्थात् — दुर्गने इस ''पिच ब्यक्तीकरणे' घातुको 'पच ब्यक्तीकरणे' माना है । वर्षमानने भी 'पच' ही माना है । सम्मता नामक पुस्तकमें तो वर्तमानकी तरह 'पच' घातु कहकर दूसरे इसे 'पिच' मानते हैं —यह कहा है ।

'तिङो गोत्रादीनि' पचित गोत्रम् में न्यासकारने पच व्यक्तीकरणे घातु मानी है श्रोर उसे परस्मैपदी माना है। शतपथमें परस्मैपद होनेसे ठीक संगति लग जाती है। प्रथवा 'उक्षा' का ग्रर्थ 'सोम' भी होता है, जैसा कि—'सोम उक्षाऽभवत्' (ऋग्वेद सं० के सायग्गभाष्यमें (१.१६४.४३) उसीका पचन-सम्पादन यहाँ इष्ट है; यह संगत भी है। वस्तुतः 'महोक्षं पचेत्' इस ब्राह्मग्राका मूल 'उक्षाग्रं पृहिनमपचन्त' (ऋ० १.१६४.४३) यह मन्त्र मालूम होता है; यहाँ सायग्राने उसका ग्रर्थ सोम-सम्पादनका किया है; ग्रतः ब्राह्मग्रामें भी वही संगत प्रतीत होताहै कि—ग्रतिथिके लिये सोम-सम्पादन करना। ग्रथवा 'उक्षा' ऋषभकन्द भी होता है। इनके नाम सभी वैलवाचक होते हैं। मांसल होनेसे दोर्घायु बढ़ानेवाली ग्रौषिथोंमें 'उक्षा' वनस्पति भी है (राजनिघण्ड व० ५) वहाँ उसके ऋषभः, उक्षा, गौः, वृषभः,—यह पर्यायवाचक शब्द भी आये हैं। 'ग्रज' का ग्रर्थ 'ग्रजमोदा' भी है। महाजा' यह वड़ी ग्रजवायनका नाम भी होता है। ग्रतिथिको भोजन-क्रियाके बाद पाचनिक्रयार्थ ग्रथवा वलवर्धनार्थ इन ग्रौषिथोंका दान भी सम्भव हो सकता है ग्रथवा 'ग्रजा बोहयस्तावत् सप्तवार्षिकाः' (पञ्चतन्त्र काकोलूकीय ३ कथा)

"बीजैर्यज्ञेषु यष्टव्यमिति वै वैदिकी श्रुतिः। स्रजसंज्ञानि बीजानि नो छागं हन्तुमर्हथ।"

(महाभारत, शान्तिपवं ३३७.४)

उस उक्तिसे 'ग्रज' शब्दका 'सात वर्षके पुराने चावल' यह भी ग्रर्थ है, ग्रतिथिके लिये उन्हींका पकाना वा वृषभकन्द वा सोमरसंका पकाना भी इष्ट हो सकता है।

यदि यह अर्थ मान्य न हो "महोक्ष या महाजकी हिंसा करके उनके शरीरसे प्राप्त मांसका अग्निपर पकाना अर्थ लिया जायगा— तो वह वेदके सिद्धान्तोंके विरुद्ध होनेसे अप्रामाणिक एवं अमान्य होगा।

वसिष्ठधर्मसूत्रमें भी 'महोक्ष' या 'महाज' द्वारा ग्रतिथि-सत्कारकी बात लिखी है—

श्रथापि ब्राह्मगाय वा राजन्याय वाभ्यागताय महोक्षागां वा महाजं वा पचेदेवमस्मा श्रातिथ्य कुर्वन्तीति ॥ (विसिष्ठधर्मसूत्र ४.८)

उपर्युं क्त विवेचनके पश्चात् इसपर ग्रौर विवेचनकी ग्रावश्यकता नहीं। इसके पूर्व कुछ श्लोक 'मघुपर्कमें मांस ग्रौर यज्ञमें हिंसा' विधेय बताते हैं

# क्या मधुपर्कमें गोमांस सम्भव है ? श्रितिथ-सत्कारमें महोक्तं, महाजं श्रथवा वेहतं

१३५

जिनका विवेचन विशष्ठधर्मसूत्र ग्रौर सांखायनगृह्यसूत्र उपशीर्षकोंके ग्रन्तर्गत हो चुका है।

पाण्डुरंग वामन कार्गो महोदय ग्रपने ग्रंग्रेजी भाषाके ग्रन्थ धर्मशास्त्रका इतिहास, खण्ड २, भाग १, ग्रध्याय १० में मघुपर्कके प्रकरगमें पृष्ठ ५४२, पंक्ति ६-१० में लिखते हैं—

"It appears that the Aitareya Brahmana III. 4, when it says that 'if the ruler of men comes as a guest or any one else deserving of honour comes, people kill a bull or a cow (that has contacted a habit of abortion)' refers to Madhuparka, though that word is not actually used."

ग्रर्थात्—ऐसा लगता है कि ऐतरेय ब्राह्मण ३.४ में जहाँ यह बताया है कि यदि मनुष्योंका शासक (राजा) ग्रतिथि रूपसे ग्रावे या ग्रन्य कोई सम्मान्य व्यक्ति ग्रावे तो लोग एक सांड़ ग्रथवा एक गाय (जिसका गर्भ बार-बार गिर जाता हो) की हत्या करते हैं, जिसका सम्बन्ध मधुपर्कसे है, यद्यपि मधुपर्क शब्दका वहाँ प्रयोग नहीं हुग्रा है।

ऐतरेय ब्राह्मण ३.४ का उद्धरण वहींपर पाद-टिप्पणीमें इस प्रकार दिया है—''तद्यथैवादो मनुष्यराज म्रागते न्यस्मिन्वाऽर्हति उक्षाणं वा वेहतं वा क्षदन्ते।'' म्रौर लिखा है कि इसका उद्धरण मेधातिथिने मनुस्मृति ३.११६ में तथा हरदत्तने गौतमधर्मसूत्र १७.३० में दिया है।

उसी ग्रन्थके खण्ड २, भाग २, ग्रध्याय २१ के नृयज्ञ या मनुष्ययज्ञके प्रकरणमें पृष्ठ ७५०, पंक्ति ६-८ में पाण्डुरंग वामन काणे महोदय लिखते हैं—

"Vide also Aitareya Brahmana III.4, for the offering of an ox or a barren cow to a king or another deserving person coming as a guest."

ग्रर्थात्—राजा या ग्रन्य सम्मान्य ग्रतिथिके ग्रागमनपर सांड ग्रथवा बन्ध्या गाय देनेकी बात ऐतरेय ब्राह्मण ३.४ में भी कही गयी है।

मनुस्मृति ३.११६ का विवेचन पहले 'मनुस्मृति' शीर्षकके श्रन्तर्गत किया जा चुका है जो बहुत स्पष्ट है , उसमें कहीं भी मांसका नाम नहीं है; गोमांस तो बहुत दूरकी बात रही।

गौतमधमसूत्रमें ग्रारम्भसे लेकर जो १७वां ग्रध्याय पड़ता है उसमें ग्रभक्ष्य वस्तुग्रोंका वर्णन है उसमें यह ३०वां सूत्र जिसका उल्लेख है, इस प्रकार है—धेन्वनडुहौ च—जिसका सीधा-सादा ग्रर्थ यह है कि ग्रभक्ष्य वस्तुग्रोंमें धेनु ग्रर्थात् गाय ग्रौर ग्रनडुह ग्रर्थात् बैल भी ग्रभक्ष्य हैं। इससे मधुपर्कसे मांस या गोमांसका सम्बन्ध सिद्ध नहीं होता।

ऐतरेय-ब्राह्मण, भ्रध्याय ३, खण्ड ४ का जो उपर्यु क्त उद्धरण पाण्डुरंग वामन काणो महोदयने पाद-टिप्पणींमें दिया है वह १५वाँ गद्य है जिसका पूरा पाठ इस प्रकार है—

म्राग्नं मन्थिन्त सोमे राजन्यागते तद्यथैवादो मनुष्यराज म्रागतेऽन्यस्मिन्वा हेत्युक्षाणं वा वेहतं वा क्षदन्त एवमेवास्मा तत्क्षदन्तं यदिग्नं मन्थन्त्यिग्निहं देवानां पशुः॥

पहले शतपथ-ब्राह्मएामें इसी सन्दर्भमें आये हुए 'पचेत्' शब्दका याज्ञवल्क्य स्मृतिके इसी सन्दर्भमें श्राये हुए 'उपकल्पयेत्' पदसे सामञ्जस्य प्रमाणित हो चुका है। श्रतः ऐतरेय-ब्राह्मएाके इसी संदर्भमें श्राये 'क्षदन्ते' पदका भी उनसे सामञ्जस्य होना सम्भव है या नहीं—इसपर विचार करना है। इसका विस्तृत विवेचन पं० श्रीदीनानाथ शर्मा शास्त्रीने श्रपने 'श्रीसनातनधर्मालोक' के छठे सुमनके पृष्ठ ३६०-३७४ पर किया है संक्षेपमें उसके कुछ उद्धरएा यहाँ दिये जा रहे हैं—

स्रव 'क्षद्' धातुके स्रथं पर विचार करना है। उक्त ब्राह्मण-वचनका यह स्रथं है कि—राजा वा प्रशंसनीय कोई श्रोत्रिय स्रादि स्राजावे, तो उसके स्रातिथ्यमें वृषभ वा गायका क्षदन करे। 'क्षद्' धातु पाणिनिके धातुपाठमें नहीं है; इससे उसका स्रथंज्ञान भी उससे नहीं हो सकता; पर 'तृन-तृचौ शंसि-क्षदादिभ्यः संज्ञायां चानिटौ' (२.६४,२५१),—इस उणादि (पञ्चपादी) सूत्रमें उस 'क्षद्' धातुका स्मरण किया गया है; स्रतः यह सौत्र धातु है—यह स्पष्ट है; पर इसका स्रथं सूत्रसे भी ज्ञात नहीं हो सकता।

निघण्डु (२.८) में अत्तिकर्भक (भक्षणार्थंक) धातुओं में 'क्षद्' धातुका प्रयोग बिल्कुल नहीं है—यह याद रख लेनेकी बात है। उसी में वधकर्मक (२.१६) धातुओं में भी क्षद् धातुका प्रयोग बिल्कुल नहीं है—यह भी स्मरण रख लेना चाहिये।

### क्या मधुपर्कमें गोमांस सम्भव है ? श्रतिथ-सत्कारमें महोज्ञं, महाजं श्रथवा वेहतं

१३७

श्रव ऋग्वेदसंहिताके मन्त्रोंमें 'क्षद्' धातुका प्रयोग श्रौर उसमें सायग्राभाष्य भी देखना चाहिये। श्रन्य प्राचीन विद्वानोंने भी इस धातुका क्या श्रर्थ किया है—इसका भी श्रनुसन्धान करना चाहिये। (३६३)

महाभाष्यका यह वचन भी प्रसिद्ध है—'ग्रनेकार्था ग्रिप धातवो भवन्ति । तद्यथा--विषः प्रकिरणे (वीर्याधाने) हष्टः, छेदने चापि वर्तते ।.....करोतिरभूत-प्रादुर्भवि हष्टौ निर्मलीकरणे चापि वर्तते । एविमहापि तिष्ठतिरेव विजिक्रयामाह, तिष्ठितरेव विजिक्रयामा निवृत्तिम्' (१.३.१)—इस प्रकार जब एक ही क्रियाके परस्पर दो विरुद्ध ग्रर्थ भी (जैसे 'स्था' धातुका ठहरना ग्रौर चलना) हो सकते हैं ; तो ग्रौचित्यवश प्रतीयमान हुए धातुके ग्रनादिष्ट ग्रर्थको ले लेना भी व्याकरण-विरुद्ध नहीं । (३६३-३६४)

इस प्रकार 'भक्षरा' का ग्रर्थ 'ग्रपने उपयोगमें लाना' 'उसका उपयोग वा स्वीकार करना' ग्रर्थ भी होता है। (३६४)

ऋग्वेद १.२५.१८ मन्त्रमें सायगाचार्यने लिखा है—'हविः क्षदसे— प्रश्नासि' यह भक्षगा ग्रर्थ करके फिर 'हिवः-स्वीकाराद् ऊर्ध्वम्' यहाँ प्रश्नान (भक्षगा) का तात्पर्य 'स्वीकार' भी लिखा है । जबिक 'क्षद्' धातुका ग्रर्थ 'खाना' है ; तो क्या वह ग्रर्थ 'उक्षागां वेहतं वा क्षदन्ते' बह्वृच-ब्राह्मग्रके पदमें दीखता है ? तब तो फिर यह ग्रर्थ हो जायगा कि—राजा व श्रोत्रियके ग्राने पर वृषभ वा वेहत्को खाते हैं । क्या यह ग्रर्थ यहाँ घट रहा है ? यह ग्रर्थ करने पर ग्रतिथिके भोजनका ग्रर्थ न होकर ग्रतिथि-परिचारकका वेहत्को स्वयं खाना ग्रर्थ हो जायगा । श्रीहरदत्तने ग्रतिथिसे भिन्नको उसका खाना निषद्ध किया है । यदि 'ग्रश्नन' का ग्रर्थ 'स्वीकार' कर लिया जाय तब 'गाय-बैलको स्वीकार करते हैं' ग्रर्थात्—'ग्रतिथिके लिये लाते हैं'—यह संगत तात्पर्य निकल सकता है ।

जिस क्षद् धातुके प्रयोग प्रदर्शनार्थ उएगादिमें बह्वृच-ब्राह्मएगका वचन उद्धृत किया, उसमें क्षदन्ते का न तो 'टुकड़े-टुकड़े करना' ग्रर्थ घटता है, न 'खाना' ही। 'टुकड़े-टुकड़े करना' ग्रर्थ तो ग्रत्यन्त ग्रनुचित होगा। (३६५) 'हिंसा' से 'ताड़ना' भी कही जाती है।.......निरुक्त (१.३.२) में 'हस्त' का 'हन्तेः प्राशुर्हनने' यह निर्वचन दिया गया है। यहाँ 'हनन' का ग्रर्थं भी 'ताडन' है, प्राण्-वियोजन (मारना) नहीं। क्षत्ता सारिथ वा ग्रिधिष्ठाताका (ग्रथवं० ५.१७.१४,६.१११) नाम भी रथके अश्वके हाँकने वा ताड़नसे है, जानसे मारनेसे नहीं। ग्रितिथिके पास लानेके लिये गाय-बैलको हाँका जाता है, यह उसकी ताड़न हिंसा है।

'क्षद्' धातुके—दुकड़े-दुकड़े करना ग्रौर खाना—इन दो अर्थोंसे भिन्न तीसरे ग्रथंके बतानेसे सौत्र 'क्षद्' धातुके ग्रन्य ग्रथं भी हो सकते हैं— यह सूचित होता है। ग्रब इस विषयमें ग्रन्य विद्वानोंका मत भी देखना चाहिये। (३६६)

'क्षद्म' शब्दके निर्वचनके ग्रवसर पर श्रीस्कन्दस्वामीने लिखा है— 'क्षद स्थेयें' (सौ०) । यही देवराज यज्वाने भी 'स्वकार्ये स्थिरं भवित, जलाशयं व्याप्य स्थिरीभवतीति वा' (नि० १.१२.३) यह लिखा है । तब यहाँ भी ग्रर्थ होगा कि जब ग्रतिथि ग्रावे तो अतिथिको देनेके लिये गाय-बैलको स्थिर करे। यह ग्रर्थ भी यहाँ संगत हो जाता है । सुवोधिनीकारने जलवाचक 'क्षद्म' में 'क्षद् गित-हिंसनयोः' घातु मानी है। 'क्षदित-हिनस्ति पिपासामुष्णतां वा ग्रभीप्तितं वा पुरुषम्' पर यहाँ ग्रध्न्याकी हिंसा सम्भव न होनेसे 'गति' ग्रर्थ भो हो सकता है, 'क्षदित ग्रतिथिपाश्वें गां गमयन्तीति' यह ग्रर्थ भी यहाँ संगत हो जाता है। अति-ईप्सित पुरुषकी भी हिंसा नहीं हुग्रा करती, किन्तु 'आनयन' हुआ करता है। (३६७)

'क्षत्ता' पदकी सिद्धिके लिये ग्रमरकोषकी सुधा-व्याख्यामें श्रीमट्टोजिदीक्षितके लड़के श्रीमानुजीदीक्षितने लिखा हैं—'क्षद् संवरणे सौत्रः' (२.८.५६) यहाँ 'क्षद' धातुका 'संवरण' ग्रर्थ किया गया है। यही ग्रथं उसने 'क्षत्रियः' (२.८.१) में भी लिखा है। स्वामी दयानन्दने भी ग्रपने उणादि-कोषमें यही ग्रथं किया है।

(३६७-३६८)

ग्रमरकोषके २.१०.३ पद्यमें श्रीभानुजीदीक्षितने 'क्षत्ता' यहाँ लिखा है—'क्षदित, क्षदते वा, क्षद सम्भृतो'। यहाँपर 'क्षद्' धातुका

### क्या मधुपर्कमें गोमांस सम्भव है? श्रतिथि-सत्कारमें महोज्ञं, महाजं श्रथवा वेहतं

388

'सम्भरण' यर्थ भी सूचित किया है। य्रध्न्या (गाय) ग्रौर ग्रध्न्य (बैल) की हिंसा ग्रसम्भव होनेसे यहाँ गाय-बैलको ग्रतिथिको देनेके लिये पालित करते हैं यह ग्रथं भी संगत हो सकता है। उक्त ब्राह्मण-वाक्यमें निमित्त ग्रथंमें सप्तमी मानी जा सकती है।

इस अनुसन्धानसे सिद्ध हो रहा है कि क्षद् धातुके बहुतसे अर्थ हुआ करते हैं, केवल हिंसा अर्थ, वा भक्षण अर्थ ही नहीं होता। जो अर्थ जहाँ उपयुक्त सिद्ध हो, और किसी सिद्धान्तसे विरुद्ध न पड़े, वहाँ वही अर्थ करना ठीक हुआ करता है, उससे भिन्न अर्थ करना नहीं। यदि 'गङ्गायां घोषः' में लक्ष्य अर्थ है तो 'गङ्गायां महिषास्तरन्ति' में पूर्वकी तरह लक्ष्य अर्थ कर देना ठीक नहीं हो जाता जब कि यहाँ कोई अनुपपत्ति नहीं होती। यही बात कुसुमाञ्जलिमें श्रीउदयनाचार्यने कही है—

श्रुतान्वयाद् स्रनाकाङ्क्षं न वाक्यं ह्यान्यदिच्छति । पदार्थान्वय-वैधुर्यात् तदाक्षिप्तेन सङ्गतिः" (३.१२) ।

ग्रर्थात् ग्रन्विततामें ग्रन्य ग्रर्थकी ग्राकाङ्क्षा नहीं रहती; ग्रन्विततामें ही सङ्गत्यर्थ ग्रन्य ग्रर्थ करना पड़ता है। सो अध्न्याके हननमें ग्रनन्वितता ग्रानेसे ही वह ग्रर्थन करके ग्रन्य ग्रर्थ सङ्गत्यर्थ देखा-भाला जाता है। (३६८-३६९)

यब इस विषयमें वेदकी तथा उसमें श्रीसायणाचार्यके भाष्यकी एक ग्रौर साक्षी भी पाठकगण देखें, जिससे हमारा पक्ष स्पष्ट पुष्ट होता है। 'क्षत्ता वामस्य देव! भूरे' (ऋग्वेद ६.१३.२) के 'क्षत्ता' में जो 'क्षद्' धातुका ही रूप है—श्रीसायणाचार्य लिखते हैं—''ऋतस्य उदकस्य यजस्य वा क्षत्ता—क्षदितरत्र दानकर्मा, दाता भविसा।'' यहाँ श्रीसायणाने स्पष्ट लिखा है कि—'क्षद्' धातुका ग्रर्थ 'दान' भी हुग्रा करता है। यहाँ विचारणीय है कि श्रीसायणाने ग्रपने शब्दोंसे 'हिंसा' ग्रथमें प्रसिद्ध भी 'क्षद्' धातुका 'हिंसा' ग्रथं न करके उसका 'दान' ग्रथं क्यों किया ? स्पष्ट है कि—यहाँ हिंसार्थ समन्वित नहीं होता। ग्रतः 'दान' ग्रथं किया गया। यदि ऐसा है, तब उक्त ऐतरेय- ब्राह्मण-वाक्यमें भी ग्रतिथिके ग्रानेपर 'ग्रष्टन्या' एवं 'ग्रष्टन्य' गाय-बेलका भी 'दान' ही ग्रथं प्रतिफलित हुग्रा; ग्रौर प्रकृत सिद्ध हुग्रा; क्योंकि— ग्रष्टन्याकी हिंसामें ग्रनुपपत्ति पड़ती है। क्या यात्राके समयमें

### प्राचीन भारतमें गोमांस-एक समीक्षा

'सैन्धवमानय' का 'नमक लाना' अर्थ समऋदारीका होगा, और 'घोड़ेका लाना' नासमभी का?

फलतः उक्त बह्वृच-ब्राह्मग्राके वाक्यमें 'उक्षाग्रां वेहतं वा क्षदन्ते' का श्रर्थ 'वृषभं गां वा ददित ' यही सिद्ध एवं उपपन्न हुग्रा। ऐसा होनेपर 'महोक्षं या महाजं वा श्रोत्रियायोपकल्पयेत्' (१.४.१६६) इस याज्ञवल्क्य स्मृतिके तथा ऐतरेयके वचनकी एकवाक्यताभी प्रतिफलित हो गयी। 'उपकल्पन' का श्रर्थं भी दान है।

मिताक्षराने इतने दानमें ग्रसम्भवता देखकर उस ग्रतिथिके सत्कारार्थ उसे वाचिक कह देने मात्रका ग्रर्थ कर दिया है। सांडोंके दान-अर्थमें यह ग्रसम्भव ग्रवश्य है; क्योंकि इतने श्रोत्रियोंके लिये इतने सांड एक पुरुषके पास कैसे होवें? परन्तु यहाँ तो साधारण बेंल ग्रौर साधारण ही गाय कही गयी है, ग्रतः यहाँ दान ग्रथमें भी कोई ग्रनुपपत्ति नहीं रहती।

'वेहत' शब्दका विशेष गाय (गर्भ गिरानेवाली) ग्रर्थ भी यहाँ ठीक नहीं, क्योंकि वैसी गौएँ भी साधारएा रूपसे नहीं मिलतीं। (३६९-३७०)

इस प्रकार इन प्रसिद्ध प्रमाणोंसे समाधान हो गया कि—'महोसं पचेत' में 'व्यक्तीकुर्यात्' अर्थ है ग्रौर 'उक्षाणं क्षदन्ते' का 'वृषमं ददित' यह ग्रथं है। 'क्षद्' धातु यहाँ दानार्थंक है। जबिक 'क्षद्' धातुका ग्रथं 'दान' भी वेदमें मिलता है, श्रीसायणाच।र्यने उसे लिखा भी है, ग्रौर गोदानकी महिमासे जब सारे वेदादि-शास्त्र भी भरे हुए हैं तब वही ग्रथं सभी दृष्टियोंसे ठीक है, संगत भी है। (३७०-३७१)

'क्षद्' धातुमें 'हिंसा' ग्रर्थ वा भक्षणार्थं का भ्रम इन विद्वानों को इसलिये पड़ा कि — धातुपाठमें जहाँ धातुग्रों के ग्रर्थ लिखे हुए होते हैं वहाँ उन्हें क्षद् धातु तो मिली नहीं, पर 'खद स्थेयें हिंसायां च, चाद् भक्षरों' यह धातु सामने ग्रा गयी ; ग्रतः उन्होंने 'क्षद्' धातुका 'खद्' धातु वाला ग्रर्थ कर दिया । पर धातु-पाठमें पठित 'खद्' धातुका जो ग्रर्थ हो ; 'ख' के स्थानमें 'क्ष' ग्रक्षरवाली सौत्रधातुका

180

### क्या मधुपर्कमें गोमांस सम्भव है ? अतिथि-सत्कारमें महोज्ञं, महाजं अथवा वेहतं

888

भी वही ग्रर्थ हो—यह कोई राजाकी ग्राज्ञा नहीं कि मान ली जावे। जबिक 'क्षद्' धातुका ग्रर्थ 'दान' भी मिलता है, ग्रौर वह ग्रर्थ यहाँ संगत भी है; जबिक शतपथ ग्रादिमें धेन्वन हुहका ग्रज्ञन व हनन निषिद्ध एवं निन्दित किया गया है; जबिक —वेदादिशास्त्रमें गोदानकी महिमा भरी पड़ी है; जबिक शतपथ तथा याज्ञवल्क्य स्मृतिके श्रीयाज्ञवल्क्यमुनि भी मधुपर्कमें गाय-वैलका दान वा प्रकाशन चाहते हैं; जबिक शतपथके १४वें काण्डरूप वृहदारण्यकमें श्रीयाज्ञवल्क्य 'गोकासा एवं वयं स्मः' (१४.६.१.४,११.६.३.२) इस प्रकार गौत्रोंको प्राप्त करना चाहते हैं, तब इन सबकी एक वाक्यतासे ऐतरेयब्राह्म एकं उक्त-वचनमें भी गाय-बैलका 'क्षदन' दान ही सिद्ध हुग्रा।

ग्रतिथि-सत्कारमें पाद्य-ग्रध्यं ग्रादि द्वारा पूजाके बाद मधुपर्ककी विधि ग्रनेक गृह्यसूत्र एवं धर्मसूत्र ग्रन्थोंमें पायी जाती है जिसके साथ गो-समर्पणका भी विधान देखनेमें ग्राया है । महोक्ष या महाजके समर्पणकी वात केवल याज्ञवल्क्य स्मृति और विशष्ठधर्मसूत्रमें है, किंतु 'वेहतं' (गर्भ-घातिनी गाय) की बात तो कहीं भी नहीं है। इसका कोई तात्पर्य या लक्ष्य समभमें नहीं त्राता । शतपथबाह्मएा या ऐतरेय ब्राह्मणमें इसका कोई विधान रूपमें आदेश नहीं है, किन्तु उदाहरणके तौरपर कहा गया है कि मनुष्यके राजाके ग्रागमनपर या श्रोत्रिय ब्राह्मणके आगमनपर जैसे 'महोक्षं वा महाजं वा पचेत्' (शतपथमें), 'उक्षाणं वा वेहतं वा क्षदन्त' (ऐतरेयमें) वैसे ही अतिथि रूप आये हुए सोम राजाके लिये उसके उपयुक्त सत्कार ग्रर्पण करे। इसका अर्थ यह होता है कि याज्ञवल्क्य एवं विशष्ठके अनुयायी ग्रतिथि-सत्कारमें पाद्य, ग्रर्ध्य, मध्यकं ग्रादि विधिके साथ महोक्षको या महाजको उपस्थित करते थे। यदि यह बात ठीक हो तो शतपथ-ब्राह्मण या ऐतरेय-ब्राह्मण ग्रन्थका लक्ष्य भी महोक्ष या महाज अर्पण करनेके समान याज्ञवल्क्य-स्मृति अथवा वसिष्ठधर्मसूत्रकी ग्रोर ही सम्भव है, क्योंकि ग्रौर किसी ग्रन्य ग्रन्थमें ऐसा उल्लेख देखनेमें नहीं ग्राया। तब यह कैसे सम्भव हो सकता है कि शतपथ ब्राह्मएक पचेत् शब्दका ग्रीर ऐतरेय ब्राह्मणके 'क्षदन्त' शब्दका हिंसापरक ग्रर्थ हो, जबिक याज्ञवल्क्य स्मृति एवं वसिष्ठधर्मसूत्रका ग्रर्थ स्पष्ट रूपसे अहिंसापरक प्रमाणित होता है। ग्रतः जो लोग 'पचेत्' या 'क्षदन्त' का अर्थ हिसापरक करते हैं वे इसके

पूर्वापर सम्बन्धका विचार किये बिना ही ऐसा करते हैं जो सर्वथा ग्रनुचित बात लग्नती है।

एक बात और भी विचारणीय है । उक्ष—गर्भाधानमें समर्थ सांड़को कहते हैं । उच्च श्रेणीके गर्भाधानमें समर्थ सांड़ बहुत कम संख्यामें होते हैं । हरएक व्यक्तिके पास ऐसे सांड़ नहीं हुग्रा करते । इस प्रकारके सांड़ तो एक-एक समुदायमें एक-एक ही हुग्रा करते हैं । किसी श्रोत्रिय ग्रतिथिको यदि उसके पास बहुत-सी गायों न हों तो ऐसा सांड़ समर्पण करना लेनेवालेके लिये भी बहुत उपयोगी नहीं होगा ग्रौर देने वाला भी उसको देकर ग्रपनी गायोंके एक समुदायको ग्रनाथ-सा बना देगा । इसलिये ग्रतिथि-सत्कारमें इस प्रकारके गर्भाधानमें समर्थ महा-उक्षके समर्पणके लिये ग्रतिथि-सत्कारमें इस प्रकारके गर्भाधानमें समर्थ महा-उक्षके समर्पणके लिये जानेकी बात समक्षमें नहीं आती, मारनेकी बात तो हो ही नहीं सकती । मनुष्योंके राजाके आनेपर उसके ग्रतिथि-सत्कारके लिये भी महोक्ष लानेकी बात समक्षमें नहीं आती क्योंकि राजाकी गौशालामें अनेक गायों और उनके ग्रनुपातसे पर्याप्त संख्यामें सांड़ भी होते ही हैं।

यदि यह अर्थ किया जाय कि 'उक्ष' से अभिप्राय भारवाहक बैलका है, तो पहली बात तो यह है कि 'उक्ष' भारवाहक बैलके लिये प्रयोग नहीं होता। भारवाहक बैलके लिये 'अनुडुह' शब्दका प्रयोग होता है। दूसरी बात यह है कि जब तक अतिथिको इतना अधिक और भारी उपहार व दिया जाय कि जिसके ढोकर ले जानेके लिये बैलकी आवश्यकता हो तब तक उस प्रकारके उपहारकी बात भी समक्षमें नहीं आती। यदि कृषिकार्यके लिये बैल उपहारमें देनेकी बात हो तो श्रोत्रियको देनेके लिये तो उपयुक्त हो सकती है, किंतु मनुष्योंके राजाको देनेके लिये नहीं।

महा-अजके समर्पणकी बात भी केवल भार ढोनेके लिये ही हो सकती है, वह भी उपयुक्त नहीं लगती !

स्रत; यहाँ 'महोक्षं वा महाजं वा' वाक्यका कोई स्राध्यात्मिक प्रथं भी हो सकता है जिसका स्रभी तक किसी विद्वानने स्पष्टीकरण किया नहीं लगता। विद्वान लोग इसपर विचार करें।

इतनी बात तो निश्चित है कि यहाँ 'महोक्षं वा महाजं वा' का उल्लेख उनकी हिंसा करनेके सम्बन्धमें बिल्कुल नहीं है। जो ऐसा भाव निकालनेका प्रयास करते हैं, वे भूल करते हैं।

### 'गोघ्नोऽतिथिः' का श्रर्थ

राजा राजेन्द्रलाल मित्र ग्रपने उल्लिखित ग्रंग्रेजी भाषाके प्राचीन भारतमें गोमांस प्रवन्धके उल्लिखित संस्करणके पृष्ठ ५ पर पंक्ति २०-२४ में Colebrooke महोदयका उद्धरण देते हैं—

"Colebrooke noticed the subject in his essay on 'the religious ceremonies of the Hindus', in which he says, "it seems to have been anciently the custom to slay a cow on this occasion, (the reception of a guest) and a guest was there-called GOGHNA or cow-killer".

ग्रथित्—कोलबुकने ग्रपने 'हिन्दुग्रोंके धार्मिक संस्कार' में बताया है कि ग्रतिथिके स्वागतके ग्रवसरपर गाय मारनेको प्रथा थी, इसीलिये ग्रतिथिको (गोघ्नोऽतिथिः) गोघ्न—गाय मारनेवाला संज्ञा दी गयी।

'गोध्न' की व्याख्या की गयी है 'गोर्हयन्ते तस्मे गोध्नः'। इस व्याख्यामें मतभेदको गुंजाइश नहीं है। मतभेद है तो 'हन्यते' के ग्रर्थमें है। गोमांस-भक्षणका प्रचार करनेवालोंके लिये इसका यही अर्थ सरल पडता है - गौका हत्यारा--गोघ्नः । 'हन'...हिंसागत्योः; गतेस्त्रयोऽर्था...ज्ञानं गमनं प्राप्तिश्चेति—उनको यह जानकारी होनेपर भी कि 'हन्यते' का मूल 'हन्' धातुके अर्थं वध करना (to kill) के ग्रतिरिक्त गूणा करना (to multiply). गति, ज्ञान, गमन ग्रीर प्राप्ति (to go, to move, to obtain, to attain, to get) स्पर्श करना (to touch), सम्पर्कमें स्नाना (to come into contact) इत्यादि भी हैं (देखिये मोनियर विलियम तथा वी. एस. आप्टेके संस्कृत-ग्रंग्रेंजी कोश) किन्तु वे इसका विचार करना नहीं चाहते, क्योंकि इससे उनका प्रधान उद्देश्य 'गोमांसके भक्षणका प्रचार' सिद्ध नहीं होता । पूर्व विवेचनोंके अनुसार अतिथि-सत्कारमें मधुपर्कविधिमें जब गोमांस या श्रन्य प्रकारके मांसकी सम्भःवना सिद्ध नहीं होती है, बल्कि गोदानकी सम्भावना सिद्ध होती है तब यह स्पष्ट है कि 'गोघनः' के ग्रर्थ...गायको दानमें लेनेके लिये स्पर्श (to touch) करने वाला, गायको दान लेकर अथवा उसका दूध पीनेके लिये उसके सम्पर्कमें ग्रानेवाला (to come into contact) ग्रथवा गायको दानमें लेकर अपनी गायोंकी संख्या वृद्धि करनेवाला (to multiply) इत्यादि ही हो सकते हैं।

### प्राचीन भारतमें गोमांस-एक समीक्षा

888

ग्राचार्य के धातु पाठ 'हन हिंसा गत्योः' के ग्रनुसार 'हन्' धातु का ग्रर्थ है 'हिंसा ग्रौर गति'। गति के तीन ग्रर्थ हैं — ज्ञान, गमन ((going, moving) ग्रौर प्राप्ति (obtaining, attaining, getting)। 'गौर्हन्यते तस्मै गोघनः' में भी 'हन्यते' का ग्रर्थ 'गम्यते, प्राप्यते' है।

'मधुपर्कमें गोदान—गोसमर्पण' शीर्षकके ग्रन्तर्गत शास्त्रीय प्रमाणका उल्लेख दिया गया है, उससे स्पष्ट है कि इसका ग्रर्थ 'गोको दानमें प्राप्त करनेवाला, गौको दानमें लेकर उसके साथ जानेवाला' के ग्रतिरिक्त ग्रौर कुछ नहीं हो सकता।

ग्राचार्य पाणिनिका सूत्र 'दाशगोघ्नो सम्प्रदाने'—३.४.७३ से भी स्पष्ट है कि दान ग्रौर गोघ्न शब्दोंको सम्प्रदान कारकमें निपातनमें निष्पन्न किया जाता है। यदि यहाँ चतुर्थी मात्र हो ग्रभोष्ट होता—ग्रथीत् अतिथिके उद्देश्य से गायको मारना सूचित करना होता तो 'सम्प्रदाने' न कहकर 'तस्मै'—इस विभक्तिप्रतिस्मक ग्रव्ययका प्रगोग कर देते, ऐसा न करके 'सम्प्रदाने' लिखा है, इससे यहाँ दानार्थकी अभिव्यक्ति ही सूचित होती है। ग्रतः 'गोघ्नोऽतिथिः' का शुद्ध अर्थ है—जिसको गाय दान दो जाय वह व्यक्ति।

ऋग्वेद ग्रोर यजुर्वेदके 'ग्रहिरिव भोगैः' इत्यादि मन्त्रमें 'हस्तघ्न' शब्द ग्राता है जिसका ग्रर्थं मोनियर विलियम संस्कृत-ग्रंग्रेजी कोशमें पृष्ठ १२६५, कालम १ में इस प्रकार दिया हुआ है—

हस्तध्न—a kind of hand guard (protecting the hand in archery RV.)

ग्रर्थात् एक प्रकारका हस्त-रक्षक (जो बाण चलानेकी क्रियामें हाथकी रक्षा करता है। ऋग्वेदमें इसका उल्लेख है।)

यदि 'हस्तघ्न' का ग्रर्थ हाथको बचानेवाली चीज हो सकती है तो गोघ्नोऽतिथिः का ग्रर्थ गायकी रक्षा करके पालना करनेवाला ग्रतिथि क्यों नहीं हो सकता ?

### 'म्रतिथिनीर्गाः' ग्रौर 'म्रतिथिग्व' का म्रर्थ

ग्रंग्रेजी भाषाकी पुस्तक 'वैदिक काल' के ग्रध्याय १६ 'सामाजिक ग्रौर ग्रायिक स्थिति' शीर्षक प्रवन्धमें 'खाद्य ग्रौर पेय' उपशीर्षकके ग्रन्तर्गत

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

### क्या मधुपर्कमें गोमांस सम्भव है ? 'श्रतिथिनीगीं' और 'श्रतिथिन का अर्थ

888

पृष्ठ ३६३ की पंक्तियां २०-२२ में वी. एम. ग्राप्टे महोदय ग्रातिथनीर्गः (ग्रातिथिनी:+गाः) शब्दका उल्लेख करके बताते हैं कि इसका भाव ग्रातिथिके लिये गाय मारनेका ही है ग्रोर ऋग्वेद १०.६८३ का प्रमाए। देते हैं।

ग्रंग्रेजी भाषाकी पुस्तक 'वैदिक इण्डेक्स', खण्ड २, पृष्ठ १४५ पर मैकडोनेल्ड ग्रौर कीथ महोदय भी मांस शीर्षकके ग्रन्तर्गत लिखते हैं—

guests'. (Bloomfield, American Journal of Philology, 17.426; Journal of the American Oriental Society, 16, exxiv. Cf. atithinirgah 'cows fit for guests', RV. x. 68.3)."

ग्रथित्—ग्रतिथिग्व संज्ञाका ग्रथं भी सम्भवतः ग्रतिथिके लिये गायका कतल करना ही है (ग्रितिथिनीर्गाः—ग्रितिथिके योग्य गाय— ऋग्वेद १०.६८.३)।

प्रोफेसर ब्लूमफील्डने भी 'Journal of the American Oriental Society, Vol.16 (1896) पृष्ठ exxiv की पंक्ति १२ से पृष्ठ exxv की पंक्ति ६ तक में — जो ग्रमेरिकन ग्रोरिएण्टल सोसाइटीके दिनांक २६, ३० ग्रीर ३१ मार्च १८६४ के दिनों में न्यूयार्क में हुए ग्रधिवेशनकी कार्यवाहीका वर्णन है ग्रीर जो ''ग्व'' ग्रीर "ग्विन्' ग्रन्तक वैदिक-शब्दोंपर उस ग्रधिवेशनका १७वां विषय रहा है — इस विषयपर विचार किया है, जिसका उद्धरण नीचे दिया जाता है।

The proper name atithigva has, so far as is known, never been translated. Grassmann's gva 'going' does not yield appreciable sense.

If we analyze structurally atithi-gv-a 'he who has or offers a cow for the guest', 'he who is hospitable', we have a normal compound, normal sense, and a valuable glimpse of Vedic house-practices, known hitherto only in the Brahmanas and Sutras. At the arghya ceremony, which is performed on the arrival of an honored guest, the 'preparation' of a cow is the central feature. The technical expression is gam kurute: see CGS. ii. 15.1;

AGS.i.24.30.31; PGS.i.3.26.30; Gobh.iv.10.1; APGS.13.15; HGS.i.13.10; ApDhS.ii.4.8.5. In TS.vi.1.10.1 the ceremony goes by the name go-argha. There is no reason why this simple and natural practice should not be reflected by the hymns, and it comports with the character of Atithigva as a generous giver: cf. vi.47.22; x.48.8; i.130.7, also similar statements in reference to descendants of Atithigva (atithigva) in viii.68.16.17. The adjective atithin is a hapax legamenon in RV.x.68.3; it occurs in the expression atithinir gah; and, whatever it may mean, it suggests forcibly the proper name in question. The rendering of atithin by 'wandering.' as given by the Petersburg lexicons and Grassmann, is based upon the supposed etymology (root at 'wander'), and reflects the vagueness usual with such interpretations. Ludwig's translation "wie gaste kommend" is a compromise between the etymology and the ordinary meaning of atithi. The passage in questions reads: 'Brihaspati has divided out like barley from bushels the (rain-) cows propitious to the pious, fit for guests (atithin), strong, desirable, beautiful in color, faultless in form, after having conquered them from the clouds.' The proper name atithi-gy-a means therefore precisely one who has atithinir gah.

ग्रर्थात्—जहाँ तक पता है, व्यक्तिवाचक नाम 'ग्रतिथिग्व' का कभी ग्रनुवाद नहीं किया गया। (जर्मन विद्वात्) ग्रासमानने 'ग्व' का 'जानेवाला' जो ग्रनुवाद किया है उससे कोई समुचित ग्रर्थं नहीं निकलता।

यदि शब्द-रचनाकी दृष्टिसे हम 'म्रतिथि-ग्व्-म्र' विश्लेषण् करें तो उसका भ्रयं होगा 'जिसके पास म्रतिथिके लिये गाय है' म्रथवा 'जो म्रतिथिको गाय देता है', 'वह जो म्रातिथ्य करता है'। इस प्रकारके निर्वचनसे समुचित समास होता है, समुचित म्रथं होता है भ्रौर वैदिक कालीन गृह्यसंस्कारोंकी महत्त्वपूर्ण भाँकी मिलती है जो कि ग्रभी तक ब्राह्मण-ग्रंथों भ्रौर सूत्र-ग्रंथोंसे ही प्राप्त होती थी। सम्मानित म्रतिथिके भ्रानेपर जो भ्रष्यं द्वारा सत्कार होता है, उसमें गायकी सज्जा (preparation) प्रमुख कर्म है। इसके लिये पारिभाषिक शब्द है 'गां कुरुते', देखिये शांखायन-गृह्मसूत्र २.१५.१; म्राश्वलायन गृह्मसूत्र १.२४.३०,३१; पारस्करगृह्मसूत्र १.३.२६.३०, गोमिल ४.१.१०;

### क्या मधुपर्कमें गोमांस सम्भव है ? 'श्रतिथिनीर्गाः' श्रोर 'श्रतिथिन्व' का श्रर्थ

180

ग्रापस्तम्बगृह्यसूत्र १३.१५; हिरण्यकेशिगृह्यसूत्र १.१३.१०; ग्रापस्तम्बधर्मसूत्र २.४.८.५ । तैत्तिरीयसंहिता ६.१.१०.१ में इस सत्कारका नाम 'गो-ग्रर्घ' है। कोई कारण नहीं कि यह सीधा-सादा ग्रौर स्वाभाविक संस्कार, सूक्तोंमें प्रतिविम्बित न हो, जबिक यह 'अतिथिग्व' (नामक व्यक्तिविशेष) के उदार दानशील स्वभावसे सुसंगत है-ऋग्वेद ६.४७.२२, १०.४८.८, १.१३०.७ देखिये ग्रौर ग्रतिथिग्वके वंशजों (ग्रातिथिग्व) के विषयमें भी यही ग्राशय ऋग्वेद ८.६८.१६, १७ में मिलता है। संज्ञाविशेषरा 'ग्रतिथिन्' समूचे ऋग्वेद में केवल एक बार ही १०६८३ में आया है। यह वाक्यांश 'अतिथिनीर गाः' में ग्राता है। ग्रीर इसका जो भी ग्रर्थ हो, इससे व्यक्तिविशिष्टके नामका प्रवल ग्राभास होता है। दोनों पीटर्सबुर्ग कोशोंने ग्रौर ग्रासमानने 'ग्रतिथिन' का 'घूमनेवाला' जो ग्रर्थ किया है वह किल्पत व्युत्पत्ति (√ ग्रत् 'घूमना') पर ग्राधारित है, ग्रौर जैसाकि इस प्रकारके निर्वचनोंमें हुग्रा करता है, यह ग्रस्पष्ट है। (जर्मन विद्वान्) लुड्विक (६७२) ने इसका ग्रनुवाद 'जैसे ग्रतिथि ग्राते हैं करके व्यूत्पत्तिगत ग्रर्थ (√ ग्रत् 'घूमना') ग्रौर ग्रतिथि शब्दके सामान्य ग्रर्थमें समन्वय किया है। विचाराधीन वाक्य (ऋग्वेद १०.६८.३) का ग्रर्थ है-

पुण्यवन्तोंके लिये मंगलमयी—propitious to the pious (साध्वर्याः), ग्रितिथियोंके योग्य—fit for the guests (ग्रितिथिनीः), शिक्तशालिनी—strong (इषिराः), स्पृह्गीय—desirable (स्पार्हाः), सुवर्णं—beautiful in color (सुवर्णाः), रूपमें ग्रनवद्य—faultless in form (ग्रनवद्यरूपाः), (वर्षा-रूपिगो) गायोंको—(rain) cows (गाः), बृहस्पतिने (बृहस्पतिः), मेघोंसे—from the clouds (पर्वतेम्यः), जीतकर—having conquered (वित्यं), विभाजित किया है—has divided out (निर्—ऊपे), जैसे—like (इव), पात्रोंसे—from bushels (स्थिवभ्यः), जौको—barley (यवम्)। ग्रतः व्यक्तिवाचक नाम 'ग्रितिथि-ग्व-ग्र' का ठीक ग्रथं है 'वह जिसके पास (ग्रितिथियोंके योग्य गायें) ग्रितिथिनीर् गाः है'।

प्रो० ब्लूमफील्ड ने अमेरिकन ग्रोरिएण्टल सोसाइटीकी पित्रकामें 'अर्घ्य-की प्रथामें' 'preparation of a cow' के लिये पारिभाषिक शब्द 'गां कुरुते' बताकर कई सूत्र-ग्रन्थोंके सूत्रोंकी ग्रोर संकेत किया है। उन सूत्रोंमें 'गां कुरुते' वाक्य नहीं दिखाई दिये। हो सकता है "गां कुरुते" की गृह्यसूत्रोंकी संख्या लिखनेमें या मुद्रग्णमें भूल हो गयी हो या 'गां कुरुते' की जगह दूसरे शब्द हों—'जंसे ग्राश्वलायनगृह्यसूत्र १.२४.२३ में 'ग्राचान्तो-दकाय गां वेदयन्ते', गोभिलगृह्यसूत्र ४.१०.१६ में 'मुञ्च गां वरुग्णपाशाद्-द्विषन्तं मेऽभिधेहिं एवं ४.१०.२२ में 'कुरुतेत्यधियज्ञम्', ग्रापस्तम्बीयधर्मसूत्र २.४.५.५ में 'गोमधुपर्कोहीं वेदाध्यायः' वाक्य मिलते हैं किन्तु उनमेंसे कुछ सूत्रोंमें मधुपर्कमें मांसका ग्राभास मिलता है, जिनका विवेचन पहले 'पारस्कर-गृह्यसूत्र' ग्रौर 'ग्राश्वलायन गृह्यसूत्र' शीर्षकोंके ग्रन्तर्गत किया जा चुका है।

प्रो० ब्लूमफील्डने ग्रतिथिग्व व्यक्ति-विशेषका नाम बताया है जिसको उदार, दानशील स्वभाव (generous giver) शब्दों द्वारा विशेषण दिया है ग्रीर ऋग्वेद ६.४७.२२ (६.४.४.२२), १०.४८.८ (१०.४.६.८) ग्रीर १.१३०.७ (१.१६.४.७) का प्रमाण दिया है। इन मंत्रोंके ग्रर्थ ग्रिफिथ ग्रीर विल्सन महोदयों द्वारा भी व्यक्तिविशेषके नामवाचक ही किये गये हैं, गोहत्यारा नहीं। उनके ग्रर्थ नीचे उद्धृत किये जाते हैं—

RV. 6.47.22 (6.4.4.22)

Griffith: Out of the bounty, Indra, hath Prastoka bestowed ten coffers and ten mettled horses.

We have received in turn from Divodasa Sambara's wealth, the gift of Atithigva.

Wilson: Prastoka has given to thy worshipper, Indra, ten purses of gold, and ten horses, and we have accepted this treasure from Divodasa, the spoil won by Atithigvan from Shambara.

RV.10.48.8. (10.4.6.8)

Griffith: Against the Gungus I made Atithigva strong, and kept him mid the folk like Vritra-conquering strength. When I won glory in the great foe-slaying fight, in battle where Karanja fell, and Parnaya.

### क्या मधुपर्कमें गोमांस सम्भव है? 'श्रतिथिनीर्गाः' श्रोर 'श्रतिथिन्व' का शर्थ

388

Wilson: I prepared Atithigva for (the protection of) the Gungus, I upheld him, the destroyer of enemies, as sustenance amongst the people; when I gained renown in the great Vritra-battle, in which Parnaya and Karanja were slain.

RV.1.130.7 (1.19.4.7)

Griffith: For Puru thou hast shattered, Indra, ninety forts, for Divodasa thy boon servant with thy bolt, 0 Dancer, for thy worshipper.

For Atithigva he, the Strong, brought Sambara from the mountain down,

Distributing the mighty treasure with his strength, parting all treasures with his strength.

Wilson: For Puru, the giver of offerings, for the mighty Divodasa, thou, Indra the dancer (with delight in battle), hast destroyed ninety cities, dancer (in battle), thou hast destroyed them with (thy thunderbolt), for (the sake of) the giver of offerings. For (the sake of) Atithigva, the fierce (Indra) hurled Shambara from off the mountain bestowing (upon the prince) immense treasure, (acquired) by (his) prowess; all kinds of wealth (acquired) by (his) prowess.

'ग्रतिथिग्व' शब्दका ग्रर्थ मोनियर मोनियर-विलियम्स के संस्कृत-ग्रंग्रेजी कोशमें इस प्रकार दिया है—

'To whom guests should go—जिसके पास अतिथिको जाना चाहिये'। इस एक अर्थके अतिरिक्त और कोई अर्थ नहीं दिया गया है। इस अर्थमें कहीं भी गोहत्याकी गन्ध भी नहीं दीखती। अतएव 'अतिथिग्व' संज्ञा का अर्थ अतिथिके लिये गोहत्या करना या गोहत्या करानेवाला अतिथि कदापि नहीं हो सकता।

भारतीय विद्याभवनके अघ्यक्ष श्रीकन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शीने अपनी पुस्तक 'लोपामुद्रा' में पृष्ठ ३४, पंक्ति १६-१७ में 'स्रतिथिग्व' व्यक्ति विशेषका नाम मानकर भी उसका ग्रथं किया है 'ग्रतिथियोंको गोमांस परोसनेवाला' जबिक ब्लूमफील्डने उसका विश्लेषण करके ग्रथं किया है 'जिसके पास ग्रतिथिके लिये गाय है' ग्रथवा 'जो ग्रतिथिको गाय देता है' ग्रीर मोनियर विलियम्सने ग्रपने कोषमें ग्रथं किया है 'to whom guests should go'। श्री मुन्शोजीने 'ग्रतिथिके लिये गोमांस परोसनेवाला' ग्रथं करनेमें न तो 'ग्रतिथिग्व' का कोई विश्लेषण दिया ग्रौर न ग्रपने कथानकमें 'ग्रतिथिग्व' नामक व्यक्तिके द्वारा गोमांस परोसनेका कार्य दिखाया है। जब श्री मुंशीजी जैसे गण्यमान्य नेता ऐसा भाव प्रकाशित करें तो साधारण जनोंको भ्रम होना कोई ग्राश्चर्यकी बात नहीं।

'म्रतिथिग्व' ग्रौर 'म्रतिथिनीर्गाः' शब्दोंमें 'गोहत्याका भाव' माननेवालों-का स्पष्ट दुराग्रह है ग्रौर इसका मूल मैकडोनेल्ड, कीथ ग्रादि पश्चिमी विद्वानोंकी वह कल्पना है जिससे वे ग्रायोंको ग्रसभ्य सिद्ध कर सकनेका प्रयत्न करते हैं।

'म्रतिथिनीर्गाः' (ग्रितिथिनीः + गाः) के लिये ऋग्वेद १०.६८३ का उल्लेख है जिसके म्रर्थका स्पष्टीकरण म्रमेरिकन म्रोरिएण्टल सोसाइटीने म्रपनी पत्रिकामें भी दिया है। मूल मन्त्र इस प्रकार है

साध्वर्या ग्रतिथिनीरिषिराः स्पार्हाः सुवर्गा ग्रनवद्यरूपाः । बृहस्पतिः पर्वतेभ्यो वितूर्या निर्गा ऊपे यविमव स्थिविभ्यः ॥ (ऋग्वेद १०.६८.३)

इस मन्त्रका ग्रंग्रेजी ग्रनुवाद H.H. Wilson महोदयने इस प्रकार किया है —

"Brihaspati brings unto (the gods), after extricating them from the mountains, the cows that are the yielders of pure (milk), ever in motion, the objects of search and of desire, well-coloured and of unexceptionable form, (as men bring) barley from the granaries." (RV.x.5.8.3.)

### ग्रौर Ralph T. H. Griffith महोदयने इस प्रकार किया है-

"Brihaspati, having won them from the mountains, strewed down, like barley out of winnowing-baskets,

### क्या मधुपर्कमें गोमांस सम्भव हैं ? मधुपर्कमें मांस-मिश्रणमें कलात्मक वाधा

१५१

The vigorous, wandering cows who aid the pious, desired of all, of blameless form, well-coloured."

इन दोनों ग्रंग्रेजी भाषाकी टीकाग्रोंमें कहीं भी ऋग्वेदके उपर्युक्त मन्त्रके ऐसे अर्थका ग्राभास नहीं होता जो 'ग्रतिथिनीः' ग्रीर 'गाः' पदोंका मर्थ 'गायके नाश करानेवाले ग्रतिथि' का द्योतक हो एवं ग्रमेरिकन ग्रोरिएण्टल सोसाइटीकी पत्रिकाके विवेचनसे 'ग्रतिथिग्व' ग्रौर 'ग्रतिथिनीर्गाः' शब्दोंके ग्रथमें कहीं भी गोहिंसाकी गन्ध नहीं दीखती, बल्कि ये शब्द भी व्यक्तिविशेषके नामवाचक बताये गये हैं (It suggests the proper name in question.)

'ऋतिथिनी' शब्द 'मत्वर्थ' में 'इनी' प्रत्ययसे ही बन सकता है। 'मतुप्' प्रत्ययका अर्थ 'ऋतिथिवाली', 'ऋतिथि जिसके हैं', 'ऋतिथि जिसके लिये आवें,' 'ऋतिथियोंके काम आनेवाली', इत्यादि ही हो सकते हैं और गाय अपने दूध, दही, घी आदिसे ही ऋतिथियोंके काम आ सकती है। यदि कहें कि मांससे भी काम आ सकती है तो एक बार आये हुए ऋतिथिके ही काम आयेगी। फिर प्रत्येक बार आनेवाले ऋतिथिके लिये साधारण स्थितिके व्यक्तिके लिये प्रत्येक वार नयी गाय मारकर देना सर्वथा असम्भव हो जायगा। अतिथि-सत्कार साधारण स्थितिके व्यक्तिके लिये भी उतना ही आवश्यकीय है जितना कि सम्पन्न व्यक्तिके लिये। अतः सब प्रकारकी परिस्थितिमें 'ऋतिथिनी' शब्द का अर्थ—ऋतिथियोंका घी, दूध, दही आदिसे सत्कार करनेवाला—ही ठीक होगा।

### मधुपर्कमें मांस-मिश्रग्गमें कलात्मक बाधा

स्वर्गीय पं० श्रीपाददामोदर सातवलेकरने गो-ज्ञान-कोश, प्राचीन खण्ड— वैदिक विभाग, प्रथम खण्डमें मधुपर्कके प्रकरणमें लिखा है—

> हमें स्वयं इस बातका पूरा पता नहीं है क्योंकि हमारे घरानेमें किसीने भी कभी मांसका स्वाद लिया नहीं है, केवल शाकभोज ही हम करते हैं। तथापि हमने ग्रपने मांसाहारी परिचितोंसे मालूम किया जिससे हमें पता लगा कि मांसका कोई पदार्थ मधु (शहद) या

मिश्रीसे बनता नहीं। जो भी पदार्थ मांससे बनते हैं, सबके सब नमकीन तथा मिरच-मसालेवाले बनते हैं। यदि यह सत्य बात है तो मधुपर्क मांसके साथ केंसे बन सकता है ? क्योंकि यह मधुपर्क है अर्थात् (मधु) शहदसे (पर्क) मिश्रित मीठा खाद्य है। शहद या मिश्रीसे मिश्रित करके मांसका कोई पदार्थ बनता नहीं है, मांसका मिश्रग् नमकीन मिर्च-मसालोंके साथ बनता है।

इसकी सत्यताकी जाँच करनेके लिये इस विषयके प्रशिक्षण संस्थान एवं होटल वालोंको लिखकर पूछा गया था। उनके जो उत्तर ग्राये, वे पाठकोंके सामने रक्खे जाते हैं—

Institute of Hotel Management, Catering and Nutrition (होटल-व्यवस्था, खान-पान-प्रबन्ध तथा पोषण-पदार्थोंका प्रशिक्षरा संस्थान), पूसा, नयी दिल्ली-१२ ने अपने पत्र संख्या ICT/PA/2/69/192 दिनांक २६-१-१६६६ में लिखा है—

"No popular or famous dishes have been prepared so far out of meat and sugar in classical French, Indian or English cookery. Of course, this does not mean that the sweet meat preparations cannot be prepared, but the problem that has to be faced is the consumers' acceptibility and market potentiality."

ग्रथात्—फ्रांसीसी, भारतीय या ग्रंग्रेजीकी उत्कृष्ट-चिरप्रतिष्ठित (classical)
पाक-विद्या (cookery) में अभी तक मांस ग्रौर चीनीसे कोई लोकप्रिय (popular) या प्रसिद्ध (famous) व्यंजन (dishes) बनाया
नहीं गया है। तथापि इसका यह ग्रथं नहीं है कि मीठा-मांस नहीं
बनाया जा सकता, लेकिन इसमें उपभोक्ताग्रों (consumers)
की ग्रौर बिक्री-सम्भाव्यता (market potentiality) की समस्या
का सामना करना पड़ेगा।

इससे स्पष्ट है कि मांसयुक्त मिठाई नहीं बनती, कदाचित् बनायी जाय तो खानेवाले उपभोक्ता उसको पसन्द नहीं करेंगे ग्रौर उसकी बिक्रीमें कठिनाईका सामना करना पड़ेगा।

### क्या मघुपर्कर्मे गोमांस सम्भव है ? साइवेरियामें मधुपर्क प्रथा

१५३

Hotel Oberoi Intercontinental, Wellesley Road, New Delhi-11 ने अपने पत्र दिनांक ११-२-१९६६ में लिखा है—

"I would like to point out that no sweet meat preparations are made by us and whatsoever no meat is used for our dessert preparations."

ग्रर्थात्—मैं यह बता देना चाहता हूँ कि हम मीठे माँसका कोई पदार्थ नहीं बनाते; भोजनके ग्रन्तमें दिये जानेवाले मीठे व्यंजनमें भी किसी प्रकारका मांस नहीं मिलाया जाता।

इससे भी स्पष्ट है, मांसयुक्त मिठाई नहीं बनती, किसी मीठे व्यंजनमें मांस नहीं मिलाया जाता, मांसयुक्त पदार्थ नमकीन मसालेदार बनते हैं। सम्माननीय ग्रतिथिको प्रिय लगनेवाली उच्चकोटिकी वस्तु खिलाकर ही उसका सत्कार-मनोरंजन किया जाता है। जब उच्चकोटिकी पाक-विद्यामें मीठेसे संयुक्त मांसका लोकप्रिय व्यंजन बनता ही नहीं, तब यह कैसे सम्भव है कि सम्माननीय ग्रतिथिके मधुपर्क द्वारा स्वागत-सत्कारमें मधुपर्कमें मांस मिलाया जाय।

कुछ लोग नमकीन मसालेदार साग-सब्जियोंमें भी कुछ चीनी मिला-कर खाते हैं, लेकिन इससे यह नहीं कहा जा सकता कि उच्च श्रेगीकी साग-सब्जी मीठी बनती है। केवल मीठेके संयोगसे बनी साग-सब्जी तो किसीको भी अच्छी और स्वादिष्ट नहीं लगेगी। इसी तरह नमकयुक्त मसालेदार मांस व्यंजनोंमें कोई थोड़ा मीठा डाल भी ले तो उससे उच्च श्रेगीकी मांस-की मिठाई प्रमाणित नहीं होती। मधुपर्ककी सामग्रीमें नमक और मसालों-का कोई उल्लेख नहीं है। ऐसी हालतमें मधुपर्कमें मांसका मिश्रग्, बिना नमक-मसालेका मीठा मांस-व्यंजन होगा, जो अभी तक तो कहीं प्रचलित देखने-सुननेमें नहीं आया। फिर समभमें नहीं आता कि मधुपर्कमें मांसका मिश्रग् सम्माननीय अतिथिको कैंसे रुचिकर होगा और स्वादिष्ट लगेगा। इन सब बातोंको गम्भीरतासे विचारा जाय तो मधुपर्कमें मांसका मिश्रग् असम्भव बात है।

### साइबेरियामें मधुपर्क-प्रथा

सरस्वती विहार, नयी दिल्लीके निदेशक एवं सुप्रसिद्ध स्वर्गीय श्राचार्य श्रीरघुवीरजीके सुपुत्र डा० श्रीलोकेशचन्द्रजीने मघुपर्कके श्रपने श्रनुभवका एक वर्णन दिया है जो उन्हींके शब्दोंमें श्रागे उद्धत है— "पूर्वी साइबेरियाके हृदयमें ग्रागिस्की विहार है जो ग्रसंख्य पांडुलिपियों ग्रौर ग्रनुपम विद्वत्ताके केन्द्रके रूपमें विख्यात रहा है।
१६३० के लगभग तक यहाँ भारतके नालन्दा विश्वविद्यालयकी
ग्राध्यात्मिक ग्रौर पाठ्यगत परम्पराएँ सुरक्षित थीं। ग्रनेक वर्षोंकी
उत्कट इच्छाके पश्चात् १४।१५ जून १६६७ की मध्यरात्रिको हम इस
ग्रागिस्की विहारमें पहुँचे। शिविरदेशकी संस्कृति ग्रौर उसकी गहन
भारत-ग्रनुप्राणित परम्पराग्रोंमें जिस किसीकी भी रुचि है उसके
लिये यह स्वप्नवत् जगत् है। जीवनमें प्रथम बार यहाँ हमारा
स्वागत मधुपर्कसे हुग्रा। इस मधुपर्कमें दही, दूध ग्रौर मधु था।
यह चांदीके चमचोंसे चांदीके पात्रसे हमने ग्रहण किया।"

इससे स्पष्ट है कि रिशयन-साइवेरियाके मांसाहारी लोग तक भी मधुपर्कमें मांस नहीं मिलाते। ग्रतः यह निःसन्देह सत्य है कि मधुपर्कमें किसी प्रकारके मांसकी सम्भावना नहीं है ग्रौर 'मधुपर्क मांस-विहीन नहीं होता'— यह बात निराधार ग्रौर मिथ्या है।

### उपसंहार

उपर्युक्त विवेचनसे यह स्पष्ट है कि मधुपर्कमें मांस मिलानेकी कोई सम्भावना नहीं है। ग्रातिथ्य-सत्कारकी विधिमें समयाभावके कारण पायस वनाकर मिलानेकी भी सम्भावना कम लगती है। मधुपर्कमें दूध, दही, घृतके ग्रतिरिक्त सत्तु (भुंजे हुए ग्रनाजके दाने पीसकर बनाया हुग्रा ग्राटा) मिलानेकी सम्भावना हो सकती है, जैसा कि बोधायनगृह्यसूत्र (ग्रक्तकौ पिष्टान्नं संसिद्ध्येत १.२.४४) में एवं हिरण्यकेशि गृह्यसूत्र १.१२.१० में वर्णन है। ग्राजकल भी विहार ग्रौर उत्तर-प्रदेशके देहातोंमें दूरसे चलकर ग्राये हुए ग्रतिथिको गरमीको ऋतुमें मीठेके साथ जलमें सत्तु घोलकर पिलानेकी प्रथा देखनेमें ग्राती है।

### वया वैदिक-कालमें गोहिसा, मांसपरक यज्ञ और मांस-भक्षण प्रचिति थे ?

प्रचारके द्वारा बहुतसे लोगोंके मनमें ऐसी मान्यता बैठा दी गयी है कि वैदिक कालमें यज्ञोंमें हिसा होती थी ग्रौर गोहिसा भी होती थी तथा गोमांस एवं ग्रन्य मांस साधारणतया खाये जाते थे, ग्रहिसाका एकान्तिक वर्जन तो बौद्ध ग्रौर जैन कालके पूर्व भ्रमके कारण लोगोंमें हिंसाकी प्रवृत्ति पर्याप्त रूपमें प्रचलित हो चुकी थी, किन्तु वैदिक कालमें यज्ञोंमें हिंसा होती थी या मांस-भक्षणका प्रचलन था—यह बात सर्वथा मिथ्या है। बहुत-से लोगोंकी ऐसी मान्यता है कि वेदोंमें गायको ग्रघन्या माना गया है, लेकिन ग्रन्य जीवोंकी हिंसाका वर्जन वेदमें नहीं है ग्रौर यज्ञोंमें जीवोंकी हिंसा होती थी—यह भी मिथ्या घारणा है।

वैदिक-कालमें गौका कितना सम्मान था—इसका विस्तृत विवर्ण स्वर्गीय श्री श्रीपाद दामोदर सातवलेकर द्वारा सम्पादित 'गो-ज्ञान-कोश' (प्रकाशक—स्वाध्याय मंडल, आनंदाश्रम, पो० पारडी, जिला बलसार, गुजरात) में एवं पं० दीनानाथजो शर्मा शास्त्री द्वारा लिखित 'श्रीसनातन-धर्मालोक' में तथा श्री धर्मदेव विद्यावाचस्पतिके 'वेदोंका यथार्थ स्वरूप' (प्रकाशक—गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय) में दिया हुग्रा है। उनके कुछ सम्बद्ध उद्धरण यहाँ दिये जा रहे हैं जिनसे यह भली प्रकार प्रमाणित हो जाता है कि प्राचीन वैदिक-कालमें न तो गोवध होता था, न गोमांस-भक्षण ग्रीर न ग्रन्य जीवोंकी हिंसा या मांसभक्षण प्रचलित थे। जिनको ग्रीर विस्तृत जानकारी करनी हो वे 'गो-ज्ञान-कोश' 'सनातनधर्मालोक' एवं 'वेदोंका यथार्थ स्वरूप' ग्रंथ मंगाकर ग्रध्ययन करें।

### गायको भ्रवध्यता

वेदमंत्रोंका मनन करनेसे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि गौ मवध्य है। यह अनेक प्रकारोंसे वेद-मंत्रोंमें कहा गया है। वेदमें 'गौ सौर बेल' का नाम ही 'अघ्न्य' है। इसका अर्थ 'ग्रवध्य' है। नाम ही जिसका 'ग्रवध्य' ग्रथंवाला हो उसको काटना ग्रथवा उसका वध करना ग्रसम्भव है। वेदके पद ग्रथंवान् होते हैं, सार्थ होते हैं और ग्रन्वर्थक होते हैं। इसलिये जिसका नाम 'ग्रघ्न्या' हो, उसका वध वैदिक कालमें होना ग्रसम्भव है। ग्रौर वध हुए बिना गोमांसका यज्ञमें हवन तो नितान्त ग्रसम्भव ही है। जो 'गोमेध' में गौका वध ग्रौर गोमांसके हवनकी कल्पना मानते हैं, वे सब निराधार वातें हैं।

इसी तरह 'गी' पदके अर्थ गी, दूध, दही, मक्खन, छाछ, घी, मूत्र, गोबर, गो-चर्म, गौके बाल, गौकी हड्डी आदि अनेक होते हैं। मुख्यतः 'दूध' के तथा 'घी' के अर्थ में वेदका 'गौ' पद प्रयुक्त होता है। यह बात विशेष ध्यानमें धरने योग्य है।

### गोभिः श्रीणीत मत्सरं । (ऋग्वेद १.४६.४)

इस मंत्रका शब्दशः अर्थ '(गोभिः) गौम्रोंके साथ (मत्सरं) सोमको (श्रीगीत) मिलाम्रो' है। यहाँ सम्पूर्ण गौके साथ सम्पूर्ण सोमको मिलाम्रो, ऐसा भाव शब्दोंसे प्रकट होता है। परन्तु यहाँ 'गौके दूधके साथ सोमके रसको मिलाम्रो' ऐसा म्रर्थ है। यहाँ म्रंशके लिये पूर्णका प्रयोग किया गया है। गौका म्रंश दूध है ग्रौर सोमका म्रंश है उसका रस, इन दोनोंका मिलान ही यहाँ अभीष्ट है। वैदिक भाषाका यह ऐसा मुहावरा है। यह भाषाकी पद्धति समभमें म्रा जाय तो किसी प्रकारकी कोई शंका नहीं रह सकती।

फिर इस मन्त्रमें 'गौ' शब्दका ग्रर्थ यदि गायका दूध न करके सीधा 'गायके साथ सोमको मिलाओ'—ऐसा करें तो इससे ग्रर्थकी संगति किसी भी प्रकारसे नहीं बैठ सकती, क्योंकि गायके साथ सोमको किसी भी तरह मिलाया ही नहीं जा सकता। गाय लम्बी-चौड़ी पशु जातिकी एक वस्तु ग्रौर सोम एक लताका रस। उन दोनोंको कैसे मिलाया जा सकता है ? न जीवित गायके साथ सोमको मिलाया जा सकता है ग्रौर न मरी हुई सम्पूर्ण गायके साथ सोमको मिलाया जा सकता है। इसपर भी गोहत्या ग्रौर गोमांसके पक्षपाती यदि कहें कि 'गायको मारकर उसके मांसके साथ सोमको मिलाया जा सकता है' तो फिर 'गौ' शब्दका असली ग्रथं जो गाय है उसे छोड़कर 'गोमांस' यह गौएा ग्रथं लक्षणावृत्तिसे ही उसे करना पड़ेगा। ऐसी स्थितिमें

#### क्या वैदिक-कालमें मांसपरक यज्ञ ग्रादि प्रचलित थे ? वेदका महासिद्धान्त

१५७

जब 'गौ' शब्दका श्रसली श्रर्थ 'गाय' को छोड़कर गौरा श्रर्थ 'गोमांस' तक दौड़ लगाना श्रनिवार्य हो गया तो ऐसी श्रनिवार्यतामें 'गौ' शब्दका 'गो-दुग्ध' श्रर्थ ही क्यों न लगाया जाय जिससे कि उसके साथ सोमका मिलाना भी श्रासानीसे हो जाय ? 'गोमांस' श्रर्थ करने वालोंको 'मरी गायका मांस'—इतनी दूर तक जाना पड़ेगा, उसकी श्रपेक्षा हमें 'जीवित गायका दूध' ऐसा श्रर्थ करना सरल और सुन्दर होगा। कारण, लक्षराों द्वारा गौरा श्रर्थ जितना नजदीक होवे उतना ही श्रच्छा होता है—यह सिद्धान्त है।

### वेदका महासिद्धान्त

वेदका महासिद्धान्त सम्पूर्ण भूतोंको मित्रहिष्टसे देखना है, इसिलये हम कह सकते हैं कि जो सम्पूर्ण प्राणियोंको मित्रकी प्रेमदृष्टिसे देखते हैं वे अपने पेटके लिये उनका घात कैसे कर सकते हैं? मित्रकी प्रेमदृष्टि तो अपना प्राएग दूसरोंके लिये अपरण करायेगी; कभी ऐसा नहीं हो सकता है कि जिसपर प्रेम करना है उसीको अपने पेटके लिये काटा जाए। देखिये वेदके महासिद्धान्त—

 मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्, मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे, मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे,

(वाजसनेयिसंहिता ३६।१८)

मित्रकी दृष्टिसे मुक्ते सब प्राणी देखें,

मैं मित्रकी दिष्टिसे सब प्रािणयोंको देखता हूँ,
हम सब परस्पर मित्रकी दृष्टिसे देखेंगे।

- २. मित्रस्य वश्चक्षुषा समीक्षध्वम्—(मैत्रायग्गीसंहिता ४.६.२७) मित्रकी समान दृष्टिसे सबको देखो ।
- ३. प्रियः पश्नां भूयासम्—(ग्रथवंवेद १७.१.४) मैं सब पशुओंका प्यारा बनूँ।

४. हते हं ह मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्तां मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे। (यजुर्वेद ३६.१८)

ग्रथात्—(हते) हे समस्त दुःखों ग्रौर ग्रज्ञानोंके विदारक ! (मा दृंह) मुभे दृढ़कर। (मा) मुभको (सर्वाणि भूतानि) समस्त प्राणी (मित्रस्य चक्षुषा) मित्र-दृष्टिसे देखें, ग्रौर (अहम्) मैं भी (सर्वाणि भूतानि) सब प्राणियोंको (मित्रस्य चक्षुषा) मित्र-दृष्टिसे (समीक्षे) देखूँ। हम सब (मित्रस्य चक्षुषा) मित्र-दृष्टिसे (समीक्षामहे) एक दूसरेके प्रति भली प्रकार देखा करें।

यह वेदाज्ञा है। यहाँ केवल मनुष्योंको ही मित्र-दृष्टिसे देखनेका उपदेश नहीं है प्रत्युत सम्पूर्ण प्राणिमात्रको मित्रदृष्टिसे देखनेका उपदेश है। तो क्या ग्रपने मित्रको ही ग्रपने पेटके लिये मारना है? यदि मारना है तो मित्रदृष्टि किस कामकी ? ग्रर्थात् सब भूतों ग्रथवा सब प्राणियोंको मित्र-दृष्टिसे देखनेवाले इस वैदिक महासिद्धान्तको माननेवाले वैदिक लोग उनको काटकर खानेकी वातको कभी सोच भी नहीं सकते। इसलिये मानना पड़ेगा कि किसी बाह्य कारणसे आर्यवंशजोंमें मांसभोजन घुसा है। ग्रायोंका स्वाभाविक ग्रन्न शाकाहार ही है।

श्रीमद्भागवत महापुरारामें भी ऐसा ही वर्णन मिलता है—

मृगोष्ट्रखरमर्काखुसरीसृप्खगमक्षिकाः । स्रात्मनः पुत्रवत् पश्येत्तैरेषामन्तरं कियत् ।। (७.१४.६)

ग्रर्थात्—हरिण, ऊँट, गधा, बन्दर, चूहा, सरीपृप (रेंगकर चलनेवाले प्राणी), पक्षी और मक्खी ग्रादिको अपने पुत्रके समान ही समभें; उनमें ग्रौर पुत्रोंमें ग्रन्तर ही कितना है ?

### वेदमें आहिसा

वेदमें केवल गायकी ही ग्रहिंसा नहीं लिखी है, परन्तु सर्वसाधारण द्विपाद-चतुष्पादोंकी भी ग्रहिंसा लिखी है। सब भूतोंको मित्रदृष्टिसे देखनेका क्या वैदिक-कालमें मांसपरक यज्ञ म्रादि प्रचलित थे ? १५६ वेदमें श्रिहंसा

वेदका महासिद्धांत है। उसके साथ निम्नलिखित प्रमाणोंका विचार कीजिये—

यजमानस्य पश्न्न पाहि ॥ यजुर्वेद १.१॥
मा हिंसीस्तन्वा प्रजाः ॥ यजुर्वेद १२.३२॥
म्रावंः मा हिंसीः ॥ यजुर्वेद १२.४२॥
मा हिंसीः ॥ यजुर्वेद १२.४४॥
इमं मा हिंसीदिपदं पशुम् ॥ यजुर्वेद १२.४७॥
इमं मा हिंसीः वाजिनम् ॥ यजुर्वेद १२.४०॥
इममूर्णांयुं मा हिंसीः ॥ यजुर्वेद १२.४०॥
मा हिंसीः पुरुषम् ॥ यजुर्वेद १६.३॥
मा हिंसीः पुरुषम् ॥ यजुर्वेद १६.३॥
मा हिंसीः दुरुषम् ॥ यजुर्वेद १६.३॥

घोड़ा, वकरा, द्विपाद-चतुष्पाद पशु, ऊन देनेवाला तथा पुरुष—ग्रपने प्रजावर्गमेंसे किसीकी भी हिंसा न कर। ये मन्त्र, मित्रहष्टिवाले मन्त्रोंके साथ पढ़नेसे, वेदका ग्रहिंसापूर्ण उपदेश स्पष्ट सामने ग्रा जायगा। सर्वसाधारण प्राणियोंको मित्रदृष्टिसे देखो ग्रौर इन प्राणियोंकी हिंसा तो कभी भी न करो, यह वेदका उपदेश मनुष्योंके लिये है। इतना होते हुए भी कई यूरोपीयन समभते हैं कि वेदमें ग्रहिंसाका तत्त्व वैसा उत्कट नहीं है जैसा ग्रागे बढ़ गया है।

पण्डित धर्मदेव विद्यावाचस्पितने ग्रपनी पुस्तक 'वेदोंका यथार्थ स्वरूप' (प्रकाशक—गुरुकुल कांगड़ो, हिरद्वार) में वेदोंमें ग्रहिंसाके सम्बन्धमें पृष्ठ ४६८-४९९ पर सुन्दर विवेचन किया है, जिसका कुछ ग्रंश यहाँ उद्धृत किया जाता है—

बृहद्भिर्भानुभिर्भासन् मा हिसीस्तन्वा प्रजाः ॥ (यजुर्वेद १२.३२)

ग्रर्थात्—(बृहद्भिः भानुभिः) तू महान् ज्ञान किरणोंसे प्रकाशित हो ग्रौर (तन्वा) ग्रपने शरीरसे (प्रजाः मा हिंसीः) प्राणियोंकी हिंसा मत कर।

ये रात्रिमनुतिष्ठन्ति ये च भूतेषु जाग्रति । पशून् ये सर्वान् रक्षन्ति ते न ग्रात्मसु जाग्रति ते नः पशुषु जाग्रति ।। (ग्रथर्ववेद १९.४८.५) श्रर्थात्—जो धर्मात्मा रात्रिमें ध्यानादियोगाभ्यास करते हैं, सब प्राणियोंके विषयमें जो सदा सावधान रहते हैं; जो सब पशुग्राकी रक्षा करते हैं, वे हमारी ग्रात्माओंकी उन्तिके विषयमें भी जागरूक रहते हैं। वे इस बातका सदा ध्यान रखते हैं कि किसी पशुको हमारे ज्यवहारसे कष्ट न पहुँचे।

प्रियः पशूनां भूयासम्। (ग्रथर्ववेद १७.४)

ग्रर्थात्—मैं पशुग्रोंका प्यारा बनूँ। जो पशुग्रोंकी रक्षा करता है ग्रौर उन्हें प्रेमदृष्टिसे देखता है वही उनका प्रिय बन सकता है, न कि उन्हें मारनेवाला—यह बात स्पष्ट है।

यह माना जा सकता है कि जैन-बौद्धोंने जिस प्रकार आत्यन्तिक ग्रौर ऐकान्तिक ग्रहिंसा प्रचलित की वैसी वेदमें नहीं थी, लेकिन ग्रहिंसाका सिद्धान्त ही वेदमें नहीं था—यह कहना ग्रयुक्त है। वेद सर्वसाधारण ग्राचरणके लिये ग्रहिंसाका ही उपदेश दे रहा है, परन्तु प्रसंगविशेषमें युद्धादि प्रसंगोंमें वध करनेसे पीछे रहनेकी ग्राज्ञा भी नहीं देता, ग्रर्थात् वेदमें इसी प्रकारकी ग्रहिंसा है जो मानते हुए राष्ट्रीय महायुद्धमें ग्रावश्यक वधकी भी उसमें सम्भावना है। परन्तु कोई कहे कि ग्रपने पेटके लिये दूसरोंका बध किया जाय तो वैसी हिंसा करनेकी ग्राज्ञा वेद नहीं देता है। यह भेद पाठकों-को ग्रवश्य ध्यानमें धारण करना चाहिये। वास्तवमें देखा जाय तो वेदमें ही ग्रहिंसाका सच्चा सिद्धान्त है। तभी तो वेदोंको मानने वाले ग्रार्थ रास्ते चलते कीड़े-मकोड़ोंको भी बचानेकी चेष्टा करते हैं ग्रौर यदि कोई भूलसे दब भी जाय तो वे काँप उठते हैं और 'राम राम' करते हुए पीछे हटते हैं, ग्रपने घरमें ग्रण्डा देनेवाली चिड़िया-कबूतरोंकी भी रक्षा करते हैं।

#### गोमेघ पर विचार

श्राघुनिक बहुतसे लोगोंकी यह सम्मित है कि वैदिक समयके गोमेधमें गायकी हिंसा अवश्य होती थी। कलियुगमें गोमेध करनेका कलिवर्ज्य प्रकरणमें विणत प्रतिबंध इसकी सिद्धताके लिये वताते हैं। परन्तु ये लोग एक बात विल्कुल भूल जाते हैं कि पारसी लोगोंके जेंदावेस्ता नामक घर्मपुस्तकमें जो 'गोमेज यज्ञ' वैदिक गोमेधके सहश है, उसमें गौकी हिंसा

#### क्या वैदिक-कालमें मांसपरक यज्ञ ग्रादि प्रचलित थे ? गौके वैदिक नाम

838

विल्कुल नहीं ग्रौर उनके सोमयागमें भी हिंसा नहीं होती, केवल सोमवल्लीके रसका उपयोग किया जाता है। यूरोंपियन लोग तुलनात्मक विचार करते हैं, परन्तु जिस समय तुलनात्मक विचारसे ग्रहिंसा सिद्ध होती है, उस समय उस विचारको वे छोड़ देते हैं। यदि पारिसयोंका गोमेज गोवधके विना वन सकता है तो वैदिक ग्रायोंका गोमेध क्यों नहीं वन सकता?

'मेध' के लिये किसीको घात-पात करनेकी ग्रावश्यकता विल्कुल नहीं है, उदाहरएाके लिये हम 'गृहमेध, पितृमेध' शब्द सन्मुख रख सकते हैं। पितृमेधमें जैसा पिताका सत्कार ग्रभीष्ट है ग्रौर पिताके मांसके हवनकी ग्रावश्यकता नहीं होती; गृहमेधमें जिस प्रकार घरके ग्रारोग्य-रक्षणकी वातोंका विचार प्रधान होता है, उसी प्रकार 'गोमेध' में गौका सत्कार करना ग्रौर उसके ग्रारोग्यादिका विचार होना स्वाभाविक ही है। मनु भी कहते हैं—

ग्रध्यापनं ब्रह्मयज्ञः पितृयज्ञस्तु तर्पराम् । होमो दैवो बलिभौतो नृयज्ञोऽतिथिपूजनम् ॥ (मनुस्मृति ३.७०)

ग्रर्थात्—विद्या पढ़ाना ब्रह्मयज्ञ है, मातापिताग्रोंको संतुष्ट रखना 'पितृमेघ' है, होमहवन 'देवयज्ञ' है, कृमि कीटकोंके लिये ग्रन्नका समर्पण करना 'भूतयज्ञ' है, ग्रौर 'नरमेघ' ग्रतिथि-सत्कार है।

#### गौके वैदिक नाम

वैदिक कोश निघण्टुमें गौके नौ नाम दिये हैं, उनमें निम्नलिखित तीन नाम ग्रहिंसार्थक हैं—

- १. ग्रद्म्या (ग्र + द्न्या) = हनन करने ग्रयोग्य । ग्रह्तंव्या
- २. ग्रही (ग्र+ही) =हनन करने अयोग्य। ग्रहतव्या
  - ३. म्रदिति (म्र+दिति) = दुकड़े करने म्रयोग्य । म्रखंडनीया

ये तीनों नाम—गौकी हिंसा नहीं होनी चाहिये—यह बात स्पष्ट रीतिसे बता रहे हैं। पहिले यज्ञके नामोंमें ग्रहिंसा वताई, ग्रव गौके नामोंमें भी वही ग्रहिंसा है। गौके नाम स्वयं ग्रपने निज अर्थ से बता रहे हैं कि गौ

#### प्राचीन भारतमें गोमांस-एक समीक्षा

947

पवित्र है, इसलिये उसकी कभी हिंसा नहीं होनी चाहिये। यही ग्रर्थ प्रमाण मानकर महाभारतमें निम्न श्लोक लिखा है —

ग्रद्भवा इति गवां नाम क एता हन्तुमहंति । महच्चकाराकुशलं वृषं गां वालभेत्तु यः ॥ (म० भा० शांति पव ग्र० २६३)

ग्रर्थात्—भाई ! गौओंका नाम ही ग्रघ्न्या है ग्रर्थात् गौ हिंसा करने योग्य नहीं है, फिर इन गौग्रोंको कौन काट सकता है ? जो लोग गौको या बैलको मारते हैं, वे बड़ा ग्रयोग्य कर्म करते हैं।

#### यज्ञवाचक नाम

यज्ञवाचक नामों में 'ग्रध्वर' शब्द वेदों के ग्रनेक मन्त्रों में ग्राया है, विस्तार भयसे उन सबका उल्लेख यहाँ नहीं किया जा रहा है। इसका ग्रर्थ ही 'ग्र हिंसा' है। 'ध्वर' शब्द हिंसावाचक है (ध्वरा हिंसा तदभावो यत्र स ग्रध्वर:) उसका निषेध 'अध्वर' शब्दने किया है। यज्ञके नामोंमें ग्रहिंसावाचक 'अध्वर' शब्द होना सिद्ध कर रहा है कि यज्ञ मेध ग्रादिमें किसी भी प्रकार हिंसा होना उचित नहीं है। 'मेघ' (मेघृ हिंसासंगमने च) शब्द के तीन अर्थ हैं, 'बुद्धिवर्धन, संगतिकरण ग्रौर हिंसन'। मेध शब्दमें हिंसाकी गन्ध है, परन्तु 'वर्धन ग्रौर मिलाना' भी है । ग्रर्थात् 'गो-मेध' का शब्दार्थं होगा—(१) गोसंवर्धन, (२) गोसंगतिकरण ग्रौर (३) गोहिंसन पाठक ही विचार करें कि तीन ग्रर्थों मेंसे गोमेध में कौनसा ग्रर्थ लिया जा सकता है। म्रिहिसावाचक 'म्रघ्वर' (यज्ञ) शब्दके साहचर्य से गोहिंसन मर्थ एक ग्रोर (ग्रलग) करना पड़ता है ग्रौर शेष दो ग्रर्थ स्थान पर रह जाते हैं। गौको पालना, गौग्रोंको बढ़ाना ग्रौर गौसे अच्छे बच्चे पैदा करना 'cow breeding' का तात्पर्य यहाँ गोसंगतिकरण से है। गोमेधमें ये सब बातें ग्राती हैं ग्रौर गोवध नहीं ग्राता; यह यज्ञ के नामों का विचार करने से ही सिद्ध हो सकता है।

#### गोवध-निषेधक वचन

गां मा हिंसीरदिति विराजम् ॥४२॥ घृतं दुहानामदिति जनाय...मा हिंसीः ॥४६॥ ] (यजुवद १३) क्या वैदिक-कालमें मांसपरक यज्ञ ग्रादि प्रचलित थे ? श्रुगुष्मेय गौ

१६३

''तेजस्वी ग्रवध्य गौ है, इसलिये उसकी हिंसा न कर।

अवध्य गौ है और वह जनोंके लिये घी देती है, इसलिये गौकी हिंसा न कर।"

इस प्रकार गायकी हिंसा करना मना किया है, यह हिंसा न करने की ग्राज्ञा है।

### ग्रनुपसेय गौ

वेदका मत है कि ग्रन्य सव पदार्थों के लिये उपमा मिल सकती है, परन्तु गाय के लिये कोई उपमा नहीं है, इतने गायके उपकार मनुष्य जाति पर हैं, इस विषय में निम्नलिखित मन्त्र देखिये—

ब्रह्म सूर्यसमं ज्योतिद्यौः समुद्रसमं सरः । इन्द्रः पृथिब्ये वर्षीयान् गोस्तु मात्रा न विद्यते ।। (यजुर्वेद ३३.४८)

ग्रर्थात्—ज्ञान तेजके लिये सूर्यकी उपमा है, द्युलोकके लिये समुद्रकी उपमा है, तथा पृथ्वी बहुत बड़ी है तो भी उससे इन्द्र ग्रधिक समर्थ हैं, परन्तु (गो: मात्रा न विद्यते) गौके साथ किसीकी भी तुलना नहीं होती।

देखिये, वेद में गौका कितना महत्व वर्णन किया है। यद्यपि पृथ्वीके लिये भी गौ शब्द ग्राया है तथापि गायवाचक हो गौ शब्द इस मंत्रमें है ग्रौर यहां व्यक्त शब्दों द्वारा उसकी निरुपमेयता बतायी है।

#### गैसे लाभ

दुहामश्विभ्यां पयो ग्रघ्न्ये सा वर्धतां महते सौभगाय ॥ (ऋग्वेद १.१६४.२७)

'यह ग्रवध्य गौ ग्रिश्विनी देवोंके लिये दूध देवे और यह हमारे बड़े सौभाग्यके लिये बहुत बढ़े।' इस मंत्रमें (सा ग्रध्न्या वर्धताम्) यह ग्रवध्य गौ बढ़े—ऐसा कहा है, यह मंत्र विशेष मनन करने योग्य है। इसका ग्रथं मि॰ ग्रिफिथ करते हैं—and may she prosper to our high advantage—अर्थात्' हमारे लाभ के लिये गौ की वृद्धि हो।' जब इस मंत्र द्वारा यह बात सिद्ध हुई कि गौकी वृद्धिसे ही हमारा सौभाग्य बढ़ना है तो गौ काटने की सम्भावना ही कहाँ से हो सकती है ? गौ की संख्या और गौके गुणोंकी वृद्धि होने से मनुष्य का अगणित लाभ हो सकता है—यह बात वेद मुक्तकण्ठ से अनेक प्रकार से कह रहा है। गौका इतना महत्त्व वैदिक कालमें माना जाता था। इसलिये हम कह सकते हैं कि वैदिक कालमें गौकी उन्नति करने की ओर ही धार्मिक लोगों का प्रयत्न था। और देखिये—

सूयक्साद्भगवती हि भूया अयो वयं भगवन्तः स्याम । श्रद्धि तृग्गमघ्न्ये विश्वेदानीं पिब जुद्धमुदकमाचरन्ती ॥ (ऋ० १.१६४.४०)

ग्रर्थात्—गौ उत्तम घास खाकर (भगवती) भाग्यवती बने ग्रौर हम उस गौसे (भगवन्तः) भाग्यवान् या धनवान् हों। हे ग्रवध्य गौ, तू सदा (तृणं ग्रद्धि) घास ही खा ग्रौर (ग्रा-चरन्ती) वापस ग्राते समय (शुद्धं उदकं पिब) शुद्ध जल पान कर ।

गौको क्या खिलाना चाहिये वह इस मंत्रमें सुन्दर शब्दों द्वारा कहा है। गौ घास ही खावे, यदि गौ पालनी हो तो उत्तम घास उसे मिले—ऐसी व्यवस्था करनी चाहिये। उत्तम घास ग्रौर शुद्ध जल पीने वाली गौसे जो दूध ग्रा सकता है वही मनुष्यके लिये ग्रारोग्यवर्धक हो सकता है। पक्का ग्रन्न, धान्य, सड़े पदार्थ तथा मनुष्य की विष्ठा ग्रादि गौको खिलाकर जो दूध मिलता है वह उतना लाभदायक नहीं हो सकता। इस विषयमें निम्निलिखित मन्त्र ग्रवश्य देखिये—

यावतीनामोषधीनां गावः प्राहनन्त्यच्न्या यावतीनामजावयः । तावतीस्तुभ्यमोषधीः शर्म यच्छन्त्वमृताः ॥ (स्रथर्ववेद ८.७.२४)

अर्थात —जो-जो श्रौषिधयाँ सदा श्रवध्य गौवें खाती हैं श्रौर जो भेड़ बकरियां खाती हैं, वे सब श्रौपिधयाँ तेरा सुख बढ़ावें।

इसमें 'ग्रघ्न्या' शब्द का ग्रर्थ 'whom none may slaughter' ग्रथीत् जिनका कोई वध न करे, यह दिया है। यदि गौवाचक ग्रध्न्या शब्द का यह ग्रथं है ग्रौर उसका वध करना किसीको भी उचित नहीं तो फिर गोमांस-भक्षणकी प्रथा ग्रायोंमें थी—यह किस ग्राधारसे यूरोपीयन विद्वान् मानते हैं?

#### क्या वैदिक-कालमें मांसपरक यज्ञ म्रादि प्रचलित थे? १६४ यशमें पशु

### यज्ञमें पशु

यज्ञमें मनुष्य जो देवताग्रोंके उद्देश्यमें देता है, वह स्वयं खाता है, ऐसा मानकर यूरोपियन पण्डित लिखते हैं—

"The usual food of the Vedic Indian, as far as flesh was concerned, can be gathered from the list of sacrificial victums: what man at he presented to Gods—i.e. the sheep, the goat and the ox". (Vedic Index, Vol. II, p. 147, lines 10.13)

ग्रर्थात्-वैदिक समय का भारतीय मनुष्य कौन-सा मांस खाता था —यह देखना हो तो यज्ञीय पशुग्रोंकी नामावली देखें, मनुष्य जो खाता है वही देवताग्रोंको समर्परा करता है, ग्रर्थात् भेड़, वकरी, वैल ।

इसका मतलब यह है कि ये सब पशु मारकर खाये जाते थे। इसके बाद 'वैदिक इण्डैक्स' में जो लिखा है उससे लगता है कि यूरोपीय लोग यह मानते हैं कि ग्रह्मधमें घोड़ा मारा जाता था, परन्तु इनका कथन है कि वैदिक समयके ग्रार्य ग्रधिकतर घोड़ेका मांस नहीं खाते थे। यह यूरोपीयनों की कृपा है कि उन्होंने घोड़ेके मांससे ग्रार्योंको बचाया। नहीं तो जिसका यज्ञ होता था वह खाया जाता था ऐसा मानने पर ग्रौर यज्ञ-प्रक्रियामें घोड़ेको काटनेकी प्रथा थी ऐसा माननेसे ग्रार्योंका बच जाना कठिन बात थी। परन्तु 'वैदिक इण्डैक्स' पुस्तकमें घोड़ेका मांस खानेकी प्रथा नहीं थी, ऐसा स्पष्ट लिखा है' इसलिये हम उनको धन्यवाद देते हैं।

यदि योरोपके पण्डित यह अपवाद स्वीकार करते हैं कि नरमेधमें नर-बिल होने पर भी नर-मांस और अश्वमेधमें अश्व-बिल होने पर भी अश्व-मांस खाया नहीं जाता था तो इस वातको मानने में भी क्यों आपित्त है कि अन्य पशुओंका मांस भी नहीं खाया जाता होगा। अब रही बात वैदिक यज्ञमें पशु-बिलकी। इसका विवेचन वेदमें अहिंसा और यज्ञवाचक नाम उपशीर्षकोंके अन्तर्गत हो चुका है कि वैदिक यज्ञोंमें कोई हिंसा या पशु-बिल नहीं होती थी और वेदोंमें प्रायः सभी प्राणियोंकी हिंसा वर्जित है।

#### प्राचीन भारतमें गोमांस-एक समोक्षा

339

ग्रयवंवेदमें धान, चावल, तिल ग्रादि को ही पशु बताया है, जैसे-

ग्रश्वाः कराा, गावस्तण्डुला, मशकास्तुषाः (११.३.५) ग्रर्थात्—ग्रन्नके कराा ग्रश्व हैं, तण्डुल (चावल) गौवें हैं, तुष मशक (मच्छर) हैं।

धाना धेनुरभवद् वत्सोऽस्यास्तिलोऽभवत् (१८.४.३२) ग्रर्थात्—धान धेनु (गाय) बना, तिल उसका वत्स बना।

इससे यह प्रमािणत होता है कि जहाँ यज्ञ में घेनु ग्रादि की ग्राहुति के ग्रर्थमें वाक्य मिलते हैं वहाँ उनसे घेनु-पशु मांसका भाव नहीं है बल्कि ग्रन्न (जौ), तण्डुल, तिल ग्रादि है।

## यज्ञोंमें पशुग्रोंकी प्रदर्शनी

यहाँ यह बात भी उल्लेखनीय है कि 'मेधृ' धातुका संगमन रूप जो अर्थ है उसका समर्थन महाभारत ग्रादिके यज्ञ-विषयक ग्रनेक प्रकरणोंसे होता है। उदाहरणार्थ, महाभारत ग्रद्यमधपर्वमें निम्न वर्णन मिलता है (ग्रह्याय ग्रौर क्लोक संख्याके प्रथम ग्रंक गीताप्रेस संस्करणके हैं ग्रौर दूसरे भंडारकर इंस्टिच्यूटके)।

स्थलजा जलजा ये च पशवः केचन प्रभो।
सर्वानेव समानीतान् ग्रपश्यंस्तत्र ते नृपाः ॥ ६५.३२;६७.६॥
गाइचैव महिषीश्चैव तत्र वृद्धस्त्रियोऽपि च।
ग्रौदकानि च सत्वानि श्वापदानि वयांसि च॥ ६५.३३;६७.७॥
जरायुजाण्डजातानि स्वेदजान्युद्भिजानि च।
पर्वतानूपजातानि भूतानि दहशुश्च ते॥ ६५.३४;६७.६॥
एवं प्रमुदितं सर्वं पशुगोधनधान्यतः।
यज्ञवाटं नृपा हष्ट्वा परं विस्मयमागताः॥ ६५.३५;६७.६॥

ग्रर्थात्—यज्ञ-मण्डपमें जितने भी स्थल ग्रीर जलके पशु हैं, उन सबको लोगोंने लाया हुग्रा देखा। वहाँ ग्रनेक प्रकारकी गौएं थीं, भैंसें थीं,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

#### क्या वदिक-कालमें मांसपरक यज्ञ ग्रादि प्रचलित थे? १६७ यज्ञकी साची

वृद्ध स्त्रियाँ थीं, जलचर जन्तु और पक्षी थे। पर्वत ग्रीर ग्रनूपके स्वेदज, उद्भिज; जरायुज और ग्रण्डज जन्तु वहाँ एकत्रित किये गये थे। इस प्रकार पशु, गौ, धन ग्रौर धान्यसे भरपूर और ग्रानिन्दत यज्ञमण्डपको देखकर राजा ग्राश्चर्यको प्राप्त हुए।

इससे गोमेघ, नरमेघ, ग्रव्वमेघ, ग्रविमेघादिका प्रदर्शनीका रूप सवया स्पष्टतया सिद्ध होता है।

#### यजकी साक्षी

यज्ञमें मांस प्रयोग होना चाहिये या नहीं यह बात भिन्न है। हमारा मत है कि यज्ञ निर्मास ही होते थे परन्तु कुछ समयके लिये प्रचलित स-मांस यज्ञोंका ही विचार किया जाय, तो पता लगेगा कि भ्राजकलकी यज्ञकी वेदीके दो भेद हैं-

- (१) पूर्व-वेदी, ग्रौर (२) उत्तर-वेदी।

पूर्व-वेदीमें कई वेदियाँ हैं जिनमें केवल धान्यका ही हवन होता है श्रीर कभी मांसका संबंध नहीं ग्राता । केवल इस उत्तर-वेदीमें मांसका हवन होता है । यदि यह वेदी शब्दके विशेषणरूप—पूर्व ग्रौर उत्तर—ये दो शब्द 'पूर्वकाल' और 'उत्तरकाल' के वाचक मान लिये जायँ, तो स्पष्ट सिद्ध होता है कि पूर्व (कालकी) वेदीमें केवल धान्यहवन ही किया जाता था, स्रौर उत्तर (कालकी) वेदीमें बादमें मांस हवन होने लगा।

जिसमें ग्राजकल मांसका हवन किया जाता है उस वेदीका नाम उत्तर-वेदी ही है। उत्तरवेदीका ग्रर्थ स्पष्टरूपसे यही है कि उत्तर समयमें प्रचलित हुई वेदी ग्रर्थात् पूर्वकालमें यज्ञमें यह वेदी ही नहीं थी। जो वेदियाँ पूर्वकालमें थीं, वे 'पूर्ववेदियाँ' इस समयमें भी हैं। पूर्व-वेदियोंमें शुद्ध धान्यका ही हवन होता है और उत्तर-वेदीपर मांसका हवन होता है । इतना ही नहीं, ग्रपितु पहिले वेदियोंका धान्यहवन पूर्णतासे समाप्त करनेके पश्चात् ही इस मांसवेदीके कार्यका प्रारंभ होता है। यज्ञके पहिले दिनोंमें कभी भी मांसहवन नहीं होता, केवल धान्यहवन होता है, यज्ञके पश्चात्के दिनोंमें उत्तरवेदीमें ही मांस हवन करते हैं।

## प्राचीन भारतमें गोमांस—एक समीक्षा

इससे स्पष्ट सिद्ध होता है कि ग्रति प्राचीन कालका यज्ञ पूर्व-वेदियोंसे बताया जाता है जिसमें धान्यहवन ही है और पश्चात्के समयका हवन उत्तरवेदीके मांसहवनसे बताया जाता है यदि ब्राह्मण ग्रन्थोंके समय ये स-मांस यज्ञ प्रचलित थे—ऐसा किसीका मानना हो तो उसको यह बात ग्रवश्य माननी पड़ेगी कि इससे पूर्वकालमें यह प्रथा न थी ग्रीर उस समय निर्मास यज्ञ हो प्रचलित थे।

उत्तरकालमें समांस यज्ञ ग्रारम्भ हुये होगें तो मांस-लोलुप दुष्ट प्रकृतिके लोगोंको इस प्रवृत्तिको निरन्तर बनाये रखनेसे रोकनेके लिये यह विधान दिया गया होगा कि मांस खाना ही है तो केवल यज्ञमें खाओ, जिससे कि प्रतिदिनकी हिंसा तो बचे। श्रीमद्भागवतके निम्न क्लोकका भी यही भाव लगता है—

ते मे मतमविज्ञाय परोक्षं विषयात्मकाः। हिंसायां यदि रागः स्याद् यज्ञ एव न चोदना ॥ (श्रीम०भा० ११.२१.२६)

श्रर्थात्—मेरे परोक्ष मतको न जानकर उन विषयात्मक लोगोंका यदि हिंसामें ही राग हो तो यज्ञमें ही करें।

इससे स्पष्ट है कि यह कोई विधान नहीं है, अपनी विषय-लिप्सा पर रोक लगानेके निमित्त हो यह विधि दी गयी है, न कि कर्त्तव्य विधि।

इसके आगे वहीं लिखते हैं-

१६५

हिंसाविहारा ह्यालब्धैः पशुभिः स्वसुखेच्छया । यजन्ते देवतायज्ञैः पितृभूतपतीन् खलाः ॥ (श्रीम०भा० ११.२१.३०)

अर्थात्—हिंसा-विहारी लोग दुष्टतावश ग्रपनी सुखवासना (इन्द्रिय-तृष्ति) के लिये वध किये हुए पशुग्रोंके मांससे यज्ञ करके देवता, पितर तथा भूत-पतियोंके यजनका ढोंग करते हैं।

इसके पूर्व भी श्रीमद्भागवतमें स्पष्ट वताया है कि यज्ञमें मारे गये पशु यज्ञकर्त्ताकी मृत्युके वाद अपने मारने वालोंसे उसको खाकर बदला लेते हैं— क्या वैदिक-कालमें मांसपरक यज्ञ ग्रादि प्रचलित थे ?

किलवर्ज्य प्रकरण

ये त्वनेवंविदोऽसन्तः स्तब्धाः सदिभमानिनः । पश्चन् बुह्यन्ति विस्रब्धाः प्रेत्य खादन्ति ते च तान् ॥

(श्रीमद्भागवत ११.५.१४)

338

जो (पशोः ग्रालभनं न हिसा-श्रीम० भा० ११.५.१३) पशुका ग्रालभन-स्पर्शमात्र हो निहित है, हिसा नहीं) इस विशुद्ध धर्मको नहीं जानते वे घमंडी वास्तवमें तो दुष्ट हैं, परन्तु समभते हैं ग्रापनेको श्रेष्ठ । वे धोखेमें पड़े हुए लोग पशुग्रोंको हिसा करते हैं ग्रीर मरनेके बाद वे पशु ही उन मारनेवालोंको खाते हैं।

महाभारतमें भी, जिसको पांचवां वेद माना जाता है, यज्ञमें हिंसा वर्जित है—

इज्यायज्ञश्रुतिकृतैर्यो मार्गेरबुघोऽधमः । हन्याज्जन्तून् मांसगृध्नुः स व नरकभाङ्नरः ॥ (म. भा. श्रनुशासन पर्व १.१५.४३; ११६.४५)

श्रर्थात्—जो मांस-लोभी मूर्ख एवं श्रधम मनुष्य यज्ञ-याग ग्रादि वैदिक मार्गोंके नामपर प्राणियोंकी हिंसा करता है, वह नरकगामी होता है।

#### कलिवर्ज्य प्रकरण

कई लोगोंका कथन है कि 'कलिवर्ज्य प्रकरण' में ग्रह्वमेध, गोमेध ग्रादिका निषेध किया है इसलिये इस निषेधके पूर्व ग्रह्वमेध ग्रीर गोमेध होता था ग्रीर ग्रह्वमेधमें घोड़ेका मांस ग्रीर गोमेधमें गायका मांस खाया जाता था।

यहाँ प्रश्न होता है कि यह कि विजयं प्रकरण किसने लिखा ? ग्रौर किस ग्रंथमें लिखा है ? क्या माननीय प्रमाण ग्रंथमें इस वचनका ग्रस्तित्व है ? जो माननीय प्रमाणभूत स्मृतिग्रंथ हैं उनमें यह वचन नहीं है, इसिलय ऐसे कपोल-किल्पत प्रकरणसे कोई विशेष प्रवल अनुमान नहीं हो सकता है।

दूसरी बात यह है कि इस कलिवर्ज्य प्रकरणका समय निश्चित हो जानेसे सब बात स्पष्ट हो जाती है। हमारे विचारसे कलिवर्ज्य प्रकरण सात-ग्राठसौ वर्षके ग्रन्दर-ग्रन्दर का है। इसलिये इसके बलसे उसके पूर्वके सम्पूर्ण भूतकालका नियमन नहीं हो सकता है। यहाँ भी पूर्वकथित काल-विपर्यय दोष आ सकता है।

इसके ग्रतिरिक्त यदि माना भी जाय कि कलिवर्ज्य प्रकरणमें ग्रश्वमेध ग्रौर गोमेधका निषेध है तो भी इससे ग्रश्वमेध या गोमेधकी वैदिक रीतिका पता नहीं लग सकता है, इससे इतना ही सिद्ध हो सकता है कि इस कलिवर्ज्य प्रकरणके लिखे जानेके पूर्व ये स-मांस यज्ञ प्रचलित थे।

यज्ञों में वेदमंत्रों के समयके यज्ञों की ग्रपेक्षा ब्राह्मण ग्रौर सूत्रग्रंथों के यज्ञों में बहुत घट-बढ़ हुई है। जो बातें मंत्रसंहिताग्रों के यज्ञों में नहीं थीं वे बातें उनमें आकर घुस गई हैं, कारण यह है कि पूर्व-वेदी के हवन में मांस नहीं बरता जाता ग्रौर उत्तरवेदी के हवन में ग्रर्थात् पीछे घुसे हुए यज्ञक में मांसका हवन किया जाता है। यह ग्राजक लकी या यज्ञप्रयोगकी पुस्तक जिस समय लिखी गयी उस समयकी प्रया है। वैदिक प्रया तो वही है जो कि छंदो बद्ध मंत्रभाग में बताई है। इसलिये हम यहाँ प्रश्न पूछते हैं कि कौन से वेदमंत्रसे यह बात सिद्ध होती है कि वैदिक गोमे घमें गौकी हिसा की जाती थी, यदि वेदका एक भी मंत्र हो तो उसे सामने करें। प्रमाण के बिना मान ने के दिन बीत चुके हैं। हमें पता है कि बहुत से विद्धान् इस समय मान ते हैं कि गोमे घमें गौकी हिसा की जाती थी, परन्तु यहाँ विद्धान् मान ते हैं या अविद्धान् मान ते हैं, यह प्रश्न नहीं है। वेदमंत्रों में किस बात के प्रमाण-वचन मिलते हैं ग्रौर किस बात के प्रमाण-वचन नहीं मिलते, यही प्रश्न यहाँ है ग्रौर इसी का विचार हमें करना है।

#### मांस-भक्षोके लिये दण्ड विधान

मांस-भक्षण करने वाले ऋन्यादोंको वेद यातुधान (हिंसक राक्षस-वृत्तिका पुरुष) बताता है ग्रौर उन्हें दण्ड देनेका विधान करता है—

यः पौरुषेयेगा क्रविषा समङ्क्ते यो श्रद्भव्येन पशुना यातुधानः । यो श्रद्भवाया भरति क्षीरमग्ने तेषां शीर्षागि हरसापि वृदच ।। (ऋग्वेद १०.८७.१६)

#### क्या वदिक-कालमें मांसपरक यज्ञ श्रादि प्रचलित थे ? १७१ महाभारतका प्रमाण

इसका निर्देशांक ऋग्वेद ८.४.८.१६ कल्यागाके उपनिषदंक पृष्ठ १२४ पर दिया है।

ग्रथित् — जो पुरुषके मांसका सेवन करता है, जो घोड़ेका या ग्रन्य पशुका मांस खाता है ग्रौर गौग्रोंकी हत्या करके उनके दूधसे ग्रन्योंको वंचित करता है, हे राजन् ! यदि ग्रन्य उपायोंसे ऐसा यातुधान न माने तो ग्रपने तेजसे उसके सिर तकको काट डाल, यह ग्रन्तिम दण्ड है जिसको दिया जा सकता है।

या ग्रामं मांसमदन्ति पौरुषेयं च ये क्रविः। गर्भान् खादन्ति केशवास्तानितो नाशयामिस ॥ (ग्रथर्व० ८.६.२३)

इस मन्त्रमें कहा है कि जो कच्चा मांस खाते हैं, जो पुरुषों द्वारा पकाया हुग्रा मांस खाते हैं, जो गर्भरूप ग्रण्डोंका सेवन करते हैं, उनके इस दुष्ट व्यसनका नाश करो।

इस प्रकार यह सर्वथा स्पष्ट सिद्ध होता है कि वेदोंमें मांस-भक्षणका निषेध है।

#### महाभारतका प्रमाण

सुरा मत्स्या मधु मांसमासवं कृसरौदनम् । धूर्तैः प्रवर्तितं ह्य तन्नैतद् वेदेषु कल्पितम् ॥ (म.भा. शान्ति पर्व २६४.६;२५७.६)

ग्रर्थात्—सुरा, ग्रासव, मधु, माँस ग्रौर मछलो तथा तिल ग्रौर चावलकी खिचड़ी—इन सब वस्तुग्रों को धूर्तोंने यज्ञमें प्रचलित कर दिया है । वेदोंमें इनके उपयोगका विधान नहीं है ।

बीजैर्यज्ञेषु यष्टव्यमिति वै वैदिकी श्रुतिः । ग्रजसंज्ञानि बीजानि च्छागं नो हन्तुमर्ह्य ।। नैष धर्मः सतां देवा यत्र वध्यते वै पशुः । (म.भा. शान्ति पर्व ३३७.४-५; ३२४.४-५)

श्रर्थात्— यज्ञोंमें बीजों द्वारा यजन करना चाहिये, ऐसी वैदिकी श्रुति है। बीजोंका ही नाम अज है; श्रतः वकरेका वध करना हमें उचित नहीं है। जहाँ-कहीं भी यज्ञमें पशुका वध हो; वह सत्पुरुषोंका धर्म नहीं है।

#### प्राचीन भारतमें गोमांस-एक समीक्षा

१७२

#### मनुस्मृतिमें गोहिंसाकी जघन्यता

म्राचार्यं च प्रवक्तारं पितरं मातरं गुरुम् । न हिंस्याद् ब्राह्मगान् गांइच सर्वांइचैव तपस्विनः ।। (मनु० ४.१६२)

म्रथित्—म्राचार्य, (धर्मशास्त्रोंका) प्रवक्ता, पिता, माता, गुरु, ब्राह्मण, गाय ग्रौर तपस्वी—इनकी हिंसा न करे।

इस क्लोकमें कथित व्यक्तियोंकी हिंसा गोहिंसाके साथ गिनायी है, जिसका प्रकारान्तरसे यही भाव है कि गोहिंसा—ग्राचार्य, धर्मशास्त्रोंके वक्ता, पिता, माता, गुरु और ब्राह्मण—इनकी हिंसाके वरावर है।

## इसाई धर्ममें गोहिंसाकी जघन्यता

'He that Killeth an Ox is as if he slew a man' (Isaiah 66.3)

ग्नर्थात्—जिसने गोवंशकी हत्या की, उसने मानो मनुष्यकी हत्या की। (ग्रंग्रेजी कोशके ग्रनुसार 'Ox' शब्द गोवंशके नर ग्रौर मादा, दोनोंका वाचक है)

#### मुस्लिम धर्ममें गोमांस-निषेध

ग्रल गजाली (१०५८-११११ इस्वी) २८ वर्षकी ग्रवस्थामें बगदाद के इस्लामिया इंस्टिट्यूटके सर्वोपरि बनाये गये थे। उनके द्वारा लिखित ग्ररबी ग्रंथ इह्य उलुम ग्रल-दीन (धर्मका सार) को कुरानके बराबर ग्रादर दिया जाता है। इसका उर्दू ग्रनुवाद नवलिक्शोर प्रस लखनऊसे 'मजाकुल ग्रारिफन' नामसे प्रकाशित हुग्रा है। इस पुस्तककं सन् १६५५ के संस्करणके दूसरे खण्डके पृष्ठ २३, पंक्ति १७-१६ में गोमांसके दोष ग्रौर गोवृत तथा दुग्धके गुणके बारेमें लिखा है—

"गायका गोश्त (मांस) मर्ज (रोग) है, उसका दूध शफा (श्रारोग्य) है श्रीर उसका घी दवा है।"

## ''उश्चान्न'' और ''वग्नान्न'' का अर्थ एवं गौका बन्ध्यत

श्रँग्रेजी भाषाकी पुस्तक ''वैदिक इण्डैक्स'', खण्ड २, पृष्ठ १४५ पर मैकडोनेल ग्रौर कीथ महोदय 'मांस' शीर्षकके ग्रन्तर्गत लिखते हैं—

"The eating of flesh appears as something quite regular in the Vedic texts, which show no trace of the doctrine of Ahimsa, or abstaining from injury to animals. For example, the ritual offering of flesh contemplates that the Gods will eat it, and again the Brahmanas ate the offerings. (Footnote—So Agni is called eater of Ox and Cow in RV. VIII. 43.11)

ग्रथात्—वैदिक ग्रंथोंमें मांस खानेका नियमपूर्वक उल्लेख मिलता है, जिससे स्पष्ट है कि ग्रहिंसा सिद्धांतका या पशु-हिंसा-वर्जन का नाम-निशान भी नहीं है। उदाहरणके लिये शास्त्रीय विधिमें मांस-समर्पणका भाव यह है कि देवता लोग मांस खायंगे ग्रौर फिर ब्राह्मण लोग उसको खाते थे। (पाद-टिप्पणी—इसीलिये ग्रग्निका नाम बैल खानेवाला (उक्षान्न) ग्रौर गाय खानेवाला (वशान्न) ऋग्वेद 5.४३.११ में दिया है।)

ऐसी ही बात वी. एस. ग्राप्टे महोदयने ग्रंग्रेजी भाषाकी पुस्तक 'वैदिक काल' के ग्रध्याय १६ में पृष्ठ ३८६ पर लिखी है जिसका उल्लेख 'विवाह प्रसंगमें गोहत्या ग्रौर गोमांस' शीर्षकमें ग्रा गया है।

## लुप्ततद्धित प्रक्रिया—अंशके लिये पूर्णका प्रयोग

स्वर्गीय पं० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर 'गो-ज्ञान-कोश' प्राचीन खण्ड—वैदिक विभाग, प्रथम खण्ड, पृष्ठ १३ पर 'लुप्त-तद्धित-प्रिक्रया' समभाते हुए लिखते हैं—

#### प्राचीन भारतमें गोमांस-एक समीक्षा

808

वेदमंत्रोंमें कई ऐसे मंत्र हैं कि जहाँ शब्दार्थसे कुछ तात्पर्य ग्रौर प्रतीत होता है। उदाहरणके लिये देखिये—

## गोभिः श्रीगात मत्सरम् । (ऋग्वेद ६.४६.४)

इसका शब्दार्थ यह है—(गोभिः) गौओंके साथ (मत्सरं) सोम (श्रीगीत) पकाग्रो। ऐसे मंत्र देखकर लोग भ्रममें पड़ते हैं कि यह गोमांसके साथ सोम पकानेकी या मिलानेकी ग्राज्ञा है। परन्तु यह व्याकरणके ग्रज्ञानके कारण भ्रम उत्पन्न होता है। व्याकरणके तद्धित-प्रत्ययके साथ ग्रच्छा परिचय हुग्रा तो यह भ्रम नहीं हो सकता। इस विषयमें श्री यास्काचार्यका कथन देखिये—

ग्रथाप्यस्यां ताद्धितेन कृत्स्नवन्निगमा भवन्ति 'गोभिः श्रीगोत मत्सरमिति' पयसः । (निरुक्त २.५)

''तद्धित-प्रत्यय होनेके समान ग्रंशके लिये संपूर्णका प्रयोग किया जाता है, उदाहरण 'गोभिः श्रीणीत मत्सरं' इसमें 'गौ' शब्दका ग्रर्थ 'दूध' है।'' इसी विषयमें यास्काचार्यका ग्रौर कथन सुनने योग्य है—

" 'ग्रंशुं दुहन्तो ग्रध्यासते गवि' इत्यधिषवगाचर्मगाः । ग्रथापि चर्म च क्लेष्मा च 'गोभिः सन्तद्धो ग्रसि वीलयस्व' इति रथस्तुतौ । ग्रथापि स्नाव च श्लेष्मा च 'गोभिः सन्तद्धा पतित प्रसूता' इतीषुस्तुतौ ॥१.५॥ ज्याऽपि गौरुच्यते । गव्या चेत्ताद्धितम्, ग्रथ चेन्न गव्या गमयतीषून् इति । 'वृक्षे वृक्षे नियतामीमयद्गौस्ततोव्यः प्रपताद् पूरुषादः' ।'' (निरुक्त २.५)

इस वचनमें वेदके तीन मंत्र देकर श्रीयास्काचार्यजीने वताया है कि 'चर्म, सरेस, ताँत तथा धनुषकी डोरी' इतने ग्रर्थ 'गो' शब्दके हैं ग्रर्थात् यहाँ ग्रंशके लिये संपूर्णका प्रयोग किया है।

Dr. Arthur Anthony Macdonell and Dr. Arthur Berriedale Keith ने भी Vedic Index, Vol. I के पृष्ठ २३४ पर इस बातको स्वीकार किया है—

"उक्षान्न" ग्रीर "वशान्न" का ग्रर्थ एवं वशा गौ का बन्ध्यत्व १७५ 
छप्तति इति प्रक्रिया—श्रंशके लिये पूर्णका प्रयोग

"The term GO is often applied to express the products of the cow. It frequently means the milk, but rarely the flesh of the animal. In many passages it designates leather used as the material of various objects, as a bowstring, or a sling, or thongs to fasten part of the chariot, or reins, or the lash of a whip."

पर्यात्—'गो' शन्द प्रायः गोसे उत्पन्न वस्तुग्रोंके लिये व्यवहृत हुग्रा है। वहुत स्थानोंपर इसका दुग्धके ग्रथंमें प्रयोग हुग्रा है, बहुत कम जगहपर इसका पशु-शरीरके मांसके ग्रथंमें प्रयोग हुग्रा है (ऋग्वेद दशम मण्डल १६।७-शवदाह क्रियामें—'शव-दाहमें गोहिंसा' शोर्षक विवेचन देखिये)। बहुतसे वाक्योंमें ग्रनेक वस्तुग्रोंके उपयोगमें ग्राने वाले चर्म के लिये, जैसे—धनुषकी डोरी, या ताँत, या रथ बाँधनेकी चर्मडोरी, या लगाम, या चाबुककी डोरीमें—'गौ' शब्दका उपयोग हुग्रा है।

ग्रांख देखता है ऐसा कहनेके स्थानपर मनुष्य देखता है ऐसा सब बोलते हैं इसी प्रकार गोसे उत्पन्न होनेवाले दूध, दही, घी, चर्म, सरेस, तांत ग्रीर तांतकी बनी डोरी ग्रादि सब पदार्थोंके लिये वेदमें एक ही 'गो' शब्दका प्रयोग हुन्ना है। ऐसे प्रसंगोंमें पूर्वापर सम्बन्धसे ही ग्रर्थ करना चाहिये। पाठकोंकी सुविधाके लिये यहाँ हम इनके एक-एक उदाहरण देते हैं—

ग्रंशुं दुहन्तो ग्रध्यासते गवि । (ऋ० १०.६४.६)

(ग्रंशुं) सोमका रस (दुहन्तः) दोहन करते हुए (गवि) चर्मपर (ग्रध्यासते) बैठते हैं।

Ralph T. H. Griffith ने भी इन शब्दोंका ऐसा ही ग्रर्थ किया है जिसमें 'गवि' का ग्रयें चर्म लिया है जैसे—

'draining the stalk they sit upon the Ox's hide.' ग्रीर देखिये—

> वनम्पते वीड्वंगो हि भूया ग्रस्मत्सखा प्रतरणः सुवीरः । गोभिः सन्नद्धो ग्रसि वीलयस्वास्थाता ते जयतु जेत्वानि ॥ (ऋ॰ ६.४७.२६)

"है (वनस्पते) वृक्षसे बने हुए रथ, तू (वीड्वंगः) दृढ़ ग्रवयवोंवाला हमारा सहायक (प्रतरणः) पार ले जाने वाला ग्रौर (सुवीरः) सुवीरोंसे युक्त हो। तू (गोभिः सन्तद्धः) चर्मकी रिस्सयोंसे बांधा हुग्रा (वीलयस्व) वीरता दिखा, (ते श्रास्थाता) तेरे ग्रन्दर बैठनेवाला (जेत्वानि जयतु) जीतने योग्य शत्रुको जीते।"

इस मंत्रमें ग्रंशके लिये पूर्णंका प्रयोग करने के दो उदाहरण हैं— (१) 'गो' शब्द चमड़ेकी डोरीका वाचक है ग्रौर (२) 'वनस्पति' (वृक्ष) शब्द वृक्षसे बने हुए रथका वाचक है। जिस प्रकार वृक्षसे लकड़ी ग्रौर लकड़ीसे रथ बनता है, उसी प्रकार गौसे चमड़ा ग्रौर चमड़ेसे डोरी बनती है। इसी प्रकार गौसे दूध, दूधसे दही, दहीसे मक्खन ग्रौर मक्खनसे घी बनता है ग्रौर उक्त कारणसे ही इन सब पदार्थों के लिये 'गो' शब्द प्रयुक्त होता है। ग्रब ग्रौर दूसरा उदाहरएा देखिये—

सुपर्ण वस्ते मृगो अस्या दन्तो गोभिः सन्तद्धा पतित प्रसूता। (ऋ० ६.७४.११)

'यह बाएा (सु-पर्एं) उत्तम परोंसे (वस्ते) युक्त है, इसकी (दन्तः मृगः) नोक मगकी हड़ीकी बनी है और यह (गोभिः सन्तद्धा) गोचर्मके बने बारीक घागोंसे अच्छी प्रकार बांधा है यह (प्रसूता) धनुषसे छूटा हुआ शत्रुपर (पतित) गिरता है।'

इस मंत्रमें भी ग्रंशके लिये पूर्णका प्रयोग होनेके उदाहरए हैं। एक 'मृग' शब्द 'मृगकी ग्रर्थात् हरिएाकी हड्डीका वाचक है। मृगकी हड्डी कहनेके स्थानपर केवल 'मृग' ही कहा है। इसी प्रकार ग्रागे जाकर चर्मसे बनी डोरियों का वाचक शब्द 'गोभिः' है। यह शब्द भी गोचर्म की डोरीके लिये प्रयुक्त हुग्रा है। इसी प्रकार निम्न मंत्रमें देखिये—

वृक्षे वृक्षे नियतामीययद्गौस्ततो वयः प्रपतान्पूरुषादः ॥ (ऋ० १०.२७.२२)

(वृक्षे-वृक्षे) लकड़ीसे बने प्रत्येक धनुषपर (नियता गौः) तनी हुई गोचर्मकी डोरी—ज्या (श्रमीमयत्) शब्द करती है (ततः) उससे (पूरुषादः) मनुष्योंको खानेवाले (वयः) पक्षियोंके पर लगे हुए बागा (प्रपतान्) शत्रु नर गिर जाते हैं।

#### 'उक्षान्न' स्रौर 'वशान्न' का स्तर्थ एवं वशा गौका वन्ध्यत्व वशान्न का अर्थ

इस मंत्रमें तीन शब्द ग्रंशके लिये पूर्णका प्रयोग होनेके हैं। (१) 'वृक्ष' शब्द वृक्ष या लकड़ीसे बने हुए धनुषका वाचक है,

(२) 'गो' शब्द गोचर्म से बने हुए धनुषकी डोरीका वाचक है, ग्रौर

(३) 'वयः' (पक्षी) शब्द उनके पंख लगे वाणोंका वाचक है।

पाठक इतने उदाहरणोंसे समक्त गये होंगे कि वेदकी यह शैली ही है कि ग्रंशके लिये पूर्णका प्रयोग हो। यह प्रयोग यदि केवल गौके लिये ही होता तो कोई कह सकते थे कि खींचातानीकी बात है, परन्तु यहाँ तो ग्रन्य वस्तुग्रोंके लिये भी ऐसे ही प्रयोग हैं ग्रीर ढाई सहस्र वर्षोंके पूर्व ये उदाहरण देकर यही बात श्रीयास्काचार्यजीने बताई है। उक्त उदाहरणोंका समीकरण यह है—

१ 'वनस्पति' शब्द उसकी लकड़ीसे बने रथ के लिये,

२ 'वृक्ष' शब्द उसकी लकड़ीके बने धनुषके लिये,

३ 'गो' शब्द उससे बने दूध, घी ग्रादि के लिये,

४ ,, शब्द उसके चर्म, चर्म-पदार्थ ग्रादि के लिये,

५ ,, शब्द उसके चर्मसे बने डोरी, बंग ग्रादि के लिये,

६ 'मृग' शब्द उसकी हड्डीसे बने शस्त्रका द्योतक है,

७ 'वयः' शब्द उस पक्षीके परोंसे बने बाणोंका वाचक है।

इस प्रकार अनेक उदाहरए। दिये जा सकते हैं, परन्तु यहाँ उतने ही दिये गये हैं जितने स्वयं श्रीयास्काचार्यने अपने निरुवत ग्रंथमें दिये हैं। इनको देखनेसे पाठक समभ जायंगे कि यह वैदिक शैली ही है। अतः वेदमें हव्य पदार्थों अप्रक्षमें आये हुए 'गो' आदि शब्दका तात्पर्य उसके दूध, दही, घी ही समभे जाने चाहिये।

#### (वशान्न' का ग्रथं

श्रव यह बात रही कि श्रिग्निके नामों में जो 'उक्षान्न' श्रीर 'वशान्न' शब्द श्राये हैं उनका तात्पर्य क्या है ? यूरोपियन लोग मानते हैं कि 'उक्षान्न' का तात्पर्य बैलका मांस श्रीर 'वशान्न' का श्रर्थ गोमांस है। जिस कारण ये नाम श्रिग्न के लिये वेदमें श्राये हैं उस कारण श्रिग्निमें ये मांस डाले जाते

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

91919

थे ग्रौर खाये भी जाते थे। यह यूरोपियनोंका मत है। ग्रिग्निक नामोंसे यदि मनुष्यके भोजनकी कल्पना की जाय तो ग्रिग्निकानाम 'विश्वाद' है, उसका ग्रर्थ 'सर्वभक्षक' है। देखिये—

> युवानं विश्पति कींव विश्वादं पुरुवेषसम् । ग्राग्निं शुम्भामि मन्मभिः ।। (ऋ० ८.४४.२६)

'में तरुगा, जगत्पति, कवि, (विश्व-ग्रदं) सर्वभक्षक, बहुत हलचल करनेवाले ग्रग्निकी उत्तम विचारोंसे प्रशंसा करता हूँ।'

इस मन्त्रमें 'विश्वादं' शब्द ग्रग्निके लिये प्रयुक्त हुग्रा है। ग्रग्नि (विश्व) सर्व (ग्रद) भक्षक है, इससे—मनुष्य सर्वभक्षक था, वैदिककालके मनुष्य सर्वभक्षक थे—ऐसे ग्रनुमान निकालना ग्रयोग्य है। अग्नि सर्वभक्षक है, उसमें जो डाला जाय वह भस्म करता है, परन्तु इससे यह कसे सिद्ध हो सकता है कि उतनी चीजें मनुष्य ग्रवश्य खाता था।

सप्त वृक्षोंको सिमधाएँ ग्रिग्निमं डाली जाती हैं तो क्या इससे ग्राम्र, खिदर, बिल्व, पलाश, वट, ग्रकं आदिकी लकड़ियाँ भी वैदिक ग्रायं खाते थे, यह ग्रनुमान हो सकता है ? ग्रनुमान निकालनेकी यह भयानक रीति होगी। इसलिये 'उक्षान्न ग्रौर वशान्न' शब्द ग्रिग्निवाचक वेदमें हैं. इससे बैल ग्रौर गायका मांस वैदिक ग्रायं खाते थे, ऐसा कहना ग्रनुचित होगा।

पूर्व स्थानपर 'एकदेशके लिये सम्पूर्ण'का ग्रहण होता है यह बात बता दी है, उसी नियमके ग्रनुसार 'वशान्न' शब्दका ग्रर्थ 'गौसे उत्पन्न होने-वाले दूध, घी ग्रादि पदार्थ खानेवाला ग्रग्नि' ऐसा होता है। इस विषयमें ग्रौर उदाहरण देखिये—

ऋ॰ १.१३७.१ में 'गोश्रीता' 'गवाशिरः' ये शब्द हैं। ये 'सोम' के विशेषण हैं। इनका शब्दार्थं है (गो) गायसे (श्रीता) मिश्रित, तथा (गो) गायसे (श्राश्रितः) मिश्रित । इन दोनों शब्दों में गो शब्द है, परन्तु यहाँ कोई भी गोमांस नहीं लेते, श्रिपतु गायका दूध ही लेते हैं। मि॰ ग्रिफिथने 'गवाशिरः' का अर्थं Bent with milk अर्थात् 'दूधसे मिश्रित' ऐसा किया है। सोमरसमें गायका दूध मिलाकर बड़ा मधुर पेय बनाया जाता है यह बात सब जानते इही हैं।

#### 'उक्षान्न' ग्रौर 'वशान्न' का ग्रर्थ एवं वशा गौका वन्ध्यत्व सोमके साथ मिश्रणकी वस्तुएँ और उत्तानका अर्थ

308

श्रीसायणाचार्यजी भी 'गोश्रीता, गवाशिरः' शब्दोंके विषयमें इस प्रकार भाष्य करते हैं—''विकारे प्रकृतिशब्दः । पयोभिः मिश्रिताः । गोभिः क्षीरै: आशिरो मिथिताः संजाताः।'' (ऋ० १.१३७.१-२) - अर्थात् यहाँ गो शब्दसे दूध लिया जाता है, उससे मिश्रित सोम यहाँ इन शब्दोंसे बताया जाता है।

सोमके साथ मिश्रराकी वस्तुएँ ग्रीर 'उक्षान्न' का ग्रर्थ

सोमके साथ निम्न पदार्थीका मिश्रण करनेकी सूचना वेदमंत्रोंमें दी है-

१ गवाशिरः —गो दुग्धसे मिश्रित सोम । (ऋ० १.१३७.१) २ गोश्रीता —गो दुग्धसे मिश्रित सोम । (ऋ० १.१३७.१)

दध्याशिरः -गोके दहीसे मिश्रित सोम । (ऋ० १.१३७.२)

यवाशिरः - भूने जोके ग्राटेसे मिश्रित सोम। (ऋ० १.१८७.६)

४ ज्याशिरः — दूध, दही ग्रौर भूने हुए धानसे मिश्रित सोम। (ऋ० ४.२७.४) Mixed with milk, curds & parched grain' मि० ग्रिफिथ)

६ रसाशिरः -रसोंसे मिश्रित सोम। (ऋ० ३.४८.१)

सोमके साथ कितने पदार्थ मिलाये जाते थे, यह बात यहाँ स्पष्ट हो गयी है। सोममें मांस या रक्त मिलानेकी बात कहीं भी नहीं है, यह पाठक ग्रवश्य ध्यानमें धारण करें।

सोमका नाम वेदमें 'उक्षा' भी ग्राता है। उक्षा शब्दका धात्वर्थ (Sprinkling) सिंचन करनेवाला है। सोमसे रसकी बूंदें निकलती हैं इस कारण उसको उक्षा कहते हैं। पूर्व वेदीमें सोमरसका हवन होता है। इसलिये सोम ग्रग्निका ग्रन्न है, यही भाव 'उक्षान्न (सोम ही ग्रन्न)' शब्दमें है। बैल भ्रर्थ यहाँ अपेक्षित नहीं है क्यों कि बैलके मांसका हवन होता ही नहीं ; फिर वह अग्निमें जाय कहाँ से।

उक्षाका सोम ग्रर्थका विशेष विवेचन 'क्या बृहदारण्यक उपनिषद्में गोमांसका विधान है ?' शीर्षक प्रबन्धमें देखिये।

#### प्राचीन भारतमें गोमांस - एक समीक्षा

250

इन तर्कोंसे यह सिद्ध होता है कि ग्रग्निका नाम 'उक्षान्न' ग्रौर 'वशान्न' बैल या वशा-गायका मांस खानेवाला नहीं है, बल्कि उक्षासे ग्रौर वशा गायसे मिल सकनेवाली ग्रन्य वस्तुग्रोंका खानेवाला है, जैसे—

उक्षा म्रर्थात् सोमसे मिलनेवाला सोमरस खानेवाला अग्नि म्रथवा उक्षा—बेलसे कृषि द्वारा उत्पन्न धान्यका खानेवाला अग्नि; म्रथवा उक्षा जैसा बल देनेवाले धान्यको खानेवाला म्रग्नि; म्रौर वशा-गायसे उत्पन्न दूधसे बने पदार्थ पायस, घी म्रादि खानेवाला म्रग्नि ।

मोनियर विलियम्स संस्कृत-ग्रंग्रेजी कोशमें 'वश' का ग्रर्थ पृष्ठ ६२६, कालम २ में will, wish, desire RV. etc. etc.—इच्छा ऋग्वेदमें) वशान् ग्रनु या ग्रनुवशान् का ग्रर्थ – according to wish or will, at pleasure—यथेच्छ, इच्छानुसार—इस प्रकार दिया हुग्रा है।

#### ऋग्वेद ८.४३.११ का ग्रर्थ

ग्रिग्निके उक्षान्न ग्रौर वशान्त खानेवाला नामसे जो लोग बैल ग्रौर गायका मांस खानेवाला करते हैं, वे ऋग्वेद ८.४३.११ मन्त्रका प्रमाणमें उल्लेख करते हैं। मूल मन्त्र इस प्रकार है—

# उक्षान्नाय वशान्नाय सोमपृष्ठाय वेधसे । स्तोमैविधेमाग्नये ॥ (ऋ॰ ५.४३.११)

इसका भाष्य चारों वेद-संहिताके भाष्यकार पं० श्रीजयदेव शर्मा, विद्या-लंकार, मीमांसातीर्थं ने इस प्रकार किया है—

- (१) हम (उक्षान्नाय) वीर्यसेचनमें समर्थ ग्रन्न खानेवाले ग्रौर (वशान्नाय)
  यथेच्छ ग्रन्नके भोगनेवाले, (सोम-पृष्ठाय) वीर्यस्वरूप (ग्रग्ने)
  ग्रग्निवत् ग्राकाशस्वरूप ग्रात्माका (स्तोमैः) वेद मन्त्रों द्वारा
  (विवेम) प्रतिपादन ग्रौर ज्ञान करें।
- (२) 'उक्षाः' जल सेचक, नाना लोकोंको वहन करनेवाले, सूर्यादि और 'वशा' सर्व वशकारिग्गी शक्तिका स्रन्नवत् उपभोग करने वाले (सोम-पृष्ठाय) सर्व प्रेरक, परमैश्वर्यवान् (विधसे) जगत् विधाता (स्रग्नये) अग्निवत् तेजोमय परमेश्वरकी हम (स्तोमैः) स्तुति वचनोंसे (विधेम) परिचर्या और स्तुति-उपासना करें।

#### 'उक्षान्न' ग्रौर 'वशान्न' का ग्रर्थ एवं वशा गौका वन्ध्यत्व वशा गौका वन्ध्यत्व

#### वशा गौका वन्ध्यत्व

इसका स्पष्टीकरण स्वर्गीय पं० श्रीपाद दामोदर सातवलेकरने अपने 'गो-ज्ञान-कोश', प्राचीन खण्ड—वैदिक विभाग, प्रथम खण्डके पृष्ठ ७८-८० पर किया है जिसको यहाँ उद्धृत किया जाता है।

लौकिक संस्कृतमें वन्ध्या गौको वशा कहते हैं। यही ग्रथं इन सूक्तोंमें लगाकर, ये वन्ध्या गौके सूक्त हैं, ऐसा मानकर कइयोंने यहाँ तक माना है कि, वन्ध्या गौका वध करके, उसके ग्रंग प्रत्यंगों का हवन करना भी इन सूक्तों द्वारा सिद्ध हुग्रा है। हमारे मतसे यह ग्रत्यधिक खींचातानी है, इसलिये हमको पहिले यह देखना चाहते हैं कि, क्या 'वशा' पद इन सूक्तोंमें दूध न देने वाली वन्ध्या गौका दर्शक है या दुधारू गौका वाचक है। देखिये निम्निलिखत वाक्य क्या बताते हैं—

#### (ग्रथर्ववेद १०।१०)

- वशां सहस्रधारां अवदामिस ॥४॥
   हजारों घाराग्रोंसे दूध देनेवाली वशा गौकी हम प्रशंसा करते हैं।
- २. शतं कंसाः शतं दोग्धारः शतं गोप्तारो श्रिध पृष्ठे श्रस्याः ॥५॥ इस वशा गौके पीछे सौ गोपालनकर्त्ता, सौ दोहन करनेवाले श्रौर सौ दूघके लिये बर्तन लिये खड़े रहते हैं।
- ३. इराक्षीरा "वशा ॥६॥ दूधरूपी म्रन्न देनेवाली वशा गौ है।
- ४. ऊधस्ते भद्रे पर्जन्यः "वशे ७॥॥ वशा गौका दुग्धाशय पर्जन्यका रूप है।
- पूर. धुक्ते अक्षीरं वशे त्वम् ॥ द्वा हो । हे वशा गौ, तुम दूध देती हो ।
- द. ते "पयः क्षीरं "ग्रहरद्वशे ॥१०॥वशा गौके दूधका हरण किया।
- ७. ते अंशिरं म्रहरद्वशे अति पात्रेषु रक्षति ॥११॥ वशा गौका दूध हरए। करके तीन पात्रोंमें रख दिया है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

१८१

## १६३ प्राचीन भारतमें गौमांस एक समीक्षा

- दः सर्वे गर्भादवेपन्त ''' असूस्वः। ससूव हि तामाहुर्वशेति ॥२३॥ गर्भघारण न करनेवाला गौको जब गर्भघारणा होती है, तब सबको भय होता है।
- ह. रेतो ग्रभवद्वशायाः। "ग्रमृतं तुरीयम् ॥२६॥ वशा गौका वीर्य ग्रमृतह्रप दूध ही है।
- १०. वशाया दुग्धमिपबन्त्साध्या वसवश्च ये ॥३०॥
  साध्य ग्रौर वसु-देव यज्ञमें वशा गौ का दूध पीते हैं।
- ११. वशाया दुग्धं पीत्वा साध्या वसवश्च ये।
  ते वं ब्रध्नस्य विष्टिष पयो अस्या उपासते।।३१।।
  वशा गौका दूध पीकर साध्य और वसुदेव स्वर्गमें इस दूधकी ही
  प्रशंसा करते बैठते हैं।
- १२. एनामेके दुहे घृतमेक उपासते ॥३२॥ इस गौका दूध एक निकालते हैं और दूसरे घृतके पास रहते हैं ॥ (अथर्ववेद १२।४)
- १३. उभयेन ग्रस्मै दुहे ॥१८॥ यह गौ (ग्रोभर ग्रौर थन) दोनोंसे दूध देती है।
- १४, सुदुघा वका इहे ॥३४॥ वशा गौ दोहन करनेके लिये सुलभ है।
- १४. प्रवीयमाना "वशा ॥३७॥ वशा गौ गर्भवती होती है ।
- १६. गोपतये वज्ञाददुषे विषं दुहै ।।३६।। दान न करनेवाले गौके स्वामीको वह वज्ञा गौ मानो विष ही दुहती है।
- १७. वशायास्तित्प्रयं यद्देवत्रा हिवः स्यात् ॥४०॥ वशा गौके लिये वह प्रिय है कि, जो इसके दूध का हवन हो जाय।

ग्रथवंवेद १०.१०.२३ (ऊपर उद्धृत क्रम-संख्या ६) के ग्रनुसार ऐसा ग्रनुमान होता है कि 'वशा' गौ साधारणतया प्रसव नहीं करती, ग्रतः जब कभी उसको गर्भधारण होता है तो पालकोंको भय होने लगता है। अथवंवेद १२.४.३७ (ऊपर उद्धृत क्रम-संख्या १५) के ग्रनुसार यदा-कदा

#### 'उक्षान्न' ग्रौर 'वशान्न' का ग्रर्थ एवं वशा गौका बन्ध्यत्व १८३ वशा गौका वन्ध्यत्व

वशा गौ गर्भवती भी होती है ग्रौर प्रसव भी करती है। ग्रथवंवेदका यह पूरा मन्त्र इस प्रकार है—

प्रवीयमाना चरित कुद्धा गो<mark>पतये वशा।</mark>

वेहतं मा मन्यमानो मृत्योः पाशेषु बध्यताम् (ग्रथर्व० १२.४.३७) श्रीसातवलेकरजीने इसका ग्रथं इस प्रकार किया है—

(प्रवीयमाना) सन्तान उत्पन्न करनेवाली (वज्ञा) वशा गौ (गोपतये) ग्रपने स्वामी के लिये (कुद्धा चरित) कुद्ध होकर विचरती है, ग्रौर कहती है कि (मा) मुभे (वेहतं) गर्भपातिनी (मन्यमानः) बतानेवाला (मृत्योः पाशेषु) मृत्युके पाशोंसे (बध्यतां) वांधा जावे।

इससे ऐसा लगता है कि वेदोंमें विर्णत 'वशा' गौ न तो वन्ध्या है ग्रौर न साधारण गायोंकी तरह बार-बार गर्भवतो होकर प्रसूता होती है। ग्रथवा बन्ध्याकी तरह गर्भवती न हो तो भी 'वशा' गौ बहुत बड़ी मात्रामें बराबर दूध देती रहती है। इसीलिये सौ पालनकर्त्ता, सौ दोहनेवाले ग्रौर सौ दोहनके बर्तन लिये हुए उसके पास रहते हैं।

यदि 'वशा' संज्ञावाली गाय विना प्रसूता हुए इतनी श्रधिक मात्रामें दूध देनेवाली है तो यह भी मानना होगा कि ऐसे गुणवाली गाय कभी-कभी संयोग ग्रौर सौभाग्यसे ही किसी-किसी भाग्यवान्को प्राप्त होती है, ग्रौर ऐसी गायें अधिक संख्यामें नहीं होतीं। ऐसी दुर्लभ वस्तुको क्या कोई भी व्यक्ति बलिदान द्वारा नष्ट करनेकी बात किसी भी ग्रवस्थामें सोच सकता है ? विदेशोंमें, जहाँ गायका मांस स्वतन्त्रतापूर्वक खानेवाले लोग हैं, उनको भी कदाचित् ऐसी गाय कभी मिल जाय तो वे भी सब प्रकारसे उसकी रक्षा ग्रौर पालन करेंगे तथा किसी भी हालतमें उसकी हत्या नहीं होने देंगे। ग्रायकी बैदिक कालमें हत्या द्वारा बिल दो जाती थी वे सर्वथा भ्रममें हैं। 'वशा' गायकी बात तो दूर रही, साधारण गायकी बिल भी वैदिक कालमें वेदों के ग्रनुसार प्रमाणित नहीं होती।

ग्रपने स्वार्थकी हिष्टिसे ग्रीर ग्रपने अर्थकी हिष्टिसे ऐसे गुर्गोंसे युक्त गायको तो कसाई व्यवसाय वाला व्यक्ति भी हत्या न करके उसको ग्रपने लिये जीवित रखकर उसके दूध ग्रादिसे सर्वदा लाभ उठायेगा।

## वया विवाह-प्रसंगमें गोहत्या और गोमांस प्रचलित था ?

भारतीय विद्या भवन, बम्बईके तत्त्वावधानमें प्रग्णीत George Allen & Unwin Ltd. London द्वारा प्रकाशित ग्रंग्रेजी भाषाकी पुस्तक 'वैदिक काल' (The Vedic Age) के ग्रध्याय १६ में श्री वी. एम. ग्राप्टे महोदय ग्रपने प्रवन्ध 'समाज ग्रीर ग्राधिक परिस्थित' (Social and Economic Conditions) में (द्वितीय संस्करण, १६५२) पृष्ठ ३८६ पर 'विवाह ग्रीर स्त्रियोंका स्थान' (Marriage and the Position of Women) शोर्षकके ग्रन्तर्गत लिखते हैं—

"A hymn in RV (X. 85)—which may be called the wedding hymn gives us some idea of the oldest marriage ritual. bridegroom and party proceed to the bride's house (X.17.1), where the well-adorned bride remains readv (IV.58.9) to join the marriage-feast. The guests are entertained with the flesh of cows killed on the occassion (X.85.13). The bridegroom The ceremony proper now commences. grasps the hand of the bride and leads her round the fire (X.85.36,38). These two acts constitute the essence of the marriage and the bridegroom is now the husband who takes her by hand (hasta-grabhan X.18.8). The bridegroom next takes the bride home in a car, in a wedding procession (X 85.7,8,10,24-27,42). Then follows the consummation which is signified chiefly by the purification of the bride's garment (X.85.28-30,35)."

श्रथीत् -- ऋग्त्रेद (१०.८५) के एक मन्त्रसे, जिसको विवाहका मन्त्र कहा जा सकता है, प्राचीनतम विवाह-संस्कारकी कुछ भांकी मिलती है। वरपक्षवाले कन्यापक्षवालोंके यहाँ जाते हैं (ऋ० १०.१७,१), जहाँ श्रृंगार-सुसज्जित कन्या विवाह-भोजमें भाग लेनेके लिये तैयार

#### क्या विवाह प्रसंगमें गोहत्या ग्रीर गोमांस प्रचलित था ? १८४

रहती है (ऋ० ४.५८.६)। म्रतिथियोंको उसी म्रवसरपर मारी हुई गायोंके मांसका भोजन कराया जाता हैं (ऋ० १०.८५.१३)। म्रव विवाहकार्य म्रारम्भ होता है। वर कन्याका हाथ पकड़ता है म्रोर म्रिनिकी परिक्रमा कराता है (ऋ० १०.८५.३६,३८)। ये दो कार्य (गोहत्या एवं गोमांसयुक्त भोजन तथा कन्याका हाथ पकड़कर म्रिनिपरिक्रमा) विवाह-विधिके सार हैं म्रोर म्रव वर पित वन जाता है म्रोर उस कन्याका हाथ पकड़कर ले जाता है (हस्त-ग्राभः ऋ० १०. १८.८)। इसके पश्चात् वर कन्याको एक गाड़ीमें वैठाकर बारात सजाकर घर ले जाता है। इसके उपरान्त कन्याके वस्त्रोंकी मुद्धिके द्वारा इसकी पूर्णता—समाप्ति होती है (ऋ० १०.८५.२८-३०,३५)।

इसके पश्चात् ग्राप्टे महोदय पृष्ठ ३६३ पर 'खाद्य ग्रौर पेय' (Food and Drink) शीर्षकके ग्रन्तर्गत लिखते हैं—

"The cow receives the epithet aghnyā (not to be killed) in the Rigveda, and is otherwise a very valued possession. It is difficult to reconcile this with the eating of beef, but we may get some explanation if we remember the following:

- (i) Firstly, it was the flesh of the ox rather than of the cow that was eaten; a distinction was definitely made.
- (ii) The flesh of the cow was (if at all) eaten at the sacrifices only, and it is well known that one sacrifices one's dearest possession to please the gods.
- (iii) Even in the Rigveda, only vasas (barren cows) were sacrificed. For example, Agni is called in VIII.43.11 as vasanna.

The expression atithining in (cow fit for guests) in X.68.3 implies the same distinction."

ग्रर्थात्— ऋग्वेदमें गायको ग्रध्न्याकी उपाधि दी गयी है तथा वैसे भी यह बहुमूल्य सम्पत्ति है। गोमांस खानेके उल्लेखके साथ इसका

#### प्राचीन भारतमें गोमांस—एक समीक्षा

१८६

समन्वय बड़ा कठिन हो जाता है। तथापि यदि निम्न बातोंका ध्यान रक्खा जाय तो इसका कुछ स्पष्टीकरण हो जाता है—

- १. प्रथम तो जो मांस खाया जाता था वह गायकी बजाय बैल (ox) का होता था ; इनका भेद निश्चित रूपसे वताया गया है (ग्रंग्रेजी-कोशमें ox का ग्रर्थ गोवंशका नर ग्रौर मादा दोनों हैं, किन्तु ग्राप्टे महोदयने यहाँ नर ही लिया लगता है )।
- २. गायका माँस (कदाचित्) खाया भी जाता हो तो वह केवल यज्ञों में खाया जाता था। यह सर्वविदित बात है कि देवों को प्रसन्न करनेके लिये अपनी प्रियतम (सबसे अधिक प्रिय ) वस्तुका ही बिलदान किया जाता है।
- ३. ऋग्वेदके अनुसार भी वशा (बाँभ) गायकी बिल दी जाती थी। उदाहरणके लिये अग्निका नाम ऋग्वेद ८.४३.११ में वशान है।

ऋग्वेदमें १०.६८.३ में म्रतिथिनीर्गाः वाक्य इसीका वाचक है।

Arthur Anthony Macdonell and Arthur Berriedale Keith ने भी ग्रपने वैदिक इण्डेक्स, खण्ड २ के पृष्ठ १४५ पर लिखा है—

"The marriage ceremony was accompanied by the slaying of oxen, clearly for food."

अर्थात—विवाह प्रथामें गोवंशका बिलदान होता था जिससे स्पष्ट है कि भोजनके लिये ही होता था।

ऊपर उद्धृत ऋग्वेदके दशवें मण्डलके ८५वें सूक्तपर विचार करनेके पूर्व भ्रन्य मन्त्रोंपर विचार कर लिया जाय. क्योंकि दशवें मण्डल के ८५वें सूक्तके सब मन्त्रोंका विस्तृत रूपसे विचार करना जरूरी होगा।

#### ऋग्वेद ४.५८.६ का अर्थ

ग्राप्टे महोदय कहते हैं कि ऋग्वेद, मण्डल ४, सूक्त ५८, मन्त्र ६ के ग्रमुसार वरपक्षवाले कन्यापक्षवालोंके यहाँ पहुँचनेके समय श्रृंगार-सुसज्जित

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

वया विवाह प्रसंगमें गौहत्या ग्रीर गोमांस प्रचलित था? १८७

कन्या विवाह-भोज- (marriage feast) में भाग लेनेके लिये तैयार रहती है। मन्त्रका पाठ इस प्रकार है —

ि कन्याइव वहतुमेतवा उ श्रव्यव्यव्यता ग्रभि चाकशीमि । स्वाप्त यत्र सोमः सूयते यत्र यज्ञो घृतस्य घारा श्रभि तत्पवन्ते ॥

पदच्छेद करने पर शब्द मिलते हैं।-

ि कन्याः, इव, वहतुम्, एतवा, उ, श्रञ्जि, श्रञ्जना, श्रभि, चा<mark>रशीमि,</mark> यत्र, सोमः, सूयते, यत्र, यज्ञः, घृतस्य, घारा, श्रभि, तत्, पवन्ते ॥

इन सब राब्दों को मोनियर विलियमके एवं वी.एस. ग्राप्टे के संस्कृत-ग्रंग्रेजी कोशोंमें खोजनेपर इनमेंसे किसी भी एक शब्द का ग्रर्थ feast (भोज) नहीं मिला।

मन्त्रका साधारण अर्थ इस प्रकार बनता है-

कन्याः इव = कन्याय्रोंकी तरह, ग्रर्थात् कन्याएँ जिस प्रकार अञ्ज ग्रञ्जना = अञ्जन, ग्राभूषण ग्रादि प्रृंगारसे सुसज्जित होकर वहतुम् एतवा = विवाह करनेके लिये जाती हुई ग्रिभ पवन्ते = सुशोभित होती है।

#### उसी प्रकार

(ग्राधिभौतिक ग्रर्थ)
थत्र सोमः सूयते — जहाँ सोमयाग
होता है
यत्र यज्ञः —जहाँ यज्ञ होता है
तत् —वहाँ
गृतस्य धारा —घृतकी धारा को
ग्रिभ चाकशीम —मैं प्रकाशित देखता हूँ,
गृर्थात् जहाँ यज्ञ होता है
वहाँ घृतकी समिधा
प्रज्वलित होकर यज्ञको
प्रकाशित—स्रोभित—

जहाँ सौम्य गुरायुक्त शिष्य हैं
जहाँ ज्ञानका आदान-प्रतिदान
रूप यज्ञ है
वहाँ
घृतधार।रूप ज्ञानकी वाणियोंको
मैं साक्षात् करता हूँ, अनुभव
करता हूँ, अर्थात् ज्ञानरूपी
प्रकाश प्रकट हो जाता है।

(ग्राध्यात्मिक ग्रथं)

सूसज्जित कर देती है।

यह <mark>ग्रालङ्कारिक मन्त्र</mark> हैं, इसमें कहीं भी गोमांसयुक्त भोजकी वातका उल्लेख गन्धमात्रके लिये भी नहीं हैं।

H. H. Wilson महोदयने भी ऋग्वेदके इस मन्त्रके अपने अंग्रेजी भाषाके अनुवादमें कहीं भी गोमांस द्वारा भोजका अर्थ नहीं किया है। उनका अंग्रेजो अनुवाद नीचे उद्धृत किया जा रहा है—

"I contemplate these streams of ghi as they flow from where the *soma* is effused, where the sacrifice (is solemnized), as maidens decorating themselves with unguents to go the bridegroom." (RV. IV.5.13.9)

Ralph T.H. Griffith महोदय इस मन्त्रके ग्रंग्रेजी ग्रनुवादमें वैवाहिक भोज (bridal feast) तो ग्रर्थ किया है, लेकिन गोमांसयुक्त ग्रर्थ नहीं किया है जो नीचे उद्धृत किया जा रहा है—

"As maidens deck themselves with gay adornment to join the bridal feast, I now behold them,

Where soma flows and sacrifice is ready, thither the streams of holy oil are running."

मोनियर विलयम्सके एवं वामन शिवराम ग्राप्टेके ग्रंग्रेजी-संस्कृत कोश में feast के लिये भोजनके ग्रर्थ में निम्नलिखित संस्कृत शब्द मिलते हैं—

सिंक्रया, सहभोजनं, सम्भोजनं, उत्तमान्नसम्भारः परमान्नसम्भारः, विशिष्टान्नसम्भारः।

ग्रंग्रेजी भाषाकी 'वैदिक काल' पुस्तकमें 'समाज ग्रीर ग्राथिक परिस्थित' के लेखक वी०एस० ग्राप्टे महोदय या ग्रन्य लेखक लोग जो इस ग्रर्थमें इस मन्त्रका उद्धरण देते हैं, कहाँसे ऐसा ग्रर्थ ले ग्राये, कुछ समभमें नहीं ग्राता।

श्री वी॰एस॰ ग्राप्टे महोदयने लिखा है कि जो मांस खाया जाता था वह गायकी वजाय बैलका होता था, क्योंकि गायको 'ग्रघ्न्या' उपाधि दी गयी है ग्रीर वह बहुमूल्य सम्पत्ति है। उनके विचारसे बैल बहुमूल्य सम्पत्ति नहीं है, इसिलये वेदोंमें बैलको अवघ्य नहीं बताया। लेकिन यह उनके समभनेकी भूल लगती है। स्वर्गीय पण्डित श्रीपाद दामोदर सातवलेकरने ग्रपने गोन्ज्ञान-कोश, प्राचीन खण्ड—वैदिक विभाग, द्वितीय खण्डकी भूमिकाके पृष्ठ ८-६ पर इसका उल्लेख किया है जो यहाँ उद्धृत किया जा रहा है—

#### क्या विवाह प्रसंगमें गोहत्या भ्रौर गोमांस प्रचलित था? वैलकी श्रवस्थता

328

#### बैलकी ग्रवध्यता

'श्रघ्न्या' शब्द जैसा गौके लिये प्रयुक्त होता है वैसा ही 'ग्रघ्न्य' शब्द बैल वाचक भी है। इसलिये गौके समान ही बैल भी रक्षणीय श्रौर वर्धनीय तथा श्रवघ्य ही है, देखिये—

श्रृङ्गाभ्यां रक्ष ऋषत्यवति हन्ति चक्षुषा। श्रृगोति भद्रं कर्गाभ्यां गवां यः पातिरघ्न्यः॥ १७॥ श्रतयाजं स यजते नैनं दुन्वन्त्यग्नयः। जिन्वन्ति विद्वे तं देवा यो ब्राह्मग् ऋषभमाजुहोति॥१८॥ (ग्रथवंवेद ६.४)

श्रर्थात्—जो गौवोंका ( ग्रघ्न्यः ) ग्रवध्य पित ग्रर्थात् बैल है वह कानोंसे कल्याएाकी बातें सुनता है, वह ग्राँखोंसे ग्रकालके दुर्भिक्ष्यका नाश करता है ग्रौर ग्रपने सींगोंसे राक्षसोंको दूर भगाता है। सौ यज्ञोंसे वह यजन करता है, (एनं) इस बैलको (ग्रग्नयः न दुन्वन्ति) ग्रिग्न जलाते नहीं हैं। सब देव उसे उन्नत करते हैं जो (ब्राह्मएो) ब्राह्मणको (ऋषभं) बैल (ग्राजुहोति) ग्रपंएा करता है।

इसमें निम्नलिखित बातें देखने योग्य हैं-

- १. बैलका नाम ग्र-घ्न्य है जिसका ग्रर्थ ग्रवध्य है। (मन्त्र १७)
- २. एक बैल ब्राह्म एाको दान करना सौ यज्ञके बराबर है (मन्त्र १८) बैलके रक्ष एा करमे, संवर्धन करने और दान करनेका इतना महत्व है।
- ३. उसको ग्रग्नि जलाता नहीं है, इतना बैल का महत्व है। (मन्त्र १८)
- ४. बैल कभी कानोंसे बुरे शब्द सुनता नहीं, क्योंकि सब उसकी प्रशंसा ही करते हैं। (मन्त्र १७)
- प्र. बैल ग्रपनी ग्राँखसे ग्रकालके दौभिक्ष्यको दूर करता है (ग्रवित हिन्त चक्षुषा)। बैल खेती द्वारा ग्रकालको हटाता है। (मन्त्र १७)

यह बैलका वर्णन पढ़नेसे पाठकोंको पता लग जायगा कि बैल ऐसा उपयोगी है, इसलिये कौन उसको अपने पेटकी पूर्तिके लिये काटेगा और अकालसे त्रस्त होनेके लिये तैयार होगा। यदि बैल अकालको दूर करता है तो उसे सुरक्षित रखना ही आवश्यक है।

श्री वी० एस० ग्राप्टे महोदयने लिखा है—गौका मांस कदाचित् खाया भी जाता हो, तो वह केवल यज्ञोंमें खाया जाता था; यह सर्वविदित वात है कि देवोंको प्रसन्न करके लिये ग्रपनो प्रियतम (सबसे ग्रधिक प्रिय) वस्तुका ही विलदान किया जाता है। यह मालूम होना चाहिये कि प्रत्येक प्राणीको सबसे श्रधिक प्रिय वस्तु तो ग्रपना शरीर है; ग्रतः देवोंको प्रसन्न करनेके लिये जीव बिल ही देनी हो तो सबसे ग्रधिक प्रिय वस्तु ग्रपने शरीरकी ही बिल देनी चाहिये। यह उनको समभकी भूल है कि गायकी बिलसे देव प्रसन्न होते हैं। इसका विस्तृत विवेचन 'क्या वैदिक कालमें गोहिंसा, मांसपरक यज्ञ ग्रौर मांसभक्षण प्रचलित था?' शीर्षक के ग्रन्तर्गत देखा जाय।

इसके बाद वे लिखते हैं कि ऋग्वेदके अनुसार 'वशा' (वन्ध्या) गायकी बिल दी जाती थी क्योंकि ऋग्वेद द.४३.११ में अग्निका नाम 'वशान्न' है। इससे उनका अभिप्राय है कि अग्निका अन्न वशा है, इसलिये वशा गौकी बिल देकर उसके मांसका हवन किया जाता था। वैदिक 'वशा' गौको वन्ध्या मानना अज्ञानके कारण है। इसके स्पष्टीकररणके लिये 'उक्षान्न और वशान्नका अर्थ एवं वशा गौका वन्ध्यत्व' शीर्षक प्रबन्धके अन्तर्गत विवेचन देखिये।

इसके ग्रागे उन्होंने लिखा है कि 'ग्रितिथिनीर्गाः' (ऋग्वेद १०.६५.३) वाक्य भी इसीका वाचक है। इसका विवेचन 'क्या मधुपर्कमें' गोमांस सम्भव है ?' शीर्षक के ग्रन्तगंत 'ग्रितिथिनीर्गाः ग्रौर ग्रितिथिग्वका ग्रर्थं' उपशोषक में देखिये।

### ऋग्वेद १०.८५ का वर्णन

ग्रव हम विवाह प्रसंगमें गोहत्या श्रौर गोमांसपर विचार करते हैं। इसका विवेचन स्वर्गीय पं० श्रीपाद दामोदर सातवलेकरने श्रपने क्या विवाह प्रसंगमें गोहत्या और गोमांस प्रचलित था ? 338 ऋग्वेद १०.८५ का वर्णन

गो-ज्ञान-कोश, प्राचीन-खण्ड वैदिक विभाग, प्रथम खण्डके पृष्ठ १६ से २० तक दिया है, उसको यहाँ उद्धृत किया जाता है-इसके प्रमाणमें निम्न मन्त्र दिया गया है-

्राणात् स्वर्वाया वहतुः प्रागात् सविता यमवासृजत् । 📅 । प्रघासु हन्यन्ते गावोऽर्जुन्योः पर्यह्यते ॥ (ऋग्वेद १०.८५.१३)

यह मन्त्र एक ग्रालङ्कारिक वर्णनमें ग्रा गया है। इसका पूर्वापर सम्बन्ध देखनेसे मन्त्रका ऋर्थ स्वयं खुल जायगा । इसलिये इसके ऋागे-पीछेके कुछ मनत्र देखिये-

सत्येनोत्तभिता भूमिः सूर्येगोत्तभिता द्यौः। ऋतेनादित्यास्तिष्ठिन्त दिवि सोमो ग्रिघि श्रितः ॥१॥ चित्तिरा उपबर्हगां चक्षुरा ग्रभ्यञ्जनम्। द्यौर्भूमिः कोश ग्रासीद्यदयात्सूर्या पतिम् ॥७॥ स्तोमा ग्रासन्प्रतिधयः कुरीरं छन्द ग्रोपशः। सूर्याया ग्रहिवना वराग्निरासीत्पुरोगवः ॥६॥ सोमो वधूयुरभवदश्विनास्तामुभा वरा। सूर्यां यत्पत्ये शंसन्तीं मनसा सविताददात् ॥६॥ मनो ग्रस्या ग्रन ग्रासीद् द्यौरासीदुत छदिः। शुक्रावनड्वाहावास्तां यदयात्सूर्या गृहम् ॥१०॥ ऋक्सामाभ्यामभिहितौ गावौ ते सामनावितः। श्रोत्रं ते चक्रे ग्रास्तां दिवि पन्थाश्चराचरः ॥११॥ शुची ते चक्रे यात्या व्यानो ग्रक्ष ग्राहतः । श्रनो मनस्मयं सूर्यारोहत्त्रयती पतिम् ॥१२॥ सूर्याया बहतुः प्रागात्सविता यमवासृजत् । 🏗 , त्रघासु हन्यन्ते गावोऽर्जुन्योः पर्यु ह्यते ॥१३॥ यदयातं शुभस्पती वरेयं सूर्यामुप । क्वैकं चक्रं वामासीत्क्व देष्ट्राय तस्थथुः ॥१५॥ हे ते चक्रे सूर्ये ब्रह्माण ऋतुथा विदुः । म्रथैकं चक्रं यद्गुहा तद्द्वातय इद्विदुः ॥१६॥ ि (ऋग्वेद १०.५४, १, ७-१३, १४, १६)

TOPPE D

इन मन्त्रोंका म्रर्थ देखनेके समय पाठक यह बात ध्यान में रखें कि यह विवाहका म्रालङ्कारिक वर्णन है जिसमें सूर्यकी पुत्री सूर्या का विवाह चन्द्रमासे होनेका वर्णन है, देखिये म्रव इसका म्रर्थ—

सत्यसे भूमिका घारए हुम्रा है, सूर्यने द्युलोकका धारए किया है, सवाईसे म्रादित्य ठहरे हैं, युलोकमें सोम रहा है।।१।। विचारशक्ति का तिकया बनाया है, दृष्टिका ग्रञ्जन ग्रांखमें रखा है, भूमिसे चुलोक तकके सब पदार्थ खजाना था जिस समय सूर्या वधू अपने पतिके पास गई ।।७।। रथ बनानेमें मन्त्रोंके दण्डे लगाये गये, कूरीर नामक छन्दोंसे उनकी चमक बढ़ायी गयी । दोनों ग्रश्विनीकुमार वधू पक्षके साथ थे ग्रौर ग्रग्नि सबके ग्रागे था ।।८।। सोम, वधू चाहनेवाला वर था ग्रौर ग्रक्षिवदेव वधूके साथ रहे। सूर्यदेवने मनसे पतिकी इच्छा करनेवाली सूर्यावधूको पतिके हाथमें ग्रपंण किया ॥६॥ इसका रथ मन ही था, द्युलोक उस रथका ऊपरका भाग था, दो रवेत बैल रथ को जोड़े थे, जिस समय सूर्या ग्रपने पतिके घर पहुँची ।।१०।। ऋक् ग्रौर साममन्त्रोंसे वे दोंनों बैल ग्रपने स्थानमें रखे गये थे। यहाँ दो कान ही रथ के दो चक्र थे, द्यूलोकमें उसका स्थावर जंगम मार्ग है ।।११।। तुम्हारे जानेके दोनों चक्र शुद्ध हैं, व्यान नामक प्राण रथका (ग्रक्षः) मध्यदण्ड है, ऐसे (मनस्मयं ग्रनः) मनरूपी रथपर सूर्या देवी बैठकर ग्रपने पतिके पास जाती है ।।१२॥ सविता देवने सूर्या देवीको दहेज धूम-घड़ाकेके साथ भेजा। जो ग्रागे चली, इस समय (ग्रघासु हन्यन्ते गावः) [यूरोपीयनोंका ग्रर्थ = मघा नक्षत्रमें गौवें मारो जातो हैं] मघा नक्षत्रमें गौवें दहेजमें भेजी हैं ग्रर्थात् सूर्यंकी किरएों चन्द्रमा तक पहुँचायी जाती हैं ग्रौर (ग्रर्जुन्योः पर्युह्यते) फाल्गुनी नक्षत्रोंमें सूर्याके साथ सोमका विवाह किया जाता है ।।१३।। हे ग्रश्विदेवो ! जब ग्राप अपने तीन चक्रवाले रथमें बैठकर सूर्यादेवीकी बरातमें स्वयं ग्राये, तब ग्रापके रथका एक चक्र कहाँ था, ग्रौर ग्राप ग्राज्ञा-पालनके लिये कहाँ ठहरे थे ।।१५।। हे सूर्यादेवी ! तुम्हारे दो चक्र ब्राह्मण ऋतुओंके अनुसार जानते हैं स्रौर जो एक चक्र (गृहा) गुप्त है, (या हृदयकी गुहामें ग्रहश्य है,) उसको वे ही जानते हैं कि जो ग्रटल सत्य तत्वको जानते हैं।।१६॥

पाठक ये मन्त्र देखें ग्रौर उनका यह ग्रर्थ भी देखें तो उनको स्पष्ट पता लग जायगा कि वहाँ गौग्रोंका वध करनेका सम्बन्ध ही नहीं है। यदि

# क्या विवाह प्रसंगमें गोहत्या श्रीर गोमांस प्रचलित था ?

\$38

'गायें मारी जाती हैं' ऐसा बीचमें पढ़ा जाय तो वह वहाँ सजता भी नहीं है। ऊगरके ग्रथमें यह यूरोपीयनोंका ग्रथं [कोष्ठकमें] ग्रौर वास्तविक ग्रथं दोनों दिये हैं। पाठक खूब विचार करके देखें ग्रौर स्वयं ग्रनुभव करें कि यूरोपोयनोंकी इन मन्त्रोंको समभनेमें कैसी बड़ी भारी भूल हुई है।

डा० विल्सनने (ग्रघासु हन्यन्ते गावः) का ग्रर्थ मघा नक्षत्रमें गौवें (are whipped along) चलायो जाती हैं ऐसा किया है जो ग्रधिक गुद्ध है, परन्तु गौवें काटी जाती हैं यह अर्थ मि० ग्रिफिथ, व्हिटने ग्रादिने माना है, वह उनकी बड़ी भारी भूल है, यह पूर्वापर सम्बन्ध देखनेसे स्वयं स्पष्ट हो जाता हैं। यह उपरके मन्त्रोंका जो ग्रर्थ हमने उपर दिया है वह सब यूरोपोयन ऐसा ही मानते हैं, केवल गौ काटने वाला उनका ग्रर्थ भिन्न है। वास्तवमें यहाँ ग्रव इसका ग्रधिक वर्गान करनेकी ग्रावश्यकता नहीं है, तथापि पाठकोंको यह ग्रलङ्कार स्पष्ट समभमें ग्रा जाय, इसलिये संक्षेपसे यह अलङ्कार खोलते हैं। विवाहकी बरातका रथ—

मन (मन्त्र १०) द्युलोक (मन्त्र १०) रथका छत्र दो बैल (मन्त्र १०) रथचालक लगामें ऋक्साम मन्त्र (मन्त्र ११) मार्ग स्थावर जंगम जगत् (मन्त्र ११) ग्रक्ष (रथदण्ड) व्यान प्राण (मन्त्र १२) तिकया विचार शक्ति (मनत्र ७) दृश्य (मन्त्र ७) ग्रञ्जन सब पदार्थ (मन्त्र ७) खजाना रथके दण्ड मन्त्र (मन्त्र ८) रथकी चमक मन्त्रोंके छन्द (मन्त्र ८) दो ग्रिश्वनीक्मार (मन्त्र ६) वधूके साथी **अग्रगामी** ग्रग्नि (मन्त्र १) दो कान (मन्त्र ११) दो रथ चक्र

मन्त्रमें जिस प्रकार वर्णन है वह यहाँ दिया है, परन्तु पाठक जानते ही हैं कि वेदका वर्णन ग्राधिभौतिक, आधिदैविक ग्रौर ग्राध्यात्मिक तीन विभागोंमें विभक्त होता है, इस विचारसे सगतिकरण करके नीचे कोष्ठक दिया जाता है जिससे यह रूपक खुल जायगा—

#### १६४ प्राचीन भारतमें गोमांस-एक समीक्षा

ग्रधिभूत	<b>ग्र</b> धिदैवत	ग्रध्यात्म
(लोकाचारमें)	(विश्वमें)	(शरीरमें)
वधूका पिता वधू वर वधूके साथी	सूर्य सूर्या (सूर्यप्रभा) सोम दो ग्रिश्वनी	परमिता बुद्धिशक्ति षोडशकलायुक्त ग्रात्मा श्वास, उच्छ्वास
बरातमें	अग्रगामी अग्नि	शब्द (वाणी)
 ग्राँखमें ग्रञ्जन वधूका घन	सब पदार्थ	हिष्ट सब अवयव
गौवें क्षांस एंडीएड एप	किरएों	 इन्द्रियाँ
रथ	विद्युत्	मन । । । । । । ।
रथकी छत	द्युलोक व्यक्त	मस्तिष्क
रथका मार्ग	स्थिर-चर	जड़-चेतन
रथवाहक लगामें	(दो) बैल वायु	प्राणापान ऋक्स(ममन्त्र
रथके दण्ड	FIRE TAX STATE	मन्त्र
रथकी चमक	FEE THE THE THE	छन्द
ग्रक्ष (क		व्यानवायु
रथके दो चक्र	दिशाएँ	दो कान
रथमें तिकये	S ELC. THE WAY	सुविचार

यह कोष्ठक देखनेसे यह वैदिक ग्रलङ्कार पाठकों के मनमें खुल गया होगा। इसलिये इसका विचार यहाँ ग्रधिक फैलानेकी ग्रावश्यकता नहीं है। पाठक यह विवाह ग्रपने ग्रन्दर भी देख सकते हैं ग्रौर वाहर जगत्में भी देख सकते हैं। वेदमन्त्रों में वाह्य जगत्में होने वाले सनातन विवाहका वर्णन किया है ग्रौर बीच-बीचमें व्यक्तिके शरीरमें होने वाले विवाहकी भी सूचनायें मन, सुविचार ग्रादि शब्दों द्वारा दी हैं। सूर्यकी प्रभा चन्द्रमामें जाकर वहाँ रमती हैं; इसपर रूपकालङ्कारसे ग्राध्यात्मिक तत्वका वर्णन इस सूक्तमें किया है।

#### क्या विवाह प्रसंगमें गोहत्या ग्रौर गोमांस प्रचलित था ? १९५ गौके साथ 'हन्' प्रयोगका श्रर्थ

## गौके साथ 'हन्' प्रयोगका ग्रर्थ

गौ शब्द सूर्य-िकरणोंका वाचक प्रसिद्ध है, इस विषयमें किसीको भी शंका नहीं है। 'हन्यन्ते'—इस क्रियामें 'हन्' धातु है, 'हन् हिंसागत्योः'—ये ग्राचार्य पाणिनि मुनिने इसके प्रथं दिये हैं ग्रर्थात् 'हिंसा ग्रौर गति' ये इसके अर्थ धातु पाठमें हैं, कोशोंमें इस 'हन्' धातुके ग्रर्थ निम्न प्रकार हैं—

To kill (वध करना), To multiply (गुणा करना), To go (जाना)।

हरएक कोशमें पाठक ये ग्रर्थ देख सकते हैं। यदि पाठक इस 'हन्' धातुके ग्रर्थ देखेंगे तो उनको—

### श्रघासु हन्यन्ते गावोऽर्जु न्योः पर्यु ह्यते ॥

इस पूर्वीक्त मन्त्रके वाक्यका ग्रर्थ (पूर्वीक्त ग्रलङ्कार छोड़कर भी) स्पष्ट हो जायगा—(अघासु) मघा नक्षत्रके समय (गावः) गौवें (हन्यन्ते) चलायी जाती हैं, ग्रौर (ग्रर्जुन्योः) फाल्गुनी नक्षत्रके समय (पर्युद्धते) विवाह किया जाता है। डा० विल्सनने यही ग्रर्थ स्वीकृत किया है। ग्रलङ्कारका तात्पर्य छोड़कर ग्रौर केवल स्थूल हिष्टिसे देखकर भी सरल अर्थ यह होता है। क्योंकि यद्यपि 'हन्' घातु का 'वध करना' ग्रर्थ प्रसिद्ध है, तथापि उसका दूसरा गतिवाचक ग्रर्थ नष्ट नहीं हुग्रा है। यदि उसका (to multiply) गुगा करना—यह ग्रर्थ लिया जाय तो 'गावः हन्यन्ते' का ग्रर्थ होगा—गौग्रोंकी संख्या बढ़ायी जाती है, गौवें दुगुनी-चौगुनी की जाती हैं। जिस समय विवाह होता हैं उस समय बहुत से आदमी इकट्ठे होते हैं, उनको दूध पिलानेके लिये स्थान-स्थानसे गौवें इकट्ठी भी की जाती हैं, लायी जाती हैं ग्रौर उनकी संख्या बढ़ायी जाती है। विवाह प्रसंगके लिये यह ग्रर्थ कितना सार्थ है ग्रौर सरल है—यह देखिये। 'ग्रष्टिया' शब्दसे बताया हुग्रा गौका ग्रवध्यत्व रखकर ही जो ग्रर्थ पूर्वीपर सम्बन्धसे ठीक बैठ जायगा वही ठीक ग्रर्थ होगा।

इसके ग्रतिरिक्त पूर्वोक्त कोष्ठकमें देखिये तो पता लग जायगा कि जो ग्रधिभूतमें गौवें हैं वे ही ग्रधिदैवतमें किरणें ग्रौर ग्राध्यात्मिक भूमिकामें

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

इन्द्रियशक्तियाँ हैं। जिस समय किसी बातके विषयमें सन्देह उत्पन्न हो जाता है उस समय ग्रन्य क्षेत्रोंका व्यवहार देखकर ग्रर्थका निश्चय करना चाहिये। ग्रिवभूतपक्षमें ग्रर्थात् लोक व्यवहारमें गौवोंका वध विवाह प्रसंगमें करना चाहिये या नहीं, इस मन्त्रका ग्रर्थ कैसा करना चाहिये, 'हन्' धातुके दो ग्रर्थ हैं उनमें यहाँ कौन-सा लिया जाय, इस शंकाकी उत्पत्ति होनेपर ग्रिवदैवतमें ग्रीर ग्रध्यात्ममें क्या होता है—यह देखिये ग्रीर उचित निश्चय कीजिये। ग्रिवदैवत पक्षमें सूर्यकी किरगों चन्द्रमातक फैलायी जाती हैं, प्रकाशका विस्तार किया जाता है, यह ग्रर्थ स्पष्ट है। सूर्यकी किरगों मारी नहीं जातीं। यह देखनेसे हमें पता लगा कि 'हन्' धातुका ग्रर्थ 'वध' यहाँ ग्रपेक्षित नहीं है, प्रत्युत फैलाव विस्तार या गित ग्रर्थ ही ग्रपेक्षित है। प्रतिबन्ध या वध ग्रर्थ यहाँ लिया जाता तो सूर्यकी किरगों मारी जानेपर चन्द्रमातक सूर्यकी प्रभा पहुँचेगी कैसे ? ग्रीर सूर्यपुत्री प्रभा (सूर्या सावित्री) का सोम (चन्द्र) के साथ विवाह कैसे होगा ? ग्रीर धूमधामके साथ बरात भी कैसे चलेगी ? ग्रर्थात् यहाँ 'हन्' धातुका 'वध' ग्रथे ग्रपेक्षित नहीं है।

ग्राघ्यात्मिक पक्षमें ग्रपने ग्रन्दर देखिये कि क्या इन्द्रिय-शक्तियाँ मारी जानेसे ग्रात्मा का सुख बढ़ेगा या उनको सुनियमोंसे चलानेसे कल्यारण होगा। इसके विवाहका रथ जगत्के मार्गपरसे ऋक्साम मन्त्रोंके द्वारा नियत धर्ममार्गपर ही चलना चाहिये, इसलिये इसके रथके बैल सुशिक्षित होकर मन्त्रोंकी लगामों द्वारा योग्य मार्गपरसे चलाने चाहिये। इत्यादि विचारसे स्पष्ट पता लगता है कि यहाँ भी गोपालन ही ग्रभीष्ट है।

इसी प्रकार विवाह यज्ञमें ग्रानेवाले पारिवारिक सज्जनोंके दुग्धपानके लिये गौवोंको इकट्टा करना, उनको योग्य मार्गपर चलाना, इघर-उधर भागने न देना योग्य है। उनका वध करनेसे क्या लाभ होगा ?

इस दृष्टिसे देखनेसे भी पता लग जाता है कि विवाह संस्कारमें गौग्रोंकी संख्या (multiply) बढ़ाना भी यहाँ ग्रभीष्ट है, या उनको योग्य मार्गसे चलाना ग्रभीष्ट है। ऊपर 'हन्' धातुका ग्रथं 'गिति' दिया है। इस 'गिति' के ग्रथं ज्ञान, गमन ग्रौर प्राप्ति हैं। ये ग्रथं सब व्याकरण-शास्त्रकार मानते हैं। ये ग्रथं यदि 'गिति' शब्दसे यहाँ लिये जायँ तो 'गावः हन्यन्ते' का ग्रथं होगा—गौवोंका ज्ञान प्राप्त करना, गौवोंको चलाना अथवा गौवोंको प्राप्त करना,।

#### क्या विवाह प्रसंगमें गोहत्या श्रीर गोमांस प्रचलित था ? १६७ गौके साथ 'इन्' प्रयोगका श्रर्थ

'हन्' घातुका ग्रर्थ ताड़न करना भी है। इस समय मराठी भाषामें यह ग्रर्थ प्रचलित है, (हनन=हाणएों) इस शब्दका ग्रर्थ सोटीसे ताड़न करना है ग्रर्थात् गवालिये हाथमें सोटी लेकर गौग्रोंको जिस दिशामें ले जाना होता है उस दिशामें ले जाते हैं। यह 'हनन' शब्दका ग्रर्थ है। 'हन्' धातु का यह ग्रर्थ लिया जाय तो 'हन्यन्ते गावः' का ग्रर्थ होगा—गौग्रोंको गवालिये जिस मार्गसे जाना हो उस मार्गसे ले जाते हैं। ग्रर्थात् विवाहके प्रसंगमें गौग्रोंको इकट्ठा करते है ग्रौर इष्ट स्थानपर ले जाते हैं।

कुछ भी हो, यहाँ गौवोंका वध ग्रभीष्ट नहीं है—यह बात स्पष्ट है। श्री० सायगाचार्यजीने भी यहाँ वध ग्रथं नहीं किया है - मधानक्षत्रेषु गावः हत्यन्ते दण्डैः ताड्यन्ते प्रेरगार्थम् — ग्रथीत् मधा नक्षत्रके समय गौवें वहाँ पहुँचानके लिये सोटियोंसे ताड़ित होकर प्रेरित की जाती हैं। सूर्यके घरसे चली हुई गौवें सोमके घर पहुँचनके लिये मार्गमें ठीक मार्गसे चलायी जातो हैं। यहाँ सायगा-भाष्यका भाव यह है कि सूर्यदेवने ग्रपनी पुत्रीके विवाहके समय दहेज, स्त्रोधन (या dowry) के रूपमें दी हुई गौवें चन्द्रमाके घर तक पहुँचानेका कार्य करनेके लिये सूर्यदेवके गवालिये गौवें ले जाते हैं ग्रौर ठीक मार्गसे उनको चलानेके लिये मार्गमें ग्रावश्यक हुग्रा तो ताड़न करते हैं, ग्रन्तमें वे गौवें सोमके घर पहुँचती हैं ग्रौर फाल्गुनी नक्षत्रके समय सूर्य-पुत्रीका चन्द्रमाके साथ विवाह होता है। यदि यहाँ 'गौवोंका वध' ग्रथं लिया जाय तो दहेजका बीचमें ही नाश होनेसे पुत्रीका भावी पति रुष्ट हो जायगा ग्रौर विवाहमें ग्रापत्ति ग्रा जायगी। इस कारगा 'वध' ग्रथं यहाँ ग्रभीष्ट नहीं है।

किसी भी प्रकार विचार करके देखेंगे, तो उनको स्पष्टतासे पता लग जायगा कि यहाँ 'गोवध' ग्रभीष्ट नहीं है। इतना होते हुए भी यूरोपीयन पण्डितोंने इस मस्त्रके ग्राधार से ही लिखा है कि—"The marriage ceremony was accompanied by slaying of oxen, clearly for food," (विवाह संस्कारमें खानेके लिये ही गाय बैल काटे जाते थे)। पूर्वापर सम्बन्ध न देखते हुए ही एकदम कैसे ग्रनुमान लिख मारते हैं— इसका बड़ा आश्चर्यं होता है। यूरोपके लोग जो चाहे सो ग्रनुमान करें, परन्तु हमारे लोगोंको तो पूर्वापर-सम्बन्ध देखकर ग्रधिक विचार करके ही ग्रमुमान निकालने चाहिये। ग्रन्थथा ऊपरवाले मन्त्रमें देखिये कि किसी

भी रीतिसे गौका वध सजता ही नहीं, परन्तु यही मन्त्र गोमांस-भक्षराका प्रमाण करके ये लोग पेश करते हैं—इससे ग्रौर ग्रधिक भूल कोई नहीं हो सकती।

नक्षत्रोंमें 'मघा' नक्षत्र होते ही 'पूर्वा' ग्रौर 'उत्तरा'—ये फाल्गुनी नक्षत्र ग्राते हैं। चन्द्रमाका तीन रात्रिका प्रवास इनमें होता है। सोमवारके दिन मघा नक्षत्र हुगा तो प्रायः मंगल ग्रौर बुधके दिनोंमें दोनों फाल्गुनी नक्षत्र ग्राते हैं। इसीलिये दहेज मघा नक्षत्रके समय भेजकर दूसरे या तीसरे दिन विवाह किया जाता है। इस मन्त्रसे यदि कोई ग्रनुमान निकालता है तो यही निकल सकेगा कि वेदके ग्रनुसार दहेजमें गौवें दी जाती हैं ग्रौर दहेज वरके घर पहुँचनेके पश्चात् विवाह होता है। परन्तु गौवोंके वधका ग्रनुमान तो कदापि नहीं निकल सकता। ऐसा ग्रनुमान निकालना ग्रज्ञानका विलक्षरण प्रदर्शन करना ही है। यहाँ 'हन्' धातुका ग्रर्थ क्या है—यह ग्रवश्य देखना चाहिये—

- १. हन् = वध करना to kill यह म्रर्थ प्रसिद्ध है।
- २. हन् = जाना, चलाना, प्रेरणा देना to go, to remove यह ग्रर्थ व्याकरणाचार्योंने माना है ग्रौर यह धातु इस ग्रर्थमें क्वचित् भाषामें भी प्रयुक्त होता है। वेद में यह ग्रर्थ ग्रधिक बार ग्राता है ग्रौर भाषामें कम। वैदिक कोश 'निघण्टु' के २.१४ में यह 'गति' ग्रर्थ दिया है।
- ३. हन् रक्षा करना जैसा 'हस्त-घ्न' में 'घ्न-हन्' का ग्रर्थ 'रक्षा करना' है। 'हस्तध्न' का ग्रर्थ (Hand guard) 'हायकी रक्षा करनेवाला' ऐसा होता है। यह प्रयोग वेदमें है (ऋग्वेद ६.७४.१४)।
- ४. हन् = गुणा करना to multiply गिणतमें यह प्रयोग है। 'घात, हनन, हित, हत' ग्रादि शब्द (multiplication) बढ़ोत्तरी, गुणा श्रथमें प्रयुक्त है।
- ४. हन् = उड़ाना, बढ़ाना to raise 'तुरगखुरहतस्तथा हि रेगुः'

क्या विवाह प्रसंगमें गोहत्या ग्रौर गोमांस प्रचलित था ? १६६ गौके साथ 'इन्' प्रयोगका अर्थ (शाकुन्तल १.३२)—घोड़ेके पाँवसे हत ग्रर्थात् उड़ायी हुई धूल— ऐसे वाक्योंमें यह ग्रर्थ होता है।

६. हन् = ताडन करना to beat — जैसा गवालिये सोटीसे पशुस्रोंका समय-समयपर ताड़न करते हैं।

७. हन्=(To ward off; avert रक्षा करना, दूर करना) यह ग्रर्थ महाभारतमें भी है।

द. हन् = to touch; come in contact स्पर्श करना, सम्बन्धमें ग्राना—यह ग्रर्थ वराहिमहिर बृहत्संहितामें ज्योतिष-विषयमें प्रयुक्त है।

#### ( पृष्ठ १६६ पर सबसे भ्रन्तमें जोड़ दिया जाय )

#### उपसंहार

जिन विद्वानोंने ऋग्वेदके श्राधारपर विवाह प्रसंगमें बारातियोंके भोजके लिये गोहत्याको प्रमाणित करनेकी चेष्टा को है उन्होंने इसके लिये एक मन्त्र कहींसे उठा लिया भौर दूसरा कहींसे उठा लिया भौर 'कहींकी ईंट कहींका रोड़ा, भानुमतीने कुनवा जोड़ा' की कहावतको चिरतार्थ करते हुए ग्रपनी विद्वत्ता भौर पदगौरवके प्रभावसे जनताको भ्रमित करनेका ही प्रयास किया है। श्रृंगार-सुसिज्जित कन्याको विवाह-भोजमें भाग लेनेको तैयार बताया है ऋग्वेदके मण्डल ४ में; भौर बारातियोंको गोमांसयुक्त भोजन कराया जाता है मण्डल १० में; जबिक ये दोनों ही आलङ्कारिक वर्णन हैं। जिन विद्वानोंकी बुद्धि यहाँ तक पहुँचती है कि कहींकी ईंट भौर कहींका रोड़ा लेकर कुनवा जोड़ सकते हैं उनकी बुद्धि वास्तविकता न समभती हो—यह बात मानी नहीं जा सकती। निश्चय ही किसी विशेष लक्ष्यके लिये हो उनके द्वारा ऐसे अनुसंधानोंको चेष्टा की गयी है जिसकी यथार्थताके सम्बन्धमें इस प्रबन्धमें विणित स्पष्टीकरणसे पाठक भली भाँति समभ गये होगें।

भी रीतिसे गौका वध सजता ही नहीं, परन्तु यही मन्त्र गोमांस-भक्षराका प्रमाण करके ये लोग पेश करते हैं—इससे ग्रौर ग्रधिक भूल कोई नहीं हो सकती।

नक्षत्रोंमें 'मघा' नक्षत्र होते ही 'पूर्वा' ग्रौर 'उत्तरा'—ये फाल्गुनी नक्षत्र ग्राते हैं। चन्द्रमाका तीन रात्रिका प्रवास इनमें होता है। सोमवारके दिन मघा नक्षत्र हुग्रा तो प्रायः मंगल ग्रौर बुधके दिनों में दोनों फाल्गुनी नक्षत्र ग्राते हैं। इसीलिये दहेज मघा नक्षत्रके समय भेजकर दूसरे या तीसरे दिन विवाह किया जाता है। इस मन्त्रसे यदि कोई ग्रनुमान निकालता है तो यही निकल सकेगा कि वेदके ग्रनुसार दहेजमें गौवें दी जाती हैं ग्रौर दहेज वरके घर पहुँचनेके पश्चात् विवाह होता है। परन्तु गौवोंके वधका ग्रनुमान तो कदापि नहीं निकल सकता। ऐसा ग्रनुमान निकालना ग्रज्ञानका विलक्षरण प्रदर्शन करना ही है। यहाँ 'हन्' घातुका ग्रर्थ क्या है—यह ग्रवश्य देखना चाहिये—

- १. हन् = वध करना to kill यह ग्रर्थ प्रसिद्ध है।
- २. हन् जाना, चलाना, प्रेरणा देना to go, to remove यह अर्थ व्याकरणाचार्योंने माना है और यह धातु इस अर्थमें क्वचित् भाषामें भी प्रयुक्त होता है। वेद में यह अर्थ अधिक बार आता है और भाषामें कम। वैदिक कोश 'निघण्टु' के २.१४ में यह 'गति' अर्थ दिया है।
- ३. हन् = रक्षा करना जैसा 'हस्त-घ्न' में 'घ्न-हन्' का ग्रर्थ 'रक्षा करना' है। 'हस्तध्न' का ग्रर्थ (Hand guard) 'हायकी रक्षा करनेवाला' ऐसा होता है। यह प्रयोग वेदमें है (ऋग्वेद ६.७४.१४)।
- ४. हन् = गुराा करना to multiply गिरातमें यह प्रयोग है। 'घात, हनन, हित, हत' ग्रादि शब्द (multiplication) बढ़ोत्तरी, गुराा ग्रथंमें प्रयुक्त है।
- ४. हन् = उड़ाना, बढ़ाना to raise 'तुरगखुरहतस्तथा हि रेगु:'

क्या विवाह प्रसंगमें गोहत्या ग्रौर गोमांस प्रचलित था ? १६६ गौके साथ 'इन्' प्रयोगका ग्रथं (शाकुन्तल १.३२)—घोड़ेके पाँवसे हत ग्रथीत् उड़ायी हुई धूल— ऐसे वाक्योंमें यह ग्रथं होता है।

- ६. हन् = ताडन करना to beat जैसा गवालिये सोटोसे पशुस्रोंका समय-समयपर ताड़न करते हैं।
- ७. हन् = (To ward off; avert रक्षा करना, दूर करना) यह ग्रर्थ महाभारतमें भी है।
  - द. हन् = to touch; come in contact स्पर्श करना, सम्बन्धमें ग्राना—यह ग्रर्थ वराहिमहिर बृहत्संहितामें ज्योतिष-विषयमें प्रयुक्त है।
  - ६ हन्=to give up; abandon छोड़ देना।
  - १०. हन्=to obstruct प्रतिबन्ध करना।

'हन्' धातुके इतने ग्रर्थ कोशों में हैं। इन ग्रर्थों में से प्राचीन वेद मन्त्रों में कौन-कौन ग्रर्थ ग्राये हैं, इनका प्रकरण देखकर पूर्वापर संगतिसे ही ग्रर्थ करना चाहिये। 'हन्' धातु जहाँ-जहाँ ग्रा जाय वहाँ-वहाँ उसका 'वध' ही ग्रर्थ लिया जाय तो ग्रर्थका ग्रनर्थ होने में विलम्ब नहीं लगेगा।

he Aranyaka, otter arranging the arctificial vessels, gives



क्या विवाह प्रबंधों गीहत्वा बीर गोवांस प्रवासत वा ?

# शवदाहमें गोहत्या

राजा राजेन्द्रलाल मित्र महोदय ग्रपनी ग्रंग्रेजी भाषाकी पुस्तक 'प्राचीन भारतमें गोमांस' के उल्लिखित संस्करणके पृष्ठ २, पंक्तियां ४-६ में लिखते हैं—

"A supply of beef was deemed an absolute necessity by pious Hindus in their journey from this world to another world, and a cow was invariably killed to be burnt with the dead."

अर्थात्—धार्मिक हिन्दुग्रों द्वारा इस लोकसे परलोककी यात्रामें गोमांसकी नितान्त आवश्यकता समभी जाती थी ग्रौर (ऐसे अवसरपर) सर्वदा मुर्देके साथ जलानेके लिये एक गायकी हत्या की जाती थी।

ग्रपने उपरोक्त वाक्योंके साथ उन्होंने ग्रपने एक और ग्रंग्रेजी भाषाके प्रवन्ध 'प्राचीन हिन्दुग्रोंका मृतक-संस्कार' (Funeral ceremonies of Ancient Hindus) की ग्रोर संकेत किया है। खोजनेपर यह प्रवन्ध Journal of Asiatic Society, Volume XXXIX, Part I, No. IV. 1870 के pages 241 to 264 पर मिला, जो नवम्बर, १८७० में किसी ग्रवसर पर वक्तृताके रूपमे पढ़ा गया था। पृष्ठ २५१ पर पंक्ति ३ से १० तक लिखा है—

"The Aranyaka, after arranging the sacrificial vessels, gives the mantra for covering the corpse with the raw hide of the cow, which should be entire with head, hair and feet, the hairy side being kept upper-most. The mantra for the purpose is addressed to the hide; 'Cuirass, carefully protect this body from the light of Agni; envelope it with thy thick fat and marrow; holding this impudent Agni, desirous of seeing and consuming it by his vigour, allow him not to go astray'."

अर्थात्—यज्ञ पात्रोंको सुव्यवस्थित करनेके बाद, शवको गायके कच्चे चर्मसे ढकनेके लिये श्रारण्यकमें एक मन्त्रका उल्लेख है, जो गोचर्म, शिरके सहित, बालों सहित, टांगों सहित सम्पूर्ण होना चाहिये; बालोंकी तरफका भाग ऊपरकी ग्रोरसे रखा जाता है। मन्त्रका चर्मकी ग्रोर लक्ष्य करके कहना है—'वक्षस्थलके कवच, इस शरीरकी अग्निके प्रकाशसे रक्षा करना, अपनी चर्बी ग्रौर मज्जासे इसको लपेट लेना, ग्रपने तेजसे इसके देखने ग्रौर भस्म करनेवाले शृष्ट अग्निको रोके रखकर पथभ्रष्ट न होने देना।'

यहाँपर आरण्यकका जो मन्त्र उद्धृत किया गया है वही मन्त्र ऋग्वेद, मण्डल १०, सूक्त १६ का ७वाँ मन्त्र भी है।

Vedic Index, Vol. II, पृष्ठ १४७ की ७-६ पंक्तियों में भी लिखा है—

"The ritual of cremation of the dead required the slaughter of a cow as an essential part, the flesh being used to envelope the dead body."

श्रर्थात् — मृतक-दाह-संस्कारमें एक गायको मारना संस्कारका श्रनिवार्य ग्रङ्ग था ग्रौर मांसका उपयोग शवके लपेटनेमें हुग्रा करता था।

्रस्वर्गीय पं॰ श्रीपाद दामोदर सातवलेकरजीने अपने 'गो-ज्ञान-कोश' प्राचीन खण्ड—वैदिक विभाग, द्वितीय भागकी भूमिकाके पृष्ठ ४-५ पर 'श्रन्त्य-यज्ञ' शीर्षकके अन्तर्गत समाधानात्मक विवेचन किया है, जिसको यहाँ उद्धृत किया जाता है—

वैदिक धर्मके अनुसार मनुष्यका सब आयुष्य मिलकर एक बड़ा भारी यज्ञ है अर्थात् अपने संपूर्ण जीवनका सबकी भलाईके लिये यज्ञ करना है, इसमें मनुष्यके प्रेतकी अन्तिम इष्टि होती है। यह अन्तिम आहुति—अपने शरीरकी अन्तिम आहुति डाल दी, तो जीवनभर चलनेवाले यज्ञकी पूर्णता हुई। यहाँ जीवन यज्ञमय करनेकी कितनी उच्च कल्पना है, यह पाठक देखें। अर्थात् वैदिक धर्मकी हष्टिसे मुर्देका जलाना केवल उसकी राख करना नहीं है, परन्तु यह एक अन्तिम यज्ञ है और इसमें पूर्णाहुति होनेके कारण यह एक बड़ा भारी यज्ञ है। प्रज्वलित अग्निमें अपने देहकी ही अन्तिम आहुति डालनी होती है, इस हष्टिसे देखा जाय तो अग्निमें मांसकी—अपने संपूर्ण देहकी—आहुति डालना तो वैदिक धर्मके अनुकूल है हो, परन्तु क्या इसको समांस-यज्ञ कहा जा सकता है ? आजकल समांस-यज्ञका जो तात्पर्य है उससे घोड़ा, गाय, बैलके मांसकी आहुतियाँ वेदीपर चढ़ाना माना जाता है। वह

इस म्रन्तिम इष्टिसे सर्वथा भिन्न है। म्रन्तिम इष्टिमें मनुष्य देहकी या किसी मन्य देहकी जो म्राहुति डाली जाती है वह खानेके लिये नहीं डाली जाती। परन्तु मुर्दा घरमें रखना ही नहीं चाहिये, इसलिये उसको जलाया जाता है भौर यह म्रन्तिम यज्ञ माना गया है। इसलिये यदि कोई कहे कि यज्ञमें मांस प्रयुक्त होता है तो वह सत्य है, परन्तु जिस भावमें वह कहा भीर समभा जाता है वह सत्य भाव नहीं है। म्रतः हम कहते हैं कि ग्रग्निका नाम कव्याद' होनेपर भी उससे प्राणीके मांस भक्षणके विषयमें पुष्टि नहीं मिल सकती।

वैदिक समयमें मुर्दे जलानेकी प्रथा होनेके कारण ग्रग्निका नाम 'क्रव्याद' हुआ है। सर्वसाधारण रीतिसे मनुष्य मरते हैं, उनके मुर्दे जलाये जाते हैं, युद्धमें घोड़े, बैल, ग्रादि ग्रनेक पशु मनुष्योंके साथ मरते ही हैं, इन सबको वैदिक समयमें जलाया जाता था। वह प्रथा देखनेसे पाठक जान सकते हैं कि ग्रग्निका नाम 'क्रव्याद' होने पर भी उससे मांसभक्षण सिद्ध नहीं हो सकता।

ग्रग्नेर्वर्म परि गोभिर्व्ययस्य सं प्रोर्ख्य हव पीवसा मेदसा च । नेत्त्वा घृष्णुर्हरसा जह<sup>°</sup>षाग्गो दघृग्विधक्ष्यन्पर्यङ्क्षयाते ॥ (ऋ० १०.१६.७)

(ग्रग्ने वर्म) ग्रग्निकी ज्वालाएं (गोभिः) गौग्रोंसे (परिव्ययस्व) बचाग्रो, (पीवसा मेदसा च) गाढ़ी चरबीसे (सं प्रोर्णु ब्व) ठीक प्रकार ग्राच्छादित करो। ऐसा करनेसे (हरसा घृष्णुः) तेजसे घर्षण करनेवाला (जहंषागः) ग्रानित्त होनेवाला (दथृक् वि घक्ष्यन्) भस्म करनेवाला ग्राग्नि (त्वा न इत् पर्यङ्खयाते) तुभे घेरकर नहीं जलावेगा।

यहाँ 'गोभिः' शब्द है इसलिये यूरोपियन लोग गौके मांससे मुर्देको लपेटनेका अनुमान करते हैं और ऐसे कार्यके लिये गौको काटना आवश्यक समभते हैं। अनेक भारतीय पण्डित भी ऐसा ही मानते हैं। परन्तु यहाँ विचारणीय बात यह है कि इस मंत्रमें 'गोभिः' शब्द बहुवचनमें है संस्कृत व्याकरणके अनुसार इसका अर्थ होता है 'कमसे कम तीन गौओंसे'। मनुष्यके एक मुर्देको मांससे लपेटना हो तो उस कार्यके लिये कमसे कम क्या तीन गौवें आवश्यक होंगी? यदि यह कर्म गोमांससे करना हो तो क्या एक गौसे नहीं होगा? मनुष्यके शरीरसे तीन-चार गुना गायका शरीर होता है, अतः मनुष्यके एक मुर्देको वेष्टन करनेके लिये कमसे कम तीन या अधिक गौवोंकी आवश्यकता नहीं है।

इससे पाठकोंको पता लग जायगा कि यहाँ कुछ ग्रौर ही बात होगी। 'गी' शब्दसे दूध, दही, घी, चमड़ा ग्रादि पदार्थ लिये जाते हैं। यह बात यूरोपियन भी मानते ही हैं। इसलिये देखना चाहिये कि कौनसी चीजके लिये तीन या तीन से अधिक गौग्रोंको ग्रावश्यकता ग्रन्त्येष्टि कर्ममें पड़ सकती है ग्रौर जो कार्य केवल एक ही गौसे निभ नहीं सकता।

मांस, चर्म, चर्बी म्रादि एक गौसे पर्याप्त मात्रामें मिलना सम्भव है, परन्तु केवल घी ही एक ऐसा पदार्थ है कि जो तीनसे ग्रधिक गौवोंसे लेना ग्रावश्यक होगा। मत शरीरको ग्राग्नि देनेके पूर्व उसको घीसे लिपटा देना ग्रावश्यक होता है। जो लोग हवन करते हैं उनको पता है कि ग्रग्निमें डालनेवाले हिवर्द्र व्यपर घी छोड़ा जाता है, सिमधाय्रोंको भी घी लगाकर ग्राग्निमें छोडा जाता है, फिर इस 'ग्रन्त्य-हवन' में इस शरीर रूपी ग्रन्तिम समिधाको डालनेके समय घीकी ग्रावश्यकता क्यों नहीं होगी ? ग्राजकल समिधाएँ घीमें भिगोनेके लिये जितना घी चाहिये उतना नहीं मिलता, इस लिये समिधा आंपर दो-चार बंद छिड़का देते हैं, परन्तु शरीर रूपी श्रेष्ठ समिधा अन्त्य-यज्ञमें डालनेके समय वैदिक समयमें कि जिस समय घीकी ऐसी न्यूनता नहीं थी, पूरे शरीरपर घी डाला जाता हो तो इसमें क्या ग्राइचर्य है ? घीसे विष दूर होता है, शरीर जलनेके समय विषयुक्त वायु हवामें फैलती है, उसको शुद्ध करनेके लिये जितना घी डाला जाय उतना म्रावश्यक ही है, इससे वायुशुद्धि भी होती है। शरीरके तोलके बरावर घी म्रान्त्येष्टिमें बर्तना चाहिये ऐसी वैदिक प्रथा थी। म्राजकल यह कार्य दस-पाँच तोले घीसे हिन्दू कर लेते हैं।

'गी' शब्दसे गोसे उत्पन्न होनेवाला घी लिया जाता है, यह कोई नयी बात नहीं है और इसको सब एकमतसे मानते है। ऐसा होते हुए भी उक्त मन्त्रसे गौ काटनेका अनुमान निकाला जाता है, यह वड़ा ग्राश्चयं है। गौके बहुवचनकी ग्रोर विद्वानोंका ध्यान आकर्षित नहीं हुग्रा या जानबूभकर उधर ध्यान नहीं दिया गया ग्रौर इस कारण यहाँके ग्रथंका ग्रनर्थ हुग्रा—यह स्पष्ट बात है। अस्तु।

इस मन्त्रके देखनेसे भी गौ या वशा गौ काटनेकी कल्पना वैदिक समयमें थी—ऐसा सिद्ध नहीं हो सकता।

# क्या विवाह एवं राज्याभिषेकके शुभ अवसरपर चर्मके लिये लाल बैलकी हिंसा होती थी ?

ए० बी० शाह द्वारा सम्पादित ग्रंग्रेजी भाषाकी पुस्तक 'Cow Slaughter-Horns of a Dilemma' (गोवध-द्विविधाकी परिस्थिति) में 'Cow Cult in India' (भारतमें गो-पूजा) शोर्षक प्रवन्धमें मुकन्दलालने पृष्ठ १८ पर लिखा है—

"Slaughter of cows on ceremonial occasions was considered auspicious in ancient India. The bride and bridegroom were to sit on the raw skin of a red bull before the altar. The skin must have been of the red bull sacrificed on the occasion of the marriage ceremony to feed the guests."

श्रर्थात् —प्राचीन भारतमें विवाहोत्सवके समय गोहत्या शुभ मानी जाती थी श्रौर वेदीके सम्मुख वर-वधूको लाल बैलके कच्चे चर्मपर बैठना पड़ता था तथा वह कच्चा चर्म उस लाल बैलका होना चाहिये जो विवाहोत्सवमें आये हुए श्रतिथियोंको खिलानेके लिये उसी श्रवसर पर मारा गया हो।

#### इसके बाद वे लिखते हैं-

"Similarly, on the occasion of the coronation of kings, the raw skin of a red bull was placed under the seat of the king to be anointed. Probably the king had to sit on fresh cow hide to perform the ceremony."

अर्थात्—राजाग्रोंके राजगही पर बैठनेके ग्रवसरपर ग्रिभिषेक किये जानेवाले राजाके सिंहासनके नीचे लाल बैलका कच्चा चर्म रक्खा जाता था। सम्भवतः गायके ताजा चमड़ेपर बैठकर ही राजाको ग्रिभिषेक पूरा करना पड़ता था। क्या विवाह एवं राज्याभिषेकके शुभ ग्रवसरपर लाल वैलके २०४ चर्मके लिये हिंसा होती थी ?

ए० बी० शाह ग्रौर मुकन्दीलालका परिचय तथा उनके ज्ञानकी गहराईका उल्लेख 'क्या राजा रिन्तदेवके यहाँ गोवध होता था?' शीर्षक लेखमें आ चुका है। उसको यहाँ दोहरानेकी आवश्यकता नहीं है।

मुकन्दीलालने उस धर्म-शास्त्रका उद्धरण नहीं दिया जहाँपर इन बातोंका उल्लेख है। इससे अनुमान होता है कि न तो उन्हें स्वयं इस बातका ज्ञान है कि इनका कहाँ उल्लेख है एवं न उन्होंने इसकी गहराईमें जानेकी आवश्यकता समभी। उनका एकमात्र लक्ष्य यही दीखता है कि येनकेनप्रकारेण अपने पद-गौरवका लाभ उठाकर गोहत्याका प्रचार किया जाय। जो हो, उन्होंने जो बात उठाकर साधारण लोगोंको भ्रममें डालनेकी चेव्हा की है उस भ्रमके निवारणार्थ उसका स्पष्टीकरण करना आवश्यक है।

विवाहोत्सवमें गोहत्या ग्रौर विवाहोत्सवमें ग्राये हुये ग्रतिथियोंको गोमांस खिलानेके सम्बन्धमें 'क्या विवाह-प्रसंगमें गोहत्या ग्रौर गोमांस प्रचलित था ?' शीर्षक प्रबन्ध देखिये।

मुकन्दीलालका लिखनेका भाव यह है कि विवाहमें बरातियोंको गोमांस खिलाया जाता था और इसके लिये उसी समय लाल बैल मारा जाता था तथा उस लाल बेलके कच्चे चर्मका ही वर-वधूके लिये बैठनेको ग्रासनकी तरह उपयोग होता था। ऐसा ही ताजा चर्म अभिषेकके समय राजगद्दीपर बैठने वाले राजाके बैठनेके लिये भी होता था। पाठक विचार करें कि बारातके पहुँचनेके बाद उसी समय लाल बैलकी हत्या करना, उसका ताजा चम वर-वधूके बैठनेके लिये उपयोग करना तथा बैसा ही ताजा कच्चा चर्म राजगद्दीपर बैठने वाले राजाके लिये उपयोग करना ग्रीर उस लाल बैल का मांस वरातियोंको खिलाना कहाँ तक व्यावहारिक है ? उसी समय मारे हुए लाल बैलके ताजा कच्चे चर्मसे रक्त और मांसका रस बहता रहता है जो कितना गन्दा होता है और उससे दुर्गन्ध ग्रातो रहती है। विवाहके या राजितलक के ग्रवसरकी सजावट ग्रादिमें यह चीज खपनी सम्भव भी है क्या ? तिसपर भी मुकन्दीलाल सरीखे लोग ऐसी ग्रसम्भाव्य कल्पनासे पूरी स्थितका विश्लेषण किये बिना ही ग्रपने पद-गौरवकी आड़में लोगोंको भ्रमित करते हैं। ग्राइये, यहाँपर शास्त्र-वाक्योंपर

308

विचार किया जाय।

स्राधुनिक कालमें धर्मशास्त्रोंका विस्तृत स्रध्ययन पाण्डुरंग वामन कारो महोदय द्वारा किया गया था जिसका विस्तृत वर्णन उन्होंने स्रपने क्रँग्रेजी भाषाके ग्रन्थ 'धर्मशास्त्रका इतिहास—History of Dharmasastra में किया है। उस ग्रन्थके दूसरे खण्ड, भाग १ में 'विवाह संस्कार— Ceremonies of Marriage शीर्षकके अन्तर्गत पृष्ठ ५३० के वर्णन से स्पष्ट है कि बैलके चर्मपर केवल वधूको बैठानेका विधान है ग्रीर वह भी वरके साथ वधू विदा होकर वरके घर आ जाती है। उसके बाद उसी समय विवाहाग्निमें वरके द्वारा कुछ ग्राहुतियाँ दी जाती हैं। जो जो गृह्यसूत्र उपलब्ध हो सके, उनके मूल पाठसे भी यही बात प्रमाणित होती है। ऐसी ग्रवस्थामें कन्या पक्ष द्वारा बारातियोंको गोमांस खिलानेके लिये उसी समय बैलकी हत्या करके उसके ताजा चर्मके ऊपर वर-वधूको बैठाकर विवाह-संस्कार करानेकी मुकन्दोलालकी बात स्पष्टतया मिथ्या सिद्ध हो जाती है।

ग्राजकल गृह्यसूत्रोंके सब ग्रन्थ उपलब्ध नहीं हैं। बहुत चेष्टा करनेपर ग्राइवलायन, काठक, वाराह, बौधायन, पारस्कर, गोभिल, भारद्वाज ग्रौर खादिर गृह्यसूत्र देखनेको उपलब्ध हो सके हैं।

इन सब जगहों में अनडुहके रोहित या लोहित चर्मका उल्लेख है। किन्तु बौधायनगृह्यसूत्रमें रोहित रंगका उल्लेख नहीं है। बैठनेके लिये आसनकी जगह गोचर्मके आसनका प्रचलन साधारणतया देखनेमें नहीं आया। जहाँ चर्मके आसनका उपयोग होता है, वहाँ मृगचर्मका या व्याध्यचर्मका ही प्रचलन देखा जाता है। विवाह संस्कारके किसी अंगमें गोचर्मका आसन भी मान लिया जाय तो इससे यह सिद्ध नहीं होता कि आसनके लिये गोचर्म प्राप्त करनेको गोवंशकी हिंसा करनी पड़ती थी। अपने आप अपनी मौत मरनेवाले पशुओंके चर्म तो उपलब्ध होते ही हैं जिनको सभी उपयुक्त कामोंमें उपयोगमें लाया जाता है। रोहित या लोहित रंगके गाय-बैल भी मरते ही हैं। यदि विवाहके किसी संस्कारके लिये गोचर्म या रोहित गोचर्मकी आवश्यकता हो तो विना हिंसाके प्राप्त गोचर्मको भी तो वैसे अवसरोंपर आसनकी जगह उपयोग करनेके लिये रक्खा जा सकता

क्या विवाह एवं राज्याभिषेकके शुभ ग्रवसरपर लाल वैलके २०७ चर्मके लिये हिंसा होती थी ?

है। मूल पाठके शब्दोंसे खींच-तान करनेपर भी न तो यह ग्रर्थ निकलता है कि उसी ग्रवसरपर गाय या बैलकी हत्या करके ग्रासनके लिये चर्म प्राप्त करना होता था तथा न उस बैलका मांस बारातियोंको खिलानेका ग्रर्थ निकलता है। जो-जो गृह्यसूत्र उपलब्ध हो सके उनका मूल पाठ नीचे दिया जा रहा है। संस्कृतका ज्ञान रखने वाले पाठक स्वयं देख लें—

#### १. ग्राश्वलायनगृह्यसूत्र १.८.६-

विवाहाग्निमुपसमाधाय पश्चादस्याऽऽनडुहं चर्माऽऽस्तीर्य प्राग्गीवमुत्तरलोम तिस्मन्तुपविष्टायां समन्वारब्धायाम् । ग्रा नः प्रजां जनयतु प्रजापतिरिति चतसृभिः प्रत्यृचं हुत्वा समञ्जन्तु विश्वेदेवा इति दघ्नः प्राश्य प्रतिप्रयच्छेदाज्यशेषेण वाऽनिक्त हृदये ॥६॥

२. पण्डित वासुदेव कृत शांखायनगृह्यसंग्रह (श्री सोमनाथ उपाध्याय द्वारा संशोधित, सन् १६० द संस्कररण)—

आनडुहहोमकर्म वक्ष्यामः । स्रत्र स्तरगाद्याघाराज्यभागाः पाक्षिकाः । उपलेपनोल्लेखनाघाराज्यभागं कृत्वा ततो लोहिते बलीवर्दचर्मगि वधूमुपवेशयन्ति । ततो वधूः कुशैरन्वारभते पतिर्जुहोति ।

३. काठक(लौगाक्षि)गृह्यसूत्र ३.४.४ (२५.४)—

रोहिण्या मूलेन वा यद्वा पुण्योक्तमपरेगाग्निमानडुहे रोहिते चर्मण्युप-विश्यापि वा दर्भेष्वेव जयप्रभृतिभिर्हु त्वाग्निरेतु प्रथम इति च।

४. वाराहगृह्यसूत्र (Gaekwad's Oriental Series No. XVIII., Edited by R. Same Sastry B. A., 1921 edition योक्रवंधनम् प्रकररा, पृष्ठ १८)—

पश्चादग्ने रोहिते चर्मण्यान हुहे प्राग्ग्रीवे लोमतो दर्भानास्तीर्य तेष वधूमुपवेशयति ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

305

विचार किया जाय।

ग्राघुनिक कालमें धर्मशास्त्रोंका विस्तृत ग्रध्ययन पाण्डुरंग वामन कारो महोदय द्वारा किया गया था जिसका विस्तृत वर्णन उन्होंने ग्रपने ग्रँगेजी भाषाके ग्रन्थ 'धर्मशास्त्रका इतिहास—History of Dharmasastra में किया है। उस ग्रन्थके दूसरे खण्ड, भाग १ में 'विवाह संस्कार— Ceremonies of Marriage शीर्षकके अन्तर्गत पृष्ठ ५३० के वर्णन से स्पष्ट है कि बैलके चर्मपर केवल वधूको वैठानेका विधान है ग्रीर वह भी वरके साथ वधू विदा होकर वरके घर आ जाती है। उसके वाद उसी समय विवाहाग्निमें वरके द्वारा कुछ ग्राहुतियाँ दी जाती हैं। जो जो गृह्यसूत्र उपलब्ध हो सके, उनके मूल पाठसे भी यही वात प्रमाणित होती है। ऐसी ग्रवस्थामें कन्या पक्ष द्वारा बारातियोंको गोमांस खिलानेके लिये उसी समय बैलकी हत्या करके उसके ताजा चर्मके ऊपर वर-वधूको बैठाकर विवाह-संस्कार करानेकी मुकन्दोलालकी वात स्पष्टतया मिथ्या सिद्ध हो जाती है।

ग्राजकल गृह्यसूत्रोंके सब ग्रन्थ उपलब्ध नहीं हैं। बहुत चेष्टा करनेपर ग्राइवलायन, काठक, वाराह, बौधायन, पारस्कर, गोभिल, भारद्वाज ग्रौर खादिर गृह्यसूत्र देखनेको उपलब्ध हो सके हैं।

इन सब जगहों में अनडुहके रोहित या लोहित चर्मका उल्लेख हैं। किन्तु बौधायनगृह्यसूत्रमें रोहित रंगका उल्लेख नहीं है। बैठनेके लिये आसनकी जगह गोचर्मके आसनका प्रचलन साधारणतया देखनेमें नहीं आया। जहाँ चर्मके आसनका उपयोग होता है, वहाँ मृगचर्मका या व्याझचर्मका ही प्रचलन देखा जाता है। विवाह संस्कारके किसी अंगमें गोचर्मका आसन भी मान लिया जाय तो इससे यह सिद्ध नहीं होता कि आसनके लिये गोचर्म प्राप्त करनेको गोवंशकी हिंसा करनी पड़ती थी। अपने आप अपनी मौत मरनेवाले पशुआंके चर्म तो उपलब्ध होते ही हैं जिनको सभी उपयुक्त कामोंमें उपयोगमें लाया जाता है। रोहित या लोहिन रंगके गाय-बैल भी मरते ही हैं। यदि विवाहके किसी संस्कारके लिये गोचर्मका भी तो वैसे अवसरोंपर आसनकी जाह उपयोग करनेके लिये रक्खा जा सकता

क्या विवाह एवं राज्याभिषेकके शुभ ग्रवसरपर लाल बैलके २०७ चर्मके लिये हिंसा होती थी ?

है। मूल पाठके शब्दोंसे खींच-तान करनेपर भी न तो यह ग्रर्थ निकलता है कि उसी ग्रवसरपर गाय या वैलकी हत्या करके ग्रासनके लिये चर्म प्राप्त करना होता था तथा न उस वैलका मांस बारातियोंको खिलानेका ग्रर्थ निकलता है। जो-जो गृह्यसूत्र उपलब्ध हो सके उनका मूल पाठ नीचे दिया जा रहा है। संस्कृतका ज्ञान रखने वाले पाठक स्वयं देख लें—

१. ग्राश्वलायनगृह्यसूत्र १.८.६—

विवाहाग्निमुपसमाधाय पश्चादस्याऽऽनडुहं चर्माऽऽस्तीर्य प्राग्गीवमुत्तरलोम तस्मिन्नुपविष्टायां समन्वारब्धायाम् । ग्रा नः प्रजां जनयतु प्रजापतिरिति चतसृभिः प्रत्यृचं हुत्वा समञ्जन्तु विश्वेदेवा इति दघ्नः प्राश्य प्रतिप्रयच्छेदाज्यशेषेग् वाऽनक्ति हृदये ॥१॥

२. पण्डित वासुदेव कृत शांखायनगृह्यसंग्रह (श्री सोमनाथ उपाध्याय द्वारा संशोधित, सन् १६०८ संस्करण)—

आनडुहहोमकर्म वक्ष्यामः । स्रत्र स्तर्गाद्याघाराज्यभागाः पाक्षिकाः । उपलेपनोल्लेखनाघाराज्यभागं कृत्वा ततो लोहिते बलीवर्दचर्माग् वधूमुपवेशयन्ति । ततो वधूः कुशैरन्वारभते पतिर्जु होति ।

३. काठक(लौगाक्षि)गृह्यसूत्र ३.४.४ (२८.४)—

रोहिण्या मूलेन वा यद्वा पुण्योक्तमपरेगाग्निमानडुहे रोहिते चर्मण्युप-विक्यापि वा दर्भेष्वेव जयप्रभृतिभिर्हु त्वाग्निरेतु प्रथम इति च।

४. वाराहगृह्यसूत्र (Gaekwad's Oriental Series No. XVIII., Edited by R. Same Sastry B. A., 1921 edition योक्रवंधनम् प्रकररा, पृष्ठ १८)—

पश्चादग्ने रोहिते चर्मण्यान हुहे प्राग्ग्रीवे लोमतो दर्भानास्तीर्य तेष वधूमुपवेशयति । ५. बौधायनगृह्यसूत्र १.५.५—

ग्रथेनामानडुहे चर्मण्युपवेशयति—'इह गावः प्रजायध्विमहाद्वा इह पूरुषाः । इहो सहस्रदक्षिणो रायस्पोषो निषीदतु' इति ।

६. पारस्करगृह्यसूत्र १.८.१० -

तां दृढ़पुरुष उन्मथ्य प्राग्वोदग्वाऽनुगुप्त स्रागार स्रानडुहे रोहिते चर्मण्युपवेशयित इह गावो निषीदन्त्विहाश्वा इह पूरुषाः। इहो सहस्र-दक्षिगो यज्ञ इह पूषा निषीदित्विति।

- ७. गोभिलगृह्यसूत्र २.२.३— श्रपरेगाऽग्निमानडुहं रोहितञ्चर्म प्राग्गीवमुत्तरलोमास्तीर्गं भवति ।
- दः मारद्वाजगृह्यसूत्र १.१८ —

  पुनस्तान्यज्ञिया देवा नयन्तु यत ग्रागता इत्यथैनां गृहानुह्या
  नडुहे रोहिते चर्मण्युपवेशयतीह गावो निषीदन्त्विहाश्वा इह पूरुषाः ।
- ह. खादिरगृह्यसूत्र १.४.२—

  बाह्यराकुलेऽग्निमुपसमाधाय पश्चादग्नेलोहितं चर्मानडुहमुत्तरलोम

  प्राग्ग्रीवमास्तीर्यं वाग्यतामुपवेशयेत् ॥

मानवगृह्यसूत्रकी मूल पुस्तक तो नहीं मिली, किन्तु M. J. Dresden का ग्रँग्रेजी अनुवाद मिला है। उसमें भी यही क्रम है कि श्वशुरालयमें ग्रानेके बाद वधूको वैसे ग्रासनपर बैठाते हैं, जिसमें हिंसाकी गन्ध भी नहीं है। उसमें चर्मपर कुशके तृगा फैलानेकी बात भी लिखी है ग्रथवा केवल कुशासनपर बैठानेकी बात भी लिखी है। उसको नीचे उद्धृत किया जाता है—

"To the west of fire, he causes the bride to sit down upon a red bull-skin, of which the neck is turned eastward on the hairy side, after having bestrewn it (i.e. the skin) with Darbha-grass, or (he causes her to) sit down on Darbha-grass (only).

(Manava-Grihyasutra 1.147)

#### क्या विवाह एवं राज्याभिषेकके शुभ ग्रवसरपर चर्मके लिये २०६ लाल बैलकी हिंसा होती थी ?

मैक्समूलर सरीखे व्यक्ति भी, जिसका उद्देश्य ही हिन्दुस्रोंके मनसे गौकी पूज्य भावना नष्ट करनेका था, ग्रनेक गृह्यसूत्रोंके ग्रंग्रेजो ग्रनुवाद में कहीं भी यह ग्रंथं खींचतान करके भी नहीं कर सके कि विवाहके अवसरपर उसी समय लाल बैलको मारकर वर-वधूके लिये उसके कच्चे चर्मका ग्रासन बनाया जाता था तथा उसका मांस बारातियों को खिलाया जाता था। (देखिये Sacred Books of the East, edited by F. Max Muller, Vol. XXIX & XXX Grihya-Sutras Part I & II) गृह्यसूत्रोंके ग्रनिरक्त विवाह-पंस्कारकी विधिका वर्णन ग्रौर तो कहीं है-नहीं। फिर पता नहीं, मुकन्दीलालने यह कहाँसे खोज निकाला कि प्राचीन भारतमें विवाहोत्सवके समय गोहत्या शुभ मानी जाती थी ग्रौर वेदीके सम्मुख वर-बधूको लाल बैलके कच्चे चर्मपर बैठना पड़ता था तथा वह कच्चा चर्म उस लाल बैलका होना चाहिये जो विवाहोत्सवमें आये हुए ग्रतिथियोंको खिलानेके लिये उसी अवसर पर मारा गया हो।

उपर्युक्त विवेचनसे इतना तो सिद्ध हो जाता है कि विवाहके पश्चात् जब वध्न विदा होकर ग्रपने श्वसुरालयमें ग्राती है, वहाँ किसी विधिको पूरा करने के लिये उसको बैलके चर्मके ग्रासनपर बैठना होता भी था तो उसके लिये हिंसा नहीं होती थी।

रोहित शब्दके ग्रर्थं मोनियर-विलियम्स संस्कृत-ग्रंग्रेजी कोशमें निम्न-लिख्त भी हैं—

- (i) a red deer लाल हरिएा
- (ii) a red mare लाल घोड़ी
- (iii) a red or chestnut horse लाल घोड़ा।

ग्रतः 'रोहिते चर्मणि' वाक्यका ग्रर्थ बैल एवं लाल हरिण, या लाल घोड़ी या लाल घोड़का चर्मभी बन सकता है।

## अनडुह् ग्रौर गोचर्मका ग्रर्थ

बौधायनगृह्यसूत्र, पारस्करगृह्यसूत्र ग्रौर भारद्वाजगृह्यसूत्रके ऊपर दिये पाठके ग्रनुसार जहाँ 'ग्रानडुहे रोहिते चर्माण उपवेशयति' वाक्य है वहींपर 'इह गावो निषीदन्तु, इह ग्रश्वाः, इह पूरुषाः' वाक्य भी है, जिसका ग्रथं है—'यहीं गायें बैठें, यहीं ग्रश्व ग्रौर यहीं पुरुष ।' संस्कृतमें गौ शब्द

बैल वाचक भी है! इसका भाव यह हो सकता है कि बारातके लौटनेपर रथोंमें जुते हुए बैल भी वहीं बैठें ग्रर्थात् रहें, वहीं ग्रश्व भी ग्रीर वहीं पुरुष ग्रथात् बाराती भी। एक बैलके या मृगके चर्मपर बैठनेका जितना स्थान होता है उसमें इतने बैल, ग्रश्व ग्रीर पुरुष कैसे समा सकते हैं? 'इह गाबो निषीदन्तु, इह ग्रश्वाः, इह पूरुषाः' इस वाक्यको सार्थक करनेके लिये पारस्करगृह्यसूत्रके 'ग्रनुगुप्त ग्रागारे ग्रानुहुहे रोहिते चर्माण उपवेद्याति' का क्या ग्रर्थ सम्भव हो सकता है—इसपर भी विचार करना चाहिये। इसका समाधान पं॰ श्रीदीनानाथ शास्त्री सारस्वतने ग्रपने 'सनातनधर्मानोक'' के छठे सुमनके पृष्ठ ४३६-४४० पर किया है जिसका संक्षेप नीचे दिया जा रहा है—

१—'रिन्तिकोषके' (ग्रनड्वान् वृषभः प्रोक्तस्त्वनड्वान् मुख्य ग्रालये । नारीयुक् प्रज्वलद्दीपमनडुत् कौतुकं गृहम्) प्रमाणके ग्रनुसार 'ग्रनडुह्' शब्द मुख्य-गृहका या विवाह-मण्डपस्थित कौतुकागारका वाचक है। 'ग्रनो वहति—इति ग्रनड्वत्' यह 'ग्रनडुह्' शब्दका निर्वचन है। पति-पत्नीरूप रथको धारण करनेवाले मुख्य निवासगृहका नाम भी उक्त कोषके ग्रनुसार 'ग्रनडुह्' ठीक है।

वाचस्पत्य कोषमें 'ग्रनडुह् श्रासन्नदेशादौ' लिखा है, जिसका अर्थ है— 'समीप प्रदेश' आदिमें 'ग्रनडुह्' शब्दका प्रयोग होता है। यह भी विवाह-मण्डपके निकटके कौतुकागारका वाचक है, जहाँ वधूको या वर ग्रौर वधू दोनोंको बैठाना उपयुक्त भी है।

- २—'रोहिते चर्मिए।' का ग्रर्थ लाल चर्म भी हो सकता है एवं लाल हरिण या लाल घोड़ी या घोड़ेका चर्म भी हो सकता है। बैठने के लिये मृगछालाके आसनका उपयोग होता ग्राया है। उपर्युक्त दोनों ग्रर्थोंके ग्रनुसार पारस्करगृह्यसूत्रके १.८.१० सूत्रके ग्रन्तांत 'ग्रनुगुप्ते ग्रागारे ग्रान्डुहे रोहिते चर्मिए। उपवेशयित' वाक्यका ग्रर्थ होगा—(ग्रनुगुप्ते) ग्राच्छादित (आगारे) भवनमें (ग्रान्डुहे) विवाहमण्डपके निकट कौतुकगृहमें (रोहिते) मृगचर्मपर (उपवेशयित) बैठाता है।
- ३—बैलका चर्म भी गोचर्म ही कहा जाता है। गोचर्मके क्या-क्या ग्रथं हैं, उसपर विचार कीजिए। 'गोचर्म' के पारिभाषिक ग्रर्थ इस प्रकार बताये गये हैं—

#### क्या विवाह एवं राज्याभिषेकके शुभ ग्रवसरपर चर्मके लिये २११ लाल बैलकी हिंसा होती थी ?

(क) याज्ञवल्क्य स्मृतिकी मिताक्षरा टोकामें-

'दशहस्तेन दण्डेन त्रिशद्-दण्डनिवर्त्तनम्। दश तान्येव गोचर्म'

ग्रर्थात्र—दस हाथका एक दण्ड, तीस दण्डका एक निवर्त्तन होता है। ऐसे दस निवर्त्तनके बराबर भूमिका क्षेत्र गोचर्म कहलाता है।

निवर्त्तनका ग्रर्थ मोनियर-विलियम्स संस्कृत-ग्रंग्रेजी कोष, पृष्ठ ५६०, कालम १ में इस प्रकार है--

a measure of land (20 rods or 200 cubits or 40,000 Hastas square)

ग्रर्थात् — भूमिका एक क्षेत्र जो २० दण्ड या २०० हाथ लम्बी तथा उतनी ही चौड़ी भूमिके बराबर हो।

ग्रंग्रेजी शब्द राड (rod) का ग्रर्थ हिन्दी तथा संस्कृतमें दण्ड भी है। ग्रंग्रेजी शब्द वयुविट (cubit) का ग्रंग्रेजी कोषके ग्रनुसार अर्थ है—हाथकी कोहनीसे लेकर मध्यमा ग्रंगुलीके सिरे तककी लम्बाई, जो १८ से २२ इंच तक होती है। ग्रंग्रेजी कोषमें एक दण्ड (rod) की लम्बाई प्रा। गज या १६॥ फीट दी है जो लगभग दस हाथके बराबर है। याज्ञवल्क्य स्मृतिमें भी दस हाथका एक दण्ड बताया है जो ग्रंग्रेजी कोषोंसे भी मिलान खाता है। याज्ञवल्क्य स्मृतिके ग्रनुसार एक निवर्त्तन होता है तीस दण्ड लम्बी ग्रीर तीस दण्ड चौड़ी भूमिके क्षेत्रके बराबर, ग्रर्थात् ३०० हाथ ४३०० हाथ ह०,००० वर्ग हाथ। किन्तु मोनियर-विलियम्स संस्कृत-ग्रंग्रेजी कोषके ग्रनुसार एक निवर्त्तन २० दण्ड (rod) का ग्रथवा २०० हाथका होता है ग्रर्थात् २०० हाथ लम्बा ४२०० हाथ चौड़ा ४०,००० वर्ग हस्त।

(ख) गोभिलपुत्र-कृत 'गृह्य-संग्रह' १.३६ में— ऋषभैकशतं यत्र गवां तिष्ठति संवृतम् । बालवत्स-प्रसूतानां गोचमं इति संविदुः ।।

अर्थात् —जहाँ १ वृषभ (साँड) तथा १०० गौएँ ग्रपने वछड़ों सहित बैठ सकें, वह भूभाग 'गोचर्म' कहलाता है।

उक्त ग्रन्थके चन्द्रकान्त-भाष्यमें बताया है-

गवां शतं वृषश्चैको यत्र तिष्ठेदयन्त्रितः । एतद् गोचर्ममात्रं तु प्राहुर्वेदविदो जनाः ॥

अर्थात्—जहाँ १०० गौएँ तथा एक वृषभ (साँड) बिना नियन्त्र एके बैठ सकों उस भूभागको वेदवेत्ता लोग गोचर्म कहते हैं।

(ग) 'पद्मचन्द्रकोष' पृष्ठ १३६ में---

गोचर्मका प्रर्थ 'पृथिवीका परिमासा १०० गज लम्बा, ३ गजके निकट चौड़ा' किया है ।

(घ) बृहस्पतिस्मृतिके नवें श्लोकमें—

सवृषं गोसहस्रं तु यत्र तिष्ठत्यतिन्द्रतम् । बालवत्सप्रसूतानां तद् गोचर्म इति स्मृतम् ॥

अर्थात्—एक हजार गाय, वृषभ (साँड) ग्रौर छोटे वत्सों सहित जहाँ सुखपूर्वक बैठ सकें उस परिमाणकी भूमिको गोचर्म कहा जाता है।

गोचर्मका अर्थ मोनियर-विलियम्स संस्कृत-ग्रंग्रेजी कोषके पृष्ठ ३६४ कालम २ में भूमि-क्षेत्रके सम्बन्धमें इस प्रकार दिथा है—

- १. A particular भूमिका वह क्षेत्र जो १०० यह (ख) में दी गयी measure of sur- गायें १ साँड ग्रीर उनके परिभाषासे मिलता face (a place वत्सोंके लिये पर्याप्त हो। है। large enough for the range of 100 cows, one bull and their calves.
- or a place i0 उपर्युक्त भूमि क्षेत्रसे दस यह (घ) में दी गयी time as large; गुणा अधिक। परिभाषासे मिलता है।
- रे. a place 300 २०० फोट लम्बी ग्रौर यह (ग) में दी गयी feet by 10 broad, १० फीट चौड़ी भूमि। परिभाषासे मिलता

# वया विवाह एवं राज्याभिषेकके शुभ ग्रवसरपर चर्मके लिये २१३ लाल बैलकी हिंसा होती थी?

४. or a place 30 एक स्थान जो ३० दण्ड Dandas long by लम्बा और एक दण्ड 1 Danda and सात हाथ चौड़ा हो। 7 Hastas broad.

इसका ढंग (क) में दी गयी परिभाषासे मिलता है, किन्तु वगं क्षेत्रफलसे मिलान नहीं खाता।

्रह्स प्रकार 'गोचर्म' उस स्थानका नाम हुन्ना जहाँ गृह्य-संग्रहके अनुसार शत (१००) गाय, साँड ग्रीर वछड़ों सहित वठ सकें; ग्रथवा वृहस्पति स्मृतिके अनुसार सहस्र (१०००) गाय--साँड भ्रोर वत्सों सहित समा सकें। ये अर्थ संगत भी होते हैं क्यों कि जहाँ 'चर्मणि उपवेशयति' लिखा है वहाँ 'इह गावो निबीदन्तु, इह ग्रहवाः, इह पूरुषाः' ग्रथीत् "यहीं बैल बैठें, यहीं अरव और यहीं पुरुष । यदि पशु चमें ही अर्थ लिया जाय तो एक पशुके चर्मपर उत्सवके प्रवसरपर एकत्रित इतनी रथोंके बैल, अरव ग्रौर पुरुष - सभी कैसे समा सकते हैं। पूर्वोक्त पारिभाषिक ग्रर्थके अनुसार अनेक गाय आदि के बैठने लायक भूमि माननेपर संगति ठीक बैठ जाती है। फलतः शब्दोंका बोलचालका प्रचलित अर्थ ही करना कहीं-कहीं म्रसंगत हो जाया करता है, पूर्वापरके सब प्रसंग देखकर ही किया हुम्रा मर्थ निर्दोप हम्रा करता है। इस प्रकार इसका भाव होगा—'वरके घर पर विवाह मण्डपके निकट भूमिका क्षेत्र इतना पर्याप्त हो, जहाँ उत्सवके समय ग्राये हए रथोंमें जुते हुए बंल, सवारोके अश्व तथा पुरुष सबको स्थान मिल सके ग्रीर वहाँपर प्रदीप्त कीतुकागारमें वधूके लिये लाल हरिणके चर्मका ग्रासन हो।

#### ज्याभिषेकमें चमिसन

मुकन्दीलाल ने अपने लेखमें राजितलक समय राजाको लाल बैलके ताजा व कच्चे चमड़ेपर बैठानेको बात कही है। जिस प्रकार 'गोचमें' का भाव विवाहोत्सवके समयके लिये संगत बताया गया है वही भाव राजितलक अवसरके लिये संगत बैठता है क्योंकि राजितलक उत्सवके समय भी वैसी हो भीड़ होती है जैसी विवाहोत्सवपर होती है।

राजगद्दीपर बैठनेके समय राजाके लिये क्या-क्या संस्कार होते हैं, इसका वर्णन किस ग्रन्थमें है—यह पता नहीं लगा। राजसूय ग्रादि यज्ञोंमें जो

राज्यामिषेक होता है उसमें कहीं-कहीं बैलके चर्मके ग्रासनका उल्लेख है, किन्तु उसी समय हिंसा करके ताजा कच्चा चर्म आसनके लिये उपयोगमें लिया जाय—ऐसा वर्णन कहीं नहीं मिला। जो-जो वर्णन मिले हैं, उनपर विचार किया जाय।

जानेस कारनेलिस हीष्टरमैन (Johannes Cornelis Heesterman) हारा लिखित प्राचीन भारतीय राज्य संस्कार (The Ancient Indian Royal Consecration) नामक पुस्तक देखनेमें आयी जिसके पृष्ठ १०६ पर अध्याय १३ के प्रथम पैरामें निम्नलिखित वर्णन है—

"The unction will be administered to the King while standing up a tiger skin.

[At Mahabhişeka, described by Kausika Sutra, Iikewise a tiger skin is used (17,13). At the Laghvahbişeka, however, a bull's hide is used (17,3).]

Besides the tiger skin. Apastamba-śrautsutra and Varahṡrautsutra prescribe also a throne of khadira (खेरकी लकड़ी) Udumbara (ग्नर की लवड़ी) on which the tiger skin is to be fastened. The other authorities do not use a throne at the unction. The actual enthronement takes place later, after the chariot drive,"

(मौनियर-विलियम्सके संस्कृत-ग्रंग्रेजी कोशके ग्रनुसार 'खादिर' का ग्रथं है-Acacia Catechu (having very hard wood, the resin of which is used in medicine called Catecheu, Khayar Terra japonica) page 336 Col. 3.

#### और 'उदुम्बर' का अर्थ है-

The tree Ficus Glomerata—page 196 Col. 3.

श्रर्थात् राजाका ग्रभिषेक उनको व्याघ्र-चर्मपर खड़े करके किया जायगा । (कौशिक सूत्रके ग्रनुसार महाभिषेकके लिये व्याघ्र-चर्मका ग्रासन होना चाहिये-(सूत्र १७.१३); ग्रौर लघु-ग्रभिषेकके लिये वृषभचर्मका- (सूत्र १७-३)। व्याघ्रचर्मके ग्रतिरिक्त ग्रापस्तम्ब-श्रौतसूत्र तथा

क्या विवाह एवं राज्याभिषेकके ग्रुभ श्रवसरपर चर्मके लिये २१५ लाल बैलकी हिंसा होती थी ?

वाराह-श्रौतसूत्र के अनुसार खदिर (खैर)को लकड़ी या उदुम्बर (गूलर)की लकड़ीका सिंहासन होना चाहिये और उसपर व्याघ्र चर्म स्थित करना चाहिये। अन्योंके मतानुसार अभिषेकके समय सिंहासनकी आवश्यकता नहीं है, रथकी शोभा-यात्राके परचात् ही सिंहासनारोहण होता है।

इसमें कहों भी यह बात नहीं ग्राती कि व्याघ्रचर्म या वृष्भचर्म उसी समय उनकी हिसा करके प्राप्त किया जाता है ग्रीर वह कच्चा चर्म होता है। यह सम्भव हो सकता है कि राज्याभिषेकके लिये नया चर्मासन आवश्यक हो। राज्याभिषेक दिन-प्रति-दिन तो होते नहीं, कभी कदाचित् होते हैं, जिनके लिये वैसा चर्म बिना ग्रीर किसी काममें लाये रक्खा जा सकता है ग्रीर उसे बिना किसी काममें लाये हुए नये चर्मका उपयोग राज्याभिषेकके समय किया जा सकता है। नये चर्मका ग्रर्थ उसी समय हिंसा करके प्राप्त कच्चे चर्मसे नहीं हो सकता। जो चर्म ग्रीर किसी काममें कभी भी न लिया हो ग्रीर केवल भंडारमें रक्खा हो वह नया चर्म ही है। जो-जो श्रीतसूत्र मिल सके उनमें जहाँ-जहाँ चर्मासनका उल्लेख देखनेमें ग्राया उसके मूल पाठ भी सस्कृत जानने वाले पाठकोंकी जानकारीके लिये उद्धृत किये जाते हैं जिससे यह समभमें आ सके कि नया चर्मासन उसी समय हिंसा करके प्राप्त कच्चे चर्मका ग्रासन नहीं है—

१. ग्रापस्तम्बीय श्रौतसूत्र—

स्रग्रेण प्रशास्तुधिष्णियं खादिरीमौदुम्बरीं वासन्दीं प्रतिष्ठाप्यसोमस्य तिविष्यसीति तस्यां शाद्बीलचर्म प्राचीनग्रीवमुत्तरलोमास्तीर्यामृतमसीति तिस्मञ्छतमानं हिरण्यं निधाय दिद्योन्या पाहीति सौवर्णेन शतमानेन शतकरण शतकृष्णलेन वा यजमानस्य शीर्षञ्चिष्य निधते। (१८.१५.४)

उपर्युक्त वर्णन ऊपर कथित 'जानेस कारनेलिस हीस्टरमैन' की ग्रेंग्रेजी पुस्तक 'प्राचीन भारतीय राज्य संस्कार' में कथित सिंहासनके लिये व्यवहृत लकड़ीके वर्णनसे मिलता है।

२, कात्यायन श्रोतसूत्र—

मरुत्वतीयान्ते पात्राणि पूर्वेण व्याघ्रचर्मास्तृणाति

दिविषिरिति।

प्राष्ट्रचर्मास्तृगाति सोमस्य (१५.५.१)

#### प्राचीन भारतमें गोमांस-एक समीक्षा

३ बोधायनश्रोतसूत्र—

श्रज यजमानायतने शार्दू लचर्म प्राचीनग्रीवमुत्तरलोमोपस्तृरगाति ।

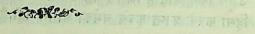
(१२.१०)

४. वाराहश्रौतसूत्र—

₹१६

सोमस्य त्विषरसीति व्याव्रचर्म विवेष्ट्यासन्द्यामास्तृगाति । (३.२.४३)

राजाश्रोंके बैठनेके लिये जो वस्तु व्यवहृत होती है उसका नाम ही सिहासन (सिंह + ग्रासन) है जिसका ग्रर्थ — सिहसे बना आसन । श्रौतसूत्रों में भी व्याघ्न-वर्मके आसनका उल्लेख हो प्रायः मिलता है। जानेस कारनेलिस हीस्टरमेन महोदयने ग्रपनी ग्राग्रेजोकी 'प्राचीन भारतीय राज्यसंस्कार' पुस्तकमें कौशिक सूत्रके ग्रनुसार राजाके लघु ग्रभिषेकके लिये वृषभ-चर्मके ग्रासनका उल्लेख किया है जो ठीक हो सकता है। हमको कौशिक-सूत्रका मूल ग्रन्थ देखनेको नहीं मिल पाया। किन्तु इससे यह ग्रर्थ नहीं निकलता कि वह वृषभ-चर्म तत्काल मारे हुए वृषभका कच्चा चर्म होता हो।



स्थित सोति सहार् नाम् आयोग्याचेषुसरमाहराजेषपुनम्याति सम्बद्धाः स्थान विश्वयं निषापं दियोग्या पासीतः सौयपेत इतिपानेस

व्यक्त भारतीय सारतीय संस्कार में कथित वितास वितास करिया अन्तर

BATH OF THE BUSINESS

366

# वया यात्रवल्वय नरम गोमांस खाते थे ?

ग्रँग्रेजी भाषाकी पुस्तक 'वैदिक इण्डेक्स' खण्ड २, पृष्ठ १४५ पर मैक्डोनेल ग्रौर कीय महोदय 'मांस' शीर्षकके अन्तर्गत लिखते हैं—

"The great sage Yajnavalkya was wont to eat the meat of milch cows and bullocks (dhenv-anaduha) if only it was amsala ('firm' or 'tender'.) (Satapatha Brahmana, iii 1,2,21).

अर्थात्—याज्ञवल्क्य महर्षि दूध देनेवाली गायें और बैलों (धेनु-अनडुहा) का मांस यदि वह ग्रंसल (स्थूल firm ग्रौर कोमल tender) हो तो हो खानेके ग्रभ्यस्त थे। (शतपथ ब्राह्मण ३.१.२.२१)।

इन लोगोंकी देखा-देखी, विना गहराईमें गये हमारे कई भारतीय महोदय भी उन्हींकी रागमें अपनी भी राग ग्रलापने लगते हैं।

इस विषयका पं० श्रोदीनानाथजी शास्त्री सारस्वतने ग्रपनी पुस्तक 'मनातनधर्मालोक' छठे सुमनके पृष्ठ ३७५-३८० पर विशद विवेचन किया है, जिसका सारांश पाठकोंको जानकारोके लिये नीचे दिया जा रहा है।

शतपथ ब्राह्मण ३.१.२.२१ कण्डिकाका मूल पाठ इस प्रकार है-

"ग्रथ एनं (यजमानं) ज्ञालां प्रपादयित । स घेन्वे च ग्रनडुहश्च नाइनीयात् । घेन्वनडुहौ वै इदं सर्वं बिभृतः । ते देवा ग्रबुवन्—घेन्वनडुहौ वै
इदं सर्वं बिभृतः हन्त । यदन्येषां वयसां वीर्यम्, तद् घेन्वनडुहयोदंधाम—इति । यद् ग्रन्येषां वयसां वीर्यमासीत्; तद् घेन्वनडुहयोरदधुः ।
तस्माद् घेनुश्चेव ग्रनड्वाँश्च भूयिष्ठं भुङ्क्तः । तद् ह एतत्
सर्वाश्यमिव, यो घेन्वडुहयोरश्नीयात् । ग्रन्तगितिरव तं ह ग्रिभिद्रतमिभजनितौ जायायै गर्भं निरवधोदिति पापमकद्—इति पापी कीर्तिः ।
तस्माद् घेन्वनडुहयोनश्नियात् । तदु ह उवाच याज्ञवल्क्यः—ग्रश्नाम्येव
ग्रहम् ग्रंसलं चेद् भवतीति" (३.१.२.२१)

#### प्राचीन भारतमें गोमांस-एक समीक्षा

रेश्न

वेदमें गौ ग्रौर बैलको ग्रबध्य कहा है। फिर गौ ग्रौर बैलके किसी भी प्रकारके मांस खानेका प्रश्न ही नहीं उठता। लुप्त-तिद्धित-प्रिक्रियाके अनुसार 'घेनु' (गौ) शब्दसे घेनुसे उत्पन्न पदार्थ अर्थात् दूध और दूधसे बनी दस्तुएँ एवं 'ग्रनुडुह्' (बैल) शब्दसे बैलके द्वारा कृषिसे उत्पन्न खाद्य वस्तुएँ ही मानी गयी है।

शतपथका यह प्रकरण ही भिन्न है। सायणाचार्यने उसे स्पष्ट कर दिया है। जब यजमान क्षौर कराकर स्नान करके वस्त्र पिहरे, तब ग्रध्वर्युं उसका शालामें प्रवेश कराये। तब यजमान यज्ञ-दोक्षाकी पूर्तिके लिये उपवास करे, तब गोदुग्धसे निर्मित मलाई-रबड़ी ग्रादि, तथा बेलके खेतीसे प्राप्त ग्रन्नादि भी न खावे। यहाँ श्रीसायणके शब्द ये हैं—

"ग्रस्यापि (शालाप्रवेश-कर्तुः) ग्रशनकालत्वाद् ग्रत्र ग्रशने कंचिद्व नियममाह—धेन्वं-धेनोः क्षीरादिकम्, ग्रनडुहः सम्बन्धि कर्षणसाध्य-मित्यर्थः, तदुभयं नाश्नीयात् । तद् ग्रश्नतः सर्वाशनं भवति, तस्य च जायाया गर्भ-सम्भवे सति तत् सर्वाशनं तं रेतोरूपेण परिणतं गर्भ हिस्यात्, तत् पापकीर्तिः स्यात् । तद् उभयोः (धेन्वनडुहयोः) (पायसम्) ग्रन्नं (च) नाश्नीयात् तत्र याज्ञवल्यपक्षमाह चेत्-यस्माद् उभया-(धेन्वनडुहा-)न्नाशने शरीरम् ग्रंसलं [बलवद्] भवति, तस्मात् तयोरन्नमश्नीयामेव ।"

सायणाचार्यने स्पष्ट रूपसे गायका दूध ग्रीर बैलको खेतीसे प्राप्त ग्रन्न ग्रादि ग्रथं दिया है। इसमें मांसका उल्लेख हो नहीं।

याज्ञवल्क्य यजमान नहीं हैं जिनके लिये उपवास करना ग्रावश्यक हो। वे पुरोहित हैं। यजमानके लिये यज्ञमें उपवासका विधान दिया गया है। इसपर याज्ञवल्क्य पुरोहित होनेके नाते कहते हैं — ग्रश्नामि एव ग्रहं ग्रंसलं चेद् भवित इति। मैं 'ग्रंसल' तो खा सकता हूँ। ग्रथवा यह ग्रथं नी किया जा सकता है कि याज्ञवल्क्यका पक्ष है कि यज्ञकर्त्ता सर्वथा ग्रनशन करें तो यज्ञ दीर्घकालीन होनेसे दुर्वलताके कारण वह यज्ञ कैसे कर सकेगा? तब उसको शरीरका ग्राधार बनाये रखनेको कुछ तो खाना ही चाहिये। ग्रतः याज्ञवल्क्यका कहना है कि यज्ञकर्त्ता रूपमें भी मैं ग्रंसल खा सकता हूँ —

#### क्यां याज्ञवल्क्य नरम गोमांस खाते थे ?

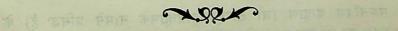
385

ऐसा मेरा मत है। ग्रतः उनके ग्रनुयायो यज्ञकर्ता भी उस प्रकारकी वस्तु खा सकते हैं।

प्रतिपक्षियोंने धेनु ग्रौर ग्रनडुह्के 'ग्रंसल' का ग्रर्थ उनका 'नरम मांस' किया है जो किसी प्रकार संगत नहीं है। युवा धेनु ग्रौर ग्रनडुहका मांस नरम नहीं होता, गो-वत्सका माँस हो नरम होता है। यहाँ गो-वत्सका न तो मूलमें उल्लेख है ग्रौर न प्रतिपक्षियोंके वाक्योंमें।

'अंसल' का ग्रर्थ 'पगु शरीरका मांस' है ही नहीं। पाणिनिके सूत्र ४.२.६ 'वत्सांसाभ्यां कामवले' के ग्रनुसार 'ग्रंसल' का ग्रर्थ 'बलकारक' होता है। अमरकोप २.६.४४ में भी 'ग्रंसल' का ग्रर्थ 'मांसलोंऽसलः' दिया है जिसका भाव है 'ग्रंसल मांसल होता है'। मांसके लिये मांसल कहते नहीं बनता। बलकारक रवड़ी-मलाई ग्रथवा फल मेवे ग्रादि जैसी वस्तुग्रोंके लिये मांसल कहना बन सकता है। ग्रतः यह स्पष्ट है कि 'ग्रंसल' शब्दका ग्रर्थ 'पशु-मांस' नहीं है। 'ग्रंसल' का 'नरम मांस' ग्रर्थ में कोई भी प्रमाण नहीं है। 'ग्रंसल' का वास्तविक ग्रर्थ पुष्टिक रक या बलकारक ही है।

अतः पुरोहितके नाते ग्रथवा यज्ञकत्तांके रूपमें भी याज्ञवल्वय वल-कारक दूध या दूधसे उत्पन्न मनखन, मलाई, रवड़ी या खीर खा सकते हैं तथा उनके ग्रनुयायो भी वैसा कर सकते हैं अथवा उन वस्तुग्रोंका निषेध होनेसे पुष्टिकारक फल, मेवे आदि खा सकते हैं जो न धेनुसे उत्पन्न हैं ग्रौर न ग्रनडुह (बैल) के द्वारा की गयी खेतीसे; इससे शतपथ ब्राह्मणके 'तस्माद् धेनु-ग्रनडुहयोः न ग्रश्नीयात्' निषेध वाक्योंकी भी रक्षा हो जाती है।



(with a wint (singer four consecrated by sprinkl-

# क्या अगस्त्यने सौ साँड मारे थे?

अंग्रेजी भाषाकी पुस्तक वैदिक इण्डेक्स', खण्ड २, पृष्ठ १४५ पर मैकडोनेल और कीथ महोदय 'मांस' शीर्षकके अन्तर्गत लिखते हैं---

"The slaughter of a hundred bulls (ukṣan) was credited to one sacrificer, Agastya. (Taittiriya Brahmana, ii,7,11.1; Pancavimsa Brahmana, xxi.14.5).

ग्रर्थात्—एक सो साँड़ों को हत्या एक यज्ञकर्ता अगस्त्यके द्वारा की गयी थी (तैत्तिरीय ब्राह्मण २.७.११.१; पञ्चिवंश ब्राह्मण २१.१४.५)।

तैत्तिरीय ब्राह्मण २.७.११.१ का मूल पाठ कोष्ठकमें हिन्दी भावार्थ सहित नीचे दिया जा रहा है—

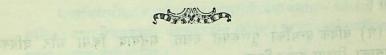
स्रगस्त्यो (ग्रगस्त्यजीने) महद्भ्यः (महत् देवताग्रोंके लिये) उक्ष्णः (साँड़ोंका) प्रोक्षत् (प्रोक्षण किया)। तान् (उनको) इन्द्रः (इन्द्र देवता) स्रादत्त (ले गये)। ते (वे महत् देवता) एनं (इसपर) वज्रम् (वज्र) उद्यत्य (उठाकर) अभ्यायन्त (ट्ट पड़े)। तान् (उनको) स्रगस्त्यः (ग्रगस्त्यजी) चैव (ग्रौर) इन्द्रः च (इन्द्रजीने) कयाशुभीयेन (ऋग्वेदके कयाशुभीय सूक्तसे) स्रशमयताम् (शान्त किया)। तान् (उन्हें) शान्तान् (शान्त होनेपर) उपाह्वयत (समीप बुलाया)। यत् (जो) कयाशुभीयम् (कयाशुभीय सूक्त है) (वह) भवति शान्तयं (शान्तके लिये होता है)।।

पञ्चित्रिश ब्राह्मण (जो ताण्ड्यमहाब्राह्मणके न।मसे प्रसिद्ध है) के २१.१४.५ का भी मूल पाठ कोष्ठकोंमें हिन्दो भावार्थ सहित नोचे दिया जा रहा है—

स्रगस्त्यो वै (अगस्त्यजीने) मरुद्भ्यः (मरुत् देवतास्रोंके लिये) उक्ष्णः (साँड्का) प्रोक्षत् (प्रोक्षरण किया – consecrated by sprinkling)। तान् (उन वैलोंको) इन्द्राय (इन्द्रके लिये) स्रबध्नात् (वाँध

विया)। ते (वे मरुत् देवता) वज्यम् (वज्य) ग्रादाय (लेकर) ग्रभ्य-पतन् (टूट पड़े । स (उन्होंने, ग्रगस्त्यने) एतत् (यह) कयाशुभीयम् (कयाशुभीय सूक्त) ग्रपश्यत् (देखा)। तेन (इससे) ग्रशमयत् (उन मरुत् देवताग्रोंके कोपका शमन किया)।

Monier-Williams के संस्कृत-ग्रंग्रेजो कोशमें 'श्रोक्षण' का ग्रर्थ consecretion by sprinkling किया है जिसका अर्थ है जलके छींटों के द्वारा पिवत्रोकरण । यहाँ पिवत्रोकरणका भाव पूर्वापर प्रसंगसे भी हिसाके लिये नहीं हो सकता । वेदों में गोवंशको सभी प्रकारसे ग्रघ्न्य—ग्रबध्य वताया गया है । लेकिन गोमांस-लोलुपों को सर्वत्र गोहिसा ही हिष्टिगोचर होती है, जैसे कामी पुरुषकी ग्रन्तह ष्टिमें जाग्रत्में भी नारी ही बसी रहती है ग्रौर स्वप्नमें उसीका साथ बना रहता है। जब गोवंश सब प्रकारसे ग्रबध्य है तो यह 'श्रोक्षण' दानके निमित्त माननेमें कोई भी बाधा नहीं ग्राती है।



(इ) संस्कृत वादाको पातृसादा स्थोकार नहीं होने दिया जो कमने

गलामीको के दूर करा गका

# परिशिष्ट

#### पाइचात्य संस्कृतज्ञोंकी नीयत (पृष्ठ ४६ पर ग्रन्तमें पढ़ा जाय)

- (ग) भारतमें ग्रायोंके ग्रन्य देशसे ग्रानेके ग्रत्यन्त काल्पनिक ग्रीर निराधार सिद्धान्तका प्रमुखतासे प्रचार किया जिससे भारत ग्रीर मिश्र ग्रादि देशोंके प्रथम राज्याभिषिक्त मनुका, मनुके यशस्वी पुत्र इक्ष्वाकुका, शकुन्तलाके यशस्वीपुत्र चक्रवर्ती भरतका, गंगाके प्रवाहका परिवर्तन करनेवाले भगीरथका, जिनके नामके पीछे पुण्यभूमिका नाम कुरुक्षेत्र पड़ा उन कुरुका, दाशरिथ श्रीरामका एवं ग्रन्य ग्रनेक राजाग्रोंका नामोनिशान ही भिट ज ता है।
- (घ) वैदिक ग्रन्थोंका पूर्णरूपसे गलत ग्रनुवाद किया ग्रौर वैदिक सम्यताका मिण्या वर्णन किया।
- (ङ) संस्कृत भाषाको मातृभाषा स्वीकार नहीं होने दिया जो कमसे कम भारत-यूरोपीय संघकी मातृभाषा थी, जिसका फांज बाप (Franz Bopp) ने बड़ी योग्यताके साथ प्रतिपादन किया था ग्रौर प्राचीन भारतीय लेखकोंने भी जिसका बहुधा उल्लेख किथा है।

इन सब बातोंका हमको कोई दुःख नहीं है, क्योंकि संस्कृत-ग्रध्ययनके ऐसे पक्षपातवाले विदेशी मार्गदर्शकोंसे ग्रौर आशा ही क्या की जा सकती थी।

यह थोड़ी-सो चर्चा करते हुए, हम नम्रतापूर्वक यही प्रार्थना करते हैं कि भारतवर्षके सभी विचारशील विद्वान इस सत्यको समभें, जिससे कि स्राजकलके राजनैतिक स्रोर व्यक्तिगत स्वातन्त्र्यके युगमें पश्चिमकी बौद्धिक गुलामीको वे दूर फेंक सकें।

### क्या बृहदारण्यक उपनिषद्में गोमांस-भक्षणका विधान है ? जगद्गुरु श्रो ग्रादि-शंकराचार्यकी टीका (पृष्ठ ६८ के ग्रन्तमें पढ़ा जाय)

वृहदारण्यक उपनिषद्की गोमांसके विधानके सम्बन्धकी मतभेदवाली जिस ६.४.१८ कण्डिकाका उल्लेख किया जाता है, उसकी जगद्गुरु श्रीग्रादि-शंकराचार्यकी टीकाका उल्लेख करते हुए कई महानुभाव कहते हैं कि उस टीकासे यह स्पष्ट है कि जगद्गुरु श्रीग्रादि-शंकराचार्यने भी चारों वेदों पारंगत सन्तानके इच्छुक दम्पतीके लिये गोमांस मिश्रित पुलावके खानेके विधानको स्वीकार किया है। उस टीकाकी शब्दावली इस प्रकार है—

"विविधं गीतो विगीतः प्रख्यात इत्यर्थः । सिर्मितगमः सभा गच्छतोति प्रगल्भ इत्यर्थः । पाण्डित्यस्य पृथग्ग्रहणात् । शुश्रूषितां श्रोतुमिष्टां रमणीयां वाचं भाषिता संस्कृताया श्रर्थवत्या वाचो भाषितेत्यर्थः ।

मांसिमश्रमोदनं मांसौदनम् । तन्मांसिनयमार्थमाह — ग्रौक्षेगा वा मांसेन । उक्षा सेचनसमर्थः पुंगवस्तदीयं मांसम् । ऋषभस्ततोऽप्यधिक-वयास्तदीयमार्षभं मांसम् ।"

इनमेंसे पहले श्रंशके श्रर्थमें तो कोई मतभेद है नहीं, जो इस प्रकार है—

"नाना प्रकारसे जिसकी महत्ता गायी जाय, वह विगीत कहलाता है। विगीत अर्थात् प्रख्यात। सिमितिगम—विद्वानोंकी सभामें जानेवाला निर्भीक या प्रगल्भ। सिमितिगमः का प्रथ विद्वान् या पण्डित इसलिये नहीं किया गया कि मन्त्रमें पाण्डित्यका पृथ्क ग्रह्ण देखा जाता है। शुश्रिषतां—सुननेमें प्रिय, रमणीयवाणीका वक्ता ग्रर्थात् संस्कारयुक्त सार्थक वाणी बोलनेवाला।"

दूसरे ग्रंशका शब्दार्थ इस प्रकार बनता है-

"मांस मिश्रित ग्रोदन मांसौदन। उस मांसको नियमित करनेके लिये कहते हैं—या तो उक्षाका मांस, उक्षा—सेचन-समर्थ-पुंगव— उसका मांस। ग्रथवा ऋषभका जो उससे भी ग्रधिक वयसका हो, उसका ऋषभ मांस।"

## परिशिष्ट

यह तो हुग्रा शब्दार्थ । जगद्गुरु श्रीग्रादि शंकराचार्यने न तो यह स्पष्ट किया है कि यह पशु-मांस हो और न यह स्पष्ट किया है कि फलौषधिका मांस (गूदा) हो । ऐसी हाल तमें पूर्वापर प्रसंगके ग्रनुसार हमको स्वयं विचार करना होगा कि यहाँ पशु-मांस समीचीन है या फलौषधिका मांस (गूदा-रस ग्रादि) । 'सेचन समर्थ पुंगव' या 'उससे भी ग्रधिक वयसका ऋषभ' इनके ग्रथौंपर विचार करनेसे बात स्पष्ट हो जायगी । 'सेचन-समर्थ' के ग्रथै 'गर्भावानमें स-र्थ' में कोई मतभेदकी बात नहीं है । 'उक्षा' 'पुंगव' 'ऋषभ' ग्रौर 'वयस' शब्दोंका ग्रथं विचारणीय है ।

'उक्षा' शब्दके ग्रर्थका विवेचन पहिले हो चुका है।

मोनियर-विलियम्सके संस्कृत-ग्रंग्रेजी कोशमें 'पुंगव' का ग्रर्थ पृष्ठ ६३०, कालम ३ में नीचेसे द-११ पंक्तियों में इस प्रकार दिया है—

a bull, a hero, eminent person, chief of, a kind of drug.

एक साँड, एक वीर, प्रसिद्ध पुरुष, नायक, एक प्रकारकी ग्रौषिध। 'उक्षा—सेचनसमर्थः पुंगव' के ग्रथं इस प्रकार बनेंगे—

- १. गर्भाघानमें समर्थ श्रेष्ठ साँड
- २. गर्भाधानमें समर्थ वीर
- ३. गर्भाघानमें समर्थ प्रसिद्ध पुरुष
- ४. गर्भाघानमें सन्तर् नायक
- गर्भाधानमें समर्थ एक प्रकारकी स्रौषिध ।

ग्रायुर्वेदशास्त्रमें गर्भाधानमें समर्थ ग्रौषिधको बाजीकरण ग्रौषिध कहा जाता है, सोमरस भी बाजीकरण औषिध है जो देवगण्को हुत प्रिय है। हिन्दू धर्मशास्त्रोंके ग्रनुसार देवयोनि पुण्योंका भोग भोगनेके लिये मिलती है जिसमें ग्रपनी-ग्रपनी वासनाके अनुसार सभी भोग सिम्मिलत हैं। पुराणोंमें पुण्यभोगी देवताग्रोंकी कामुकताकी ग्रनेक कथाएँ मिलती हैं। ग्रतः कोई ग्राइचर्य नहीं कि पुण्यभोगी देवताग्रोंको ग्रपनी इस प्रकारकी सामर्थ्य बनाये रखनेके लिये गर्भाधानमें समर्थ सोमरस ग्रौषिध बहुत प्रिय हो। ग्रब पाठक स्वयं विचार करें कि पूर्वापर प्रसंगके ग्रनुसार उपर्युक्त पाँचों ग्रथौंमें-से कौनसा ग्रथं समीचीन होगा? पूर्वापर प्रसंगके ग्रनुसार 'उक्षा सेचनसमर्थ पुंगव' का समीचीन ग्रर्थ होगा 'गर्भाधानमें समर्थ ग्रौषिध उक्षा— सोमरस'।

'ततः ग्रिप ग्रिधिक वयाः' का ग्रर्थ होता है 'उससे भी ग्रिधिक वयसका'। 'वय' शब्द 'वयस्' से वनता है। मोनियर-विलियम्स संस्कृत-ग्रंग्रेजी कोशमें 'वयस्ः के ग्रर्थ पृष्ठ ६२०, कालम २-३ में इस प्रकार दिये हैं—

- 1, enjoyment, food, meal, oblation;
- 2. energy (both bodily and mental), strength, health, vigour, power, might;
- 3. vigourous age, youth, prime of life, any period of life, age.

#### ग्रथित् -- ग्रानन्दोपभोग, खाद्य, भोजन, यज्ञकी ग्राहुति ;

- २. शक्ति, स्वास्थ्य, पौरुष, सामर्थ्य;
- ३. ग्रोजस्वी ग्रायु, यौवन, जीवनका सार भाग, जीवनका कोई भाग, ग्रायु।

#### इनके अनुसार 'ततः अपि अधिक-वयाः' का अर्थ बनेगा—

- १. उससे भी अधिक आनन्ददायक
- २. उससे भी श्रधिक पौरुषवान्
- ३. उससे भी ग्रधिक ग्रोजस्वी ग्रायु

'ऋषभ' का मोनियर विलियम्स संस्कृत-ग्रंग्रेजी कोषके ग्रर्थींका विवरण पहिले ग्रा चुका है। ग्रमरकोषमें वनौषिधवर्गके ग्रन्तर्गत २।११६ में लिखा है—

"श्रङ्की तु ऋषभो वृष:—काकड़ासींगीके नाम श्रङ्की, ऋषभ एवं वृष हैं।" यह काकड़ासींगी भी शुक्रवर्द्धक श्रौषधि है।

यदि यहाँपर गोवंशके ऋषभका मांस माना जाय तो 'ऋषभः ततः अपि अधिक वयाः' का अर्थ बनेगा — 'गोवंशके गर्भाधानमें समर्थ उक्षासे भी अधिक आयु वाला गोवंशका ऋषभ'। किन्तु वस्तुस्थिति यह होती है कि गर्भाधानके लिये समर्थ ग्रोजस्वी ग्रायु चढ़ती हुई युवा अवस्था होती है, ढलती हुई नहीं। ग्रतः यह ग्रर्थ बहुत उपयुक्त नहीं बैठता।

पूर्वापर प्रसंगके ग्रनुसार 'ऋषभः ततः ग्रपि ग्रधिक-वयाः' का ग्रथं बनेगा "उक्षा—सोमरससे ग्रधिक पौरुषवान् 'ऋषभ' नामक ग्रष्टवर्गकी ग्रौषधिः," जिसका आयुर्वेद-चिकित्सक धनीवर्गको ग्रपनी कामोपभोग-सामर्थ्यको नष्ट होनेसे बचाये रखनेके लिये स्वच्छन्दतासे सेवन कराया करते हैं। ये ग्रष्टवर्गकी ग्रोषधि शुक्रवर्द्धक होती है।

वेदोंमें गोवंश ग्रवध्य होनेके कारण गोमांस खानेका विधान ग्रसम्भव है और इस ग्रध्याय-ब्राह्मणकी प्रथम कण्डिकामें विशात वस्तुग्रोंमें —िजनका

२२६ कि कि परिशिष्टी कि विश्व विश्व

सार उत्तम, गुद्ध, सात्विक गुक्र होता है—कहीं पशुमांसका उल्लेख नहीं है एवं वेदोंमें पारंगत सात्विक सन्तान उत्पादनके लिये गुद्ध सात्विक गुक्र ही ग्रावश्यक है। ग्रतः यहाँपर उक्षा ग्रीर ऋषभका ग्रर्थ पशुमांस कदापि नहीं बन सकता है, केवल गुद्ध फलौषिधका ही मांस (गूदा—सार) हो सकता है।

गोवंशके साँड्वाचक 'उक्षा' ग्रीर 'ऋषभ' शब्दोंका ग्रर्थ किसी भी कोशमें ऐसा नहीं मिलता जिससे यह समभा जाय कि 'उक्षा' छोटी ग्रायुका गर्भाधानमें समर्थ साँड है ग्रीर 'ऋषभ' उससे वड़ी ग्रायुका गर्भाधानमें समर्थ साँड है। यदि जगद्गुह श्रीग्रादि-शंकराचायका मत 'उक्षा, ग्रीर 'ऋषभ' दोनोंका ग्रर्थ गर्भाधानमें समर्थ साँड का मान लिया जाय चाहे उनमें-से एक छोटी ग्रायुका हो ग्रीर दूसरा उससे वड़ी ग्रायुका हो तब 'उक्षा' ग्रीर ऋषभ' दोनोंका मिलकर अर्थ गोवंशका ऐसी ग्रायुका साँड वनेगा जिस ग्रायु तक वह गर्भाधानमें समर्थ है। यदि मांसौदनमें किसी भी ग्रायुके गर्भाधानमें समर्थ गोवंशके साँडका मांस ग्राभिन्नत होता तो इस कण्डिकाके मूल पाठमें शब्दावली होती 'गोवंश श्रीक्षेण' ग्रथवा 'गोवंशार्षभेगा' ग्रीर जगद्गुह श्रीआदि-शंकराचार्य भी केवल 'सेचन समर्थ: गोवंश पुंगवः तदीयमांसम्' लिखते जिससे यह स्पष्ट हो जाता कि यहाँ गोवंशके गर्भाधानमें समर्थ श्रेष्ठ साँडका मांस ग्रीभन्नते है।

गर्भाघानमें समर्थं श्रेष्ठ साँड़ बहुत उच्च कोटिके ग्रौर गिने-चुने होते हैं। उनका वघ करना ग्रभोष्ट नहीं हो सकता। इसके ग्रितिरक्त मूल किण्डकाके शब्द हैं 'ग्रोक्षेण वा ग्राषंभेण वा' अर्थात् 'या तो उक्षाका ग्रथवा ऋषभका'। 'वा वा' याने 'या तो अथवा' विभेदक निपातके साथ 'उक्षा' ग्रौर 'ऋषभ' एकजातीय वस्तु न होकर पृथक्-पृथक् होगी। ग्रतएव यह कदापि संभव नहीं कि जगद्गुरु श्रीग्रादि-शंकराचार्य सरीखे उद्भट विद्वान् 'वा वां — 'या तो म्यथवा' विभेदक निपातके साथ 'उक्षा' ग्रौर 'ऋषभ' दोनोंका ही ग्रथं गर्भाघानमें समर्थं गोवंशका साँड़ मानें; निश्चय ही उनकी टीकाके 'उक्षा सेचनसमर्थः पुंगव' का ग्रर्थ 'गर्भाघानमें समर्थ एक प्रकारकी ग्रीषि — सोमरसं होगा ग्रौर 'ऋषभः ततः ग्रिप ग्रिषक वयाः' का ग्रर्थ 'उक्षा याने सोमरसं भी ग्रिषक पौरुषवान् ऋषभ नामक ग्रष्टवर्गकी ग्रोषि



## क्या राजा रन्तिदेवके यहाँ गोवध होता था ?

( 'चर्मं 'चर्ता नदी कहलानेके संभाव्य कारण' के पृष्ठ ६२ पर पंक्ति १६ ग्रीर १७ के बीचमें पढ़ा जाय )

श्रीसुधीरकुमार गुप्तने महाकवि कालीदासके 'मेघदूत' का शाब्दिक हिन्दी अनुवाद ग्रौर टिप्पग्गी लिखी है जिसमें मल्लीनाथकी टीकाका भी समावेश किया है। पूर्वमेघके राजा रन्तिदेवकी कीर्ति सम्बन्धी ४६वें इलोककी टिप्पणीमें वे लिखते हैं—

> ''ताण्डच महाबाह्मण १६.१३.१ में 'गोसवः क्रतुः' का अर्थ— 'श्रश्रेष गोसवः स्वाराज्यो यज्ञः' किया है। 'रिन्तदेव' का अर्थ— 'रिन्तः रसणं देवानां यस्मिन् सः'—जिसमें विद्वान रुचि लेते हैं; श्रर्थात् विद्वानों को सुखदायक श्रीर उनसे श्राटत पुरुष। 'रिन्त' पद यजुर्वेद २२.१६ में इसी श्रर्थमें श्राया है (देखिये शतपथ ब्राह्मण १३.१.६.२)। इस प्रकार देवपूज्य महाराज रिन्तदेवकी स्वराज्य-रक्षा ही 'सुरिभतनयालम्भ' यज्ञ है। इसकी कीर्तिको परिचायिका चर्मण्वती नदी है। उसीके किनारे इन महाराजने अपनी दान-वीरता, विद्वत्र्रिम, वीरकर्म, प्रजापालन श्रादिका परिचय दिया था। 'चर्मण्वती' पद 'चर्मन् + वत् + ई' से बनता है। चर्मका अर्थ है— 'चरित गच्छित येन तत् चर्म' (देखिये उणादि कोष ४।११५, ऋषि दयानन्दको टीका, श्रजमेर १६८६ सं० वि०)—जिससे जाता है— कीर्तिको प्राप्त होता है वह चर्म है।' श्रतः रिन्तदेवकी कीर्तिका परिचय देनेके कारणा यह चर्मण्वती कहलाती है।

> इसका एक ग्रन्य ग्रथं भी हो सकता है। तैत्तिरीय ब्राह्मण ३.६.७.५ (प्राणा वै सुरभयः) में 'सुरभयः' का ग्रथं 'प्राणाः' किया है। ग्रतः — सुरभितनयाः (बीरपुरुषा, योधाः इति यावत्) तेषाम् ध्रालम्भः (प्राप्तिः, स्वीकारः, ग्रहणम् ) तस्मात् जाता'। 'जो

२२८

## परिशिष्ट

वीरपुरुषोंकी महती सेना रखता है', अथवा 'जो महान् योधाग्रोंका विजेता है।' इस अर्थमें महाराज रन्तिदेवके अद्भुत विक्रमका परिचय मिलता है, जो सर्वथा असम्भव नहीं।

श्रीसाघरामने एक ग्रन्य सुभाव दिया है। 'सुरिभ' (पृथिवी) 'तनया' (पुत्री)— खेती, उसका ग्रालम्भ—यज्ञ। हर ऋतुमें होनेवाली खेतीकी समुचित रक्षा ग्रादि करके 'पृथिवीकी कृषि संस्कृति ही गोमेध यज्ञ है। यह सुभाव भी ग्रच्छा है। सम्भव है कि महाराज रन्तिदेवने ग्रपने यज्ञमय राज्यशासन कालमें चम्बल नदीके प्रदेशको परम उर्वरा ग्रीर शस्यश्यामला वना दिया हो।"

## शुद्धि-पत्र

वृद्ध	पंक्ति	त्रशुद्ध	गुद्ध
Y0	38	उत्तराखण्ड	उत्तरखण्ड
प्र	१२	स्तैनं सवने	स्तैनंऽसवने
प्रश	१३	नाशक इति	नाशकं इति
६७	१६	क ही	एक ही
७४	३	खोरु	खीर
K3	चौथी ग्राइटम	१.२४,४.६	१.२४.५,६
885	ग्रन्तिम	समपर्ग	समर्पंग
११३	58	Vashishtha VI.6	Vasishtha IV.6
११३	२६	वशिष्ठधर्मसूत्र	वसिष्ठधर्मसूत्र
११६	१७	'वेदोंमें मधुपर्क ?'	'वेदोंमें मधुपर्क'
880	88	षास	पास
885	नीचेसे ६	ग्रत;	श्रतः
१४३	9	there	therefore
१६२	३	हन्तुमहंति	हन्तुमह्ति
१६२	8	बालभेत्तु	वाऽऽलभेत् तु
१६२	प्रम. भ	ा. शान्ति पर्वे ग्र०२६३	म-भा. शां. २६२.४७
१६२	नीचेसे दूसरी	85	83
१६३	१०	यजुर्वेद ३३.४८	यजुर्वेद २३.४८
१६३	नीचेसे छठी	ग्रघ्नये	म्र <b>घ्टन्येयं</b>
१६४	5	सूयक्साद्	सूयवसाद्
१६४	नीचेसे ५	यच्छन्त्वमृताः	यच्छन्त्वाभृताः
१६६	नीचेसे ७	सत्वानि	सत्त्वानि
१६६	नीचेसे ६	स्वेदजन्युद्भिजानि	स्वेदजान्युद्भिदानि
१६७	Ę	सवथा	सर्वथा
338	१३	१.१४.४३;	११५.४३;
१७१	नोचेसे ४	वध्यते	वध्येत
१७३	शीर्षक दूसरी पंक्ति	गौका	वशा गौका
१७६	१३	सुपर्ण	सुपर्ण
१८४	१८	hasta-grabhan	hasta-grabhah
१८६	8	ऋषत्यवत्ति	ऋषत्यवति
२०७	नीचेसे ४	Same Sastry	Sama Sastry

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ED-SITE

OU DEED

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust. CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust. CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE मुरा मत्स्या मधु मांसमासवं कृसरौदनम् । धूर्तैः प्रवर्तितं ह्येतन्नैतद् वेदेषु कल्पितम् ।। (महाभारत शान्तिपर्व २६५.६)

सुरा, ग्रासव, मधु-मदिरा, भांस ग्रीर मछली तथा तिल ग्रीर चावलकी खिचड़ी—इन सब वस्तुग्रोंको धूर्तीने यज्ञमें प्रचलित कर दिया है। वेदोंमें इनके उपयोगका विधान नहीं है। मुरा मत्स्या मधु मांसमासवं कृसरौदनम् । धूर्तैः प्रवर्तितं ह्योतन्नैतद् वेदेषु कल्पितम् ।। (महाभारत शान्तिपर्व २६५.६)

सुरा, ग्रासव, मधु-मदिरा, मांस ग्रीर मछली तथा तिल ग्रीर चांवलकी खिचड़ी—इन सब वस्तुग्रोंको धूर्तोंने यज्ञमें प्रचलित कर दिया है। वेदोंमें इनके उपयोगका विधान नहीं है।